Durga Sah Municipal Library
NAINI TAL
दुर्गासाह म्युनिसिपल पुस्तकालय
नैनीताल
Class No 891.7
Book No C42K
Reg No 5030

खुर्पा बहादुर

(एक रोमांचकारी उपन्यास)

मिर्ज़ा अज़ीमबेग चग़ताई

प्रभात प्रकाशन

दिल्ली ★ मथुरा

प्रकाशक :

प्रभात प्रकाशन

२०५, चावड़ी बाजार

दिल्ली

**

रूपान्तरकार :

बल्देवकृष्ण, एम० ए०

**

सर्वाधिकार सुरक्षित

**

प्रथम संस्करण

१९६०

**

मुद्रक :

बम्बई भूषण प्रेस

मथुरा

**

मूल्य :

तीन रुपया

लंकरान था एक ऐसा टापू जिसे १ अप्रेल १९५७ को बड़ी कोशिशों के बाद बनवाया गया। उस समय जबकि दिल्ली के जहाँपनाह खान अमराय को आजादी के पहले विद्रोह के कारण अपने खानदान और बाईस हजार दो सौ तीस आदमियों सहित हिन्दुस्तान से कूच करनी पड़ी। पहले जहाँपनाह के आदमियों और खानदानियों का दल कैस्पियन सागर की बे जमीन गहराइयों पर उतरा जिसने आस-पास के पहाड़, टीले, दरख्त और बे-पानी जमीन को चीर-काट और उखाड़कर पानी में थमा दिया और समुद्र में एक सौ बयालीस मील लम्बा और एक सौ पचास मील चौड़ा—सरसब्ज जमीन, ठण्डा सूरज और गरम चाँद वाला टापू बना दिया। और इस टापू को लंकरान का नाम देकर शाही खानदान ने अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया।

इस लंकरान का मुख्य नगर ऐसा था कि उसके सामने ताजरानी आगरा भी शरमाए। लेकिन सन् छियालीस में वहाँ के तत्कालीन आलीशाह का मन ऊब उठा और उसने जंकट कम्पनी को ठेका देकर टापू को वहा से उठवा कर बम्बई के समीप हिन्दमहासागर में ला जमवाया और जो अब तक जमा हुआ है। इसके पांव शक्तिशाली हैं कि अँग्रेज भी डरता है। सभ्यता में है इतना आगे बढ़ा हुआ कि यूनान और मिश्र की तड़ज़ीब रानी ने घूंघट ले लिया, रूस ने मुँह नीचा कर लिया और पाकिस्तान की जिन्दादिली खत्म हो गई। मकान, दुकान गली, कूचे, होटल—सब-के-सब ऐसे कि आप यदि वहाँ पहुँच जाँय तो भूल जाँय...लंकरान में घूम रहे हैं। हिन्दुस्तान का स्वर्ग आपको नहीं मिलेगा। इसी लंकरानी जलाल का मजा नवाब खुर्रा ने जिल्लतें सह-सह कर लिया और आप लोग पैसे ही...।

और इस नवाब खुर्पा ने लंकरान के शाही महल की तहों में फिरंगियों की चमकदार, हसीन और लजीज़ नौजवान लड़कियों के करिश्मे...मुहब्बत और रोमांस की गहरी दस्तानें देखीं और सुनीं...।

फिर कफतरा के शीशमहलों की ओट में बने ख्वाबगाहों के रंग-पोशों पर एक ओर नेकदिल शहजादियों की इज्जत और अस्मत की क़ुर्बानी और दूसरी ओर रंगीन यौवन और सौन्दर्य के सरोवरों में डुबकियाँ लगाती हुई तीन-तीन बेगमों के झुलसते हुए जशन...सब-की-सब हवस की शिकार...साले और बहनोइयों के खतरनाक हमले-बदले, हवस की बर्बरता के अनोखे नमूने, जो आने वाले इन्सानों को देंगे सबक...। लंकरानी जहाँपनाह की महरबानी का गुलाम नवाब खुर्पा... उसकी रंग-रलियों का साज दिलरस बानो...शराब और जवानी का प्याला मलका रंगीनमहल...हलाहल जहर से भरी मलका जमानी...यह सब...खुर्पा या जीलेट का तेज ब्लेड...।

एक व्यक्ति ने कहा—"हुजूर यही है। मैं साइकिल पर जा रहा था तो इसने मेरे मुँह से सिगरेट उचक लिया। फिर कील पर खड़ा हो गया और टोपी लेकर चपत मार के जो भागा तो आज देखने में आया है।"

दूसरा बोला—"सरकार, मैं स्टेशन वाली सड़क पर बैठा बर्फ तोल रहा था। रोकड़ के पैसों पर झपट्टा मारकर भागा तो इसकी धूलि तक मुझे न मिली।"

तीसरे ने कहा—"बड़ा बदमाश है, साहब। मेरे हाथ से एक रुपया और एक लौकी छीन ले गया।"

एक लाला हाथ जोड़े बोले—"सरकार, मैं जङ्गल गया था। सामने लोटा रखा था। लेकर चलता बना।"

एक अन्य साहब बोले—"हमारी बटेरों का पिंजरा ले भागा। ढाई रुपये की बटेरें थीं। बड़ी मुश्किल से चार आने देकर पिंजरा दो रोज के पश्चात् वापिस लिया।"

एक बड़े मियाँ बोले—"देखो तो बदमाश को, मेरी बटेर देखने को हाथ में ली कि ले भागा। हुजूर पचास रुपये का 'लड़ाका' बटेर था, दर्जनों पाली देखे हुए।"

एक और बोले—"मेरी पसली पर इसने, हुजूर,

वह घूसा दिया कि मेरा अन्दर का साँस अन्दर और बाहर का बाहर रह गया। हिला तक न गया। और यह गठड़ी लेकर चम्पत हो गया।"

एक दूसरे बोले—"हजूर, मुझे चबूतरे से धकेल दिया। मेरा कुल्हा उतर गया। लंगड़ाता उठा तो क्या देखता हूँ कि अँगोछा ही लापता। थोड़ी दूर जाकर अँगोछा तो मिल गया मगर चाँदी की पानों की डिब्बी और रुपयों का बटुआ नहीं मिला।"

"या इलाही! यह शिकायतों का दफ्तर! बुरे फँसे।" इधर मैंने दिल में कहा और उधर कोतवाल साहब ने पुकारा—"जमाल खाँ!"

"जी हुजूर," कह कर जमालखाँ आए। बखदाजड़ी के बादशाह जैसी सूरत, दाढ़ी चढ़ाए, कुल्ला पर कुल्ला, गठा हुआ शरीर, सीना आगे को उभरा हुआ।

"जरा एक नम्बर" कोतवाल साहब ने कहा। "बहुत अच्छा" कहकर जमालखाँ मेरी तरफ आए। मैं सोच ही रहा था कि यह 'एक नम्बर' क्या बला है कि मुझे उसका पता हो गया। उसने पूरी शक्ति से अपने हाथ का 'रहपट' दे मारा मेरे बाएँ गाल पर कि मुझ जैसा हट्टा-कट्टा उन्नीस बरसा जवान चक्कर खा गया। दिन में तारे दीख पड़े। संभलने भी न पाया था कि एक और...एक और ...एक और। चार-छः झपाटों में ही दुम्बा बन गया। हाथों में हथकड़ियाँ तो पहले ही पड़ी थीं। इन थपेड़ों के पश्चात् ही, खुदा झूँठ न बुलवाए, अपने पैर से डेढ़ पाव का जूता इस सफाई से निकाल कर मेरी चंदिया पर दिया कि नजर ने काम न किया। कब पाँव में था, कब पाँव से निकला और कब हाथ में पहुँचा, और कब सिर पर पड़ा भप्प से! सिर ऐसा घूमा कि आँखों में बिजली कौंध गई। फिर जो तड़ातड़.....नहीं धड़ाधड़ होना प्रारम्भ हुआ। ओह.....! खुदा की पनाह, थोड़ी देर तक ही

तो मुझे चोट का अनुभव रहा। फिर तो बेहोश ही हो गया।

जब होश में आया तो देखा कि नकसीर का खून बह रहा है। कोतवाल साहब ने हुकुम दिया 'टकटकी पर कस दो।' यमपुरी का नजारा एक ओर और टकटकी की मुसीबत एक ओर। फिर मजा यह कि आवाज निकली तो जमालखाँ का जूता तैयार। तात्पर्य यह कि अत्यधिक कठिनाइयों के कारण जिन्दगी दूभर प्रतीत होने लगी। दो दिन तक मुझे वह सजाएँ दी गईं कि खुदा ही बचाए। तीसरे दिन कोतवाल साहब ने कहा—"कहिए हजरत! क्या हाल है?" मैं उत्तर में हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ा रहा था।

कोतवाल साहब ने मुझे टकटकी पर से उतरवा दिया, कहने लगे, "देखा तुमने मैं कैसा आदमी हूँ। याद रखना, खाल खेंच कर भूसा भरवा दूँगा। खैर इसी में है कि लंकरान की हद छोड़ कर भाग जाओ। इधर कभी रुख भी न करना। मैं बदमाशों को अपने क्षेत्र में रहने नहीं दूँगा। मैं जेल में भिजवा कर दुनियाँ की तरह तुम्हें मोटा थोड़े ही करूँगा। ऐसी सजाएँ दूँगा कि जिन्दगी भर याद रखोगे। निकलो यहाँ से.....भागो.....भागो!"

इधर मैंने यहाँ से विदा पाई और उधर लंगड़ाता, गिरता-पड़ता कोतवाली से भागा।

संसार मेरे लिए एक इतिहास था। वह तो कहिए कि मैंने अपनी खुशी से उचक्केपन का जीवन अपना लिया था और इस प्रकार से वह मनोरंजक बना रहा। जरा ध्यान तो दीजिए कि संसार में मेरा कोई न था। और अगर मैं आपको अपनी वंशावली दिखाऊँ तो स्वयं सम्राट लंकरान तीसरी अथवा चौथी पीढ़ी में अपने ही थे। रईस का बेटा नहीं तो लगभग पोता तो था ही। पढ़ना मैं नहीं जानता, लिखना मैं नहीं जानता, बताइए क्या करूँ? क्या मजदूरी करूँ? मजदूरी में चार-छः आने से अधिक नहीं मिलेंगे। मैं सोचता हुआ कोतवाली से दूर पहुंचा। पहले तो यह सोच रहा था कि छूटते ही

लंकरान से भाग जाऊँगा। मगर अब ख्याल आया—कौन देखता है, दो-चार दिन छिपा रहूँगा। फतूरखाँ के जुएखाने में पड़ा रहूँगा। कुछ दिन बाद फिर वहाँ से कोई ढंग अच्छाई का निकल आएगा।

किस्मत तो देखिए फतूरखाँ के यहाँ पुलिस ने छापा मारा और यार पकड़े गए। फिर वही गत बनी। तीन दिन कठिन मार-पीट और हवालात की हवा खाने के पश्चात् छूटा। अब मैं सचमुच लंकरान से भाग गया। दस दिन पश्चात् ही चुपके से फिर लौट आया क्योंकि लंकरान के बाहर दिल नहीं लगता था। महीना भर मजे से बीता। फिर इसके पश्चात् बहुत सफाई के साथ चोरियाँ और ठगियाँ प्रारम्भ कीं। फिर दोस्त-मित्र भी बनाए, आपकी कसम, क्योंकि उनके बिना यह मनहूस जिन्दगी दूभर है। रात को भी मैं अपना काम जारी रखता। अमरूदों और नारंगियों के बगीचों को खसोटता। कभी-कभी अकेले-दुकेले किसी को चपत भी लगा देता। कभी किसी को चकमा देता। एक बार हैड कांस्टेबल मिला। उससे मैंने कह दिया कि नारंगियाँ और अमरूद बेचा करता हूँ। घूंसा दिखा कर वह कहने लगा, "तुम्हारी चमड़ी उधेड़ दी जावेगी।"

मैंने तेज होकर कहा, "तुम्हारी खाल खींचदी जावेगी।" यह सुनकर वह सिर हिलाता हुआ चल दिया, वरना एक बार तो ठोकता उसे, फिर देखा जाता।

फिर आए मेरी शिकायतों के दिन। कई बार पकड़ा गया, कोतवाली गया और मारा-पीटा भी गया। कुछ समय पश्चात यह नित्य-कर्म हो गया। अब कोतवाली का भी डर न रहा। मार खा-खा कर हड्डियाँ भी सख्त हो गईं। अब कोतवाल की भी आदत हो गई। अगर कोई झूँठ-मूठ ही शिकायत कर दे तो पचास जूते लगवा देते और छोड़ देते। पर बात यह है कि वह कुछ तंग आकर थक से गए थे। अब मैंने एक बाग में दो आने रोज पर लोगों को दिखाने के लिए

नौकरी भी कर ली। दिन भर सोता और रात को इधर-उधर के बागों को खसोटता, राहगीरों को ठोंकता, खोंमचे वाले को लूटता। गरज यह कि जीवन बड़े मजे से कट रहा था।

एक दिन की बात है। मेरा मित्र कमरुद्दीन आया। मुझसे बोला, "चलो यार बादशाह के बगीचे पर छापा मारें।" मैंने कहा, "यार वह कैसे ? जो कहीं पकड़े गए तो ?" इस पर मेरे यार ने सारी योजना बनादी। प्रस्ताव हुआ कि माली तो पड़ा सोता रहता है। दीवार फाँदकर भीतर पहुँच जाएँगे और अन्दर से बाग का दरवाजा खोलकर निकल आवेंगे। प्रस्ताव तो अच्छा था, क्योंकि बादशाह के बाग की रखवाली करने वाले भी लम्बी तानकर सोते हैं कि यहां कौन आ सकता है। पर उनको हम यारों का क्या पता ? हम दोनों ने पक्का निश्चय कर लिया।

रात के ठीक बारह बजे हम दोनों पहुँचे, दो कीलें गाढ़ कर बड़ी सफाई के साथ बाग की दीवार पार की। अन्दर पहुँच कर जो एक दरवाजा था उसकी कुंडी खोल दी ताकि आवश्यकता पड़े तो भाग जावें। मैंने कमरुद्दीन से कहा, "यार मेरे ! कुछ बादशाही का मजा भी लेने देगा कि नहीं। आओ सैर करें कुछ बाग की।" उसने उंगली उठाकर सामने की ओर इशारा किया। और इसके उत्तर में मैंने कहा, "कुछ हो, बन्दाखाँ तो घूमेंगे।" यह बात अभी हो ही रही थी कि एकदम बाईं ओर से किसी के जाने की आहट हुई। आहट कुछ तेज होती गई, अब कोमल पदचापों की आवाज आई। तीन औरतें थीं। मेरा तो जैसे दम ही निकल गया और हम दोनों एक दम से सिमट कर रह गए मगर औरतों ने भी शायद हमें देख लिया था। यकायक बिजली की तेज रोशनी में बराबर वाली औरत का मुँह दिखाई पड़ा। बस, एक बिजली-सी कौंध गई सारे शरीर में।

"कौन" धीरे-से कह कर पाकेट-लैम्प बुझाकर वह मेरी ओर बढ़ी। "कौन" उसने चुपके से कहा। हमने विवश होकर कहा।

"हम"। "हम कौन" ? धीरे-से किन्तु वह स्वर को तीव्र करती हुई बोली। "अरे हम कौन, बाग के रखवाले या माली" "हम रखवाले"।

"अच्छा देखो" उसने चुपके से कहा! "किसी से कहना नहीं कि यहाँ किसी को देखा था.....यह लो" कहकर उसने एक रुपया मुझे दे दिया, और एक कमरुद्दीन को। मैंने सलाम किया। उसने कहा "चुप"। और वह चली गई। मैं क्या बतलाऊँ कि मैं क्या सोच रहा था। एकदम से लपक कर मैंने उसे पकड़ लिया क्योंकि वह एक नौजवान लड़की थी। मैंने कहा "यह कौन है ?"

"तू कौन ?" उसने बिगड़ कर कहा।

मैंने जरा जोर से कहा "हम बाग के रखवाले।"

"अरे चुप" उसने कहा। "कम्बख्त, तेरी मौत क्यों आई हुई है। जानते नहीं.....कौन है.....छोटी शहजादी साहिबा हैं। कम्बख्त, भाग यहाँ से।" यह कहकर वह तेजी से निकल गई। मैं खड़ा का खड़ा रह गया। तभी कमरुद्दीन ने मुझे बुलाया "अरे क्या कर रहा है ?" मैंने कहा "आओ न, देखें यह शहजादी साहिबा... कहां को जाती हैं। यह किले से रात को कैसे खिसक आईं। अजीब बात है, यार यह क्या मामला है ?...जरूर दाल में कुछ काला है।"

"यहाँ पर सब बदमाश हैं...आवारा। किसी यार से मिलने जाती होगी।" कमरुद्दीन ने कहा। "अबे जल्दी कर। मैंने उसके यार का सिर न फोड़ दिया तो मेरा जुम्मा, चल देखें न क्या मामला है... यह छुपके आई है किले से निकलकर, इसमें कुछ भेद है।" मैंने कहा।

"अबे पागल हुआ है" कमरुद्दीन ने कहा। "चलकर अपना काम.....।" "चाहे इधर की दुनियाँ उधर हो जाय, बन्दा खा तो शहजादी से दिल लगा चुके। देखें तो चलकर क्या मामला है।"

कमरुद्दीन ने बहुत मना किया। मगर मैंने न माना। उसको भी घसीटकर बारहदरी के सामने ले गया। यहाँ वे लोग बैठे बातें कर रहे थे।

शहजादी साहिबा

किस मुश्किल से हम बारहदरी की ऊँचाई पर पहुँचे, इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। घूँसा तान कर मैंने कमरुद्दीन से कहा "पहले मुझे देखने दो।" जगह तङ्ग थी। यह भी डर था कि हमें कोई देख न ले। मैं दरवाजे के एक सूराख से देख रहा था। देख रहा था...सामने छोटी शहजादी विराजमान हैं। वेष-भूषा शकल-सूरत सब कुछ से वे शहजादी ही हैं। कोई चौदह साल की उमर होगी। बिल्कुल बिलौर के साँचे में ढला चेहरा बिजली के प्रकाश में चाँद के समान दमक रहा था। कैसी आकर्षक देह और कैसी शाहाना और खुशबूदार चाल-ढाल। इस भोले मुखड़े पर खूबसूरती का ऐसा नशा था कि कोई देखते ही कह दे कि शाहे लंकरान की बेटी है। फिर बात यह कि जवानी के साथ ही चेहरे पर रौनक .....दबदबा और तेज लिखा हुआ-सा प्रतीत हो रहा था। किस अन्दाज से बैठी थी वह.....वर्णन नहीं। मेरी आँखें स्थिर होगईं, लगातार देखती रहीं। कुछ बातें हो रही थीं। अब मैंने उस तरफ कान लगाए।

"...कितना चाहते हैं?"

बाग के अधिकारी की बेटी ने कहा। "इतना चाहते हैं कि मुझे जान से अधिक प्यारा समझते हैं...

.....कहते हैं.....और खुल्लमखुल्ला कहते हैं कि नाज़श के बिना संसार अंधेरे में है। और मेरा भी यही विचार है कि मुझे जो जहाँ-पनाह से स्नेह है वह दुनियां में किसी से न होगा। इनके बिना संसार में अंधेरा है। जवान होने को आई मगर उनके लिए अभी बच्ची ही हूँ।" "फिर आपने इन चुगलखोरों के सामने क्या कह दिया जो उन्होंने जाकर लजा दिया ?" बाग के अधिकारी की लड़की ने कहा।

"मैंने कह दिया कि ऐसा प्रतीत होता है जैसे स्वयं जहांपनाह ने ही इसे कुछ सिखा कर मेरे पास भेजा हो.....मेरे दिल की बात जानने के लिए। वह यही कह रही थी कि मेरी शादी स्वयं जहांपनाह ने आबादान के सरदारों से ठहराई है। कई बार जब उसने मुझसे कहा तो मैंने भी कह दिया 'मैं इन गंवारों से शादी नहीं करूँगी। मैं तो उमर भर जहांपनाह के कदमों में रहूंगी।'

"बस, फिर कुछ नहीं कहा ?" बाग के अधिकारी की बेटी ने कहा।

"कहा क्यों नहीं।" शहजादी अपने सुन्दर चेहरे पर गर्व का आभास लेकर बोली।

"कहा क्यों नहीं। खूब कहा। उसने मुझे फिर इस कदर छेड़ा तो मैंने खरी-खरी सुनाई। उसने कहा कि तैयारियाँ हो रही हैं। आबादान में मेरे लिए महल बन रहा है। इस पर मैंने बिगड़ कर डाँटा कि उसने अब की बार उन गँवारों का नाम लिया तो मुँह तोड़ दूंगी।" शहजादी कहती रही।

"बस यही बात है ?" सदरे-बाग की बेटी ने कहा। "यही बात है ? उसने नमक-मिर्च लगाकर कहा होगा। तभी तो जहाँपनाह बल खाते हुए बाग से गए। और फिर कुछ हजूर से बातें हुई..... ? आपका क्या कहना है.....?"

शहजादी का सुन्दर मुखड़ा प्रकाश में अचानक तमतमा उठा।

कुछ गुस्से में कहने लगीं। "आज वह बातें हुईं जो लंकरान के शाही खानदान में बाप-बेटी में कभी न हुई हों।"

"वह यह कि मुझे जहाँपनाह ने बुलाया। उनके सामने जाकर मैं भी तो बच्चा हो जाती हूँ। मैंने पीछे से जाकर जहाँपनाह की आँखें भींच लीं। इस गुस्ताखी की मुझे ही अनुमति है। इसलिए बड़े प्यार से हँस कर बोले "नाजू-नाजू.....बादशाह की बेटी..... नाजू।" यह कह कर मुझे घसीट कर आगे किया। मेरी उँगलियों में अपनी उँगलियां फँसा कर कहने लगे,"मैंने सुना है कि तू आबादान के सरदारों को गँवार कहती है। बुरी बात.....। वहाँ बड़े-से-बड़े आदमी हुए हैं...उस खानदान में। वे लोग तो बड़े इज्जतदार हैं।"

"मैं एकदम सोच में पड़ गई। मेरा दिल धक-धक करने लगा। शर्म के मारे मुझे पसीना आगया कि वे फिर बोले—

"आबादान के सरदार गँवार हैं.....क्या गँवार हैं?"

"मैं मन-ही-मन सोच रही थी कि अगर मैंने अब कह दिया कि गँवार नहीं हैं तो कहीं यह मतलब न निकाल लें कि मैं अपनी शादी पर राजी हूँ। और फिर इस हालत में इस बात का भी ख्याल कि कहीं जहांपनाह की गुस्ताखी न हो जावे। फिर शर्म। इस कारण मैं कुछ न बोल सकी।

"बोलती क्यों नहीं, क्या आबादान के सरदार गँवार हैं? .....क्या गँवार हैं?.....बोलती क्यों नहीं?

"मैंने गर्दन नीची करके दबी जबान में कहा "मुझे क्या मालूम।

"फिर तूने गँवार कैसे कहा जरा तेज होकर बोले वे।

"तेजी को मैं भी पसन्द नहीं करती। खुद तो इन्होंने मुझे यह सिखलाया है। मैंने जलकर कहा गँवार तो हैं ही।"

"हैं?" घबराकर बोले। जिनकी मैं इज्जत करता हूँ।

जिन लोगों से मैं मुहब्बत करता हूँ, उनको तू गँवार कहती है। उनकी आंखें एकदम क्रोध से लाल हो गई।

"मैं भला डरने वाली थी ? मैंने भी कहा, जहाँपनाह, जिसकी इज्जत आप करें उसकी इज्जत सबसे पहले मैं करती हूँ। जिससे आप मुहब्बत करते हैं उससे मुझे मुहब्बत है।

"फिर गँवार कैसे कहा ?" कड़क कर बोले।

"गँवार तो हैं ही" मैंने सादगी और लापरवाही से कहा।

"तुझे कैसे मालूम कि वे गँवार हैं ? तुझसे किसने कहा ? तू क्या जाने कि गँवार क्या होता है ? क्या तू ने कहीं गँवार देखा है ?" मुझसे तेज होकर पूछा।

मैंने कहा, "जहाँपनाह, मैंने गँवार बहुत देखे हैं और फिर जो गांव में रहे वह गँवार। आबादान फिर भी गांव है। और वहां के रहने वाले हुए गँवार।"

"चल, दूर हो सामने से, दूर हो.....दूर।"

मैं बड़बड़ाती चली आई। तब से यह नियम हो गया है। रोज चुगलखोरों से पुछवाते हैं। आबादान वाले कौन हैं ? मैं रोज उत्तर देती हूं कि गँवार हैं। अगर एक दिन भी ऐसा न कहूँ तो यही अनुमान लगाया जावेगा कि मैं शादी के लिए तैयार हूँ। जब कि मैं नहीं हूँ। यही नित्य कर्म है कि मालूम करवाते हैं.....मुझ से। न मुझे बुलाते हैं और न अपने पास आने देते हैं। मैं भी जिद्दिन हूँ। मैंने भी सोच लिया है कि अपनी जिद्द पर अड़ी रहूँगी। फिर देखा जावेगा। मगर अब नया गुल खिला है। इसलिए तुम्हारे पास आई हूँ।"

"वह क्या ?"

"वह यह कि मुझे कल बुलाया। खूब बातें हुई। डपट कर मुझ से कहा "आबादान वाले कौन हैं ?"

"गँवार, जहाँपनाह।" मैंने साफ-साफ कह दिया..... "गँवार।"

"गँवार ?"

"गँवार ।"

"तेरी हस्ती ।" बिगड़ कर कहा—"तेरी हस्ती मिटा दूंगा । जानती हो मैं कौन हूँ ?"

"जानती हूँ" मैंने प्रार्थना के स्वर में कहा ।

"कौन हूँ ?"

"शहनशाहे लंकरान...लंकरान के स्वामी ।"

"फिर...फिर तू..."

"मैं शहनशाह लंकरान की बेटी ।"

"मैं कौन हूँ ?" बिगड़ कर जोर से कहा ।

"जानती है मैं तेरा क्या कर सकता हूँ ?" फिर बोले ।

"नाजू की जान तक लंकरान के स्वामी के हाथ में है.....ले सकते हैं आप ।"

"कुछ और भी कर सकता हूँ ?"

"सबकुछ कर सकते हैं ।"

"आबादान वाले कौन हैं ?" अब कुछ खुश से होकर पूछने लगे ।

"गँवार" मैंने सूखे मुंह से उत्तर दिया ।

"अरे !" बिगड़ कर और कड़क कर कहा, "फिर वही जिद् ।"

"तूने गँवार देखे हैं ?"

"देखे हैं ।" मैंने कहा ।

"नहीं देखे" जोर देकर बोले ।

"देखे हैं ।" मैंने फिर कहा ।

"मैं तुझे गँवार दिखाऊँगा, चल दूर हट ।"

"उसके पश्चात् से निस्तब्धता है । और बताओ बहिन, बाग में क्या रङ्ग रहा ? तुम तो उधर गई थीं...कुछ खबर सुनाऊँ ।" वह बोली, "शहजादी साहिबा ! बस खबर इसके सिवाय कुछ नहीं कि स्वयं जहांपनाह ने कोतवाल साहब को बुलाया । महामंत्री आए और

उनके साथ गुप्त रूप से कुछ बातें हुई । पिताजी कह रहे थे कि जहाँपनाह अत्यधिक चिन्तित थे। महामंत्री और कोतवाल साहब दोनों काँपते निकले। ख्वाजा से पता चला कि कुछ आपकी ही बातें हो रही थीं। इससे अधिक कुछ पता नहीं चला।"

शहजादी बड़ी ही ऐंठ में वहां से प्रस्थान करने लगी। उधर मैंने अपना सिर सूराख से हटाया। कमरुद्दीन दूसरे सूराख से देख रहा था। हम इस प्रकार से इस नाटक को देखने में व्यस्त थे कि एक-दूसरे की भी सुध नहीं थी। एकदम से हम दोनों चौंक पड़े। मैंने कमरुद्दीन से कहा, "बिना बात ही बादशाह सलामत चिन्तित हैं। छोकरी की शादी मुझसे करदें।" एक टेप मारने का कमरुद्दीन ने प्रयत्न किया और कहा "चलो"। हम दोनों अंधेरे में साए के समान अन्तर्ध्यान होगए। हम दोनों ने दूर से शहजादी को अंधेरे में जाते देखा। जब वह चली गई तो हम अपने काम में जुट गए। बड़ी सफाई के साथ बाग को खसोट डाला। सुबह होते ही अपने ठिकाने पर पहुँच गए।

गिरफ्तारी

स्पष्ट है कि शाही बाग की चोरी से लंकरान में कोई खलबली मची होगी। हमने अपने आढ़तिए को माल दिया और वह मण्डी में पकड़ा गया। शाही बाग का फल छुपना कठिन था। मेवाफरोश भी पकड़े गए—पड़े उनके सिर पर बिना भाव के जूते और गान गए कि फल किससे खरीदे थे।

यहाँ हम दोनों बाग की झोंपड़ी में बेखबर पड़े सो रहे थे। रातभर जागे जो थे। मैं स्वप्न में शहज़ादी को देख रहा था कि मेरी आँखें खुलगई। चारों तरफ बाग में सन्नाटा था। मैं उठकर झोंपड़े से बाहर निकला ही था कि सामने क्या देखता हूँ कि सरकारी सिपाही चले आरहे हैं। मैंने कमरुद्दीन को आवाज दी जोर से। मुझे नहीं मालूम कि उसने सुना या नहीं और मैं भागा बाग की दीवार की ओर। सिपाहियों ने मुझे पकड़ने की कोशिश की और कड़ककर आवाज दी। मगर मैं भला पकड़ने वाला था? तीर के समान जा रहा था कि गोली की आवाज आई। एक सन्न से मेरे सिर पर से निकल गई पर मैं व्याकुल-सा—हतबुद्धि-सा भागता ही रहा—इतना कि सामने के खेत में पहुँचते-पहुँचते उनकी दृष्टि से अन्तर्ध्यान हो गया। छः गोलियाँ अपने खूनी गीत गाती हुई

मेरे कान पर से निकल गईं। मैं भागा और बेतहाशा भागा। मुझे नहीं मालूम था कमरुद्दीन पर कैसी बीती। मैं भागा-भागा मारा-मारा खेतों ही खेतों निकल गया और सीधा गाँवों की ओर चल पड़ा। जब रुका तो दौड़ते-दौड़ते थक चुका था। बिल्कुल हताश था। एक वृक्ष के नीचे बैठ कर साँस ली और सोचना शुरू किया कि अब मुझे क्या करना चाहिए। शहर से मैं पाँच-छः मील के अन्तर पर था। कोतवाल मेरी खाल नोंच लेगा। मैंने दिल में कहा कि जीता न छोड़ेगा। बात यह है कि कोतवाल का भी मैंने नाक में दम कर दिया था। ऐसे कसूर करता था कि जो केवल शरारत ही थे। कोतवाल साहिब ने भी उनकी सजा मार-पीट ही रखी थी। न जाने कितनों को उसने दुम्बा बना दिया था। पर मेरे सामने उसकी एक न चली। मगर अब मुझको भी डर लग रहा था। शाही बाग को खसूटा है। खुदा ही खैर करे।

मैं नहीं कह सकता कि वे दस-पन्द्रह दिन उस विपत्ति में कैसे कटे। गाँव-गाँव मारा-मारा फिरता रहा। हर जगह मजदूरी की... दो-चार को मारा-पीटा भी। लोटे खेतों पर से खिसकाए व इस गाँव के उस गाँव में बेचे। जब एक स्थान पर पकड़ा भी गया तो खूब पिटाई हुई।

जब जरा दिल से डर कम हुआ तो लंकरान की ओर बढ़ा। रात के दस बजे ठिठकता-कँपकपाता उसी झौंपड़े में पहुँचा। बड़े मियाँ हक्के-बक्के रह गए। "अरे तू कहाँ?" फिर कमरुद्दीन का हाल बताया कि मारते-मारते कोतवाल ने उसे अधमरा कर दिया और अब जेल में है और बताया तीन-चार मेवा बेचने वाले भी जेल में हैं। वहाँ मेरी खोज अब भी हो रही है। बड़े मियाँ ने सलाह दी कि भाग जाओ और मेरे भी दिल में आया कि लंकरान में तनिक भी न टिकूँ। मगर आज रात तो यहीं ठहरूँगा, और कल चला जाऊँगा। बड़े-मियाँ ने कहा, "तुम अभी भाग जाओ।" मैंने न करदी तो लगे

बड़बड़ाने कि मुझे भी फँसाएगा। मैंने गुस्से से जो उनका गला दबाया तो उनकी आँखें निकल आईं। फाँसी के मजे आगए। जब छोड़ा तो ठीक थे। ठीक होकर लगे प्रेम से बातें करने और रोने, किन्तु वह बुड्ढा बड़ा घुटा हुआ था। मैंने कह दिया, "अगर तूने मेरी लगाई-बुझाई तो जेल से छूटकर सबसे पहले तुझे ही जहन्नुम रसीद करूँगा। लेकिन यदि सीधे रहे तो तुम से कुछ माँगता नहीं, जो कुछ थोड़ा-बहुत लाकर दूँ उसको अपने माल के साथ बेच आया करना। आधा तुम्हें दूँगा जैसे पहले देता आया हूँ.....।" मैं जानता था कि बड़े मियाँ को अपनी जान बहुत प्यारी है और वह मुझे कभी पुलिस से न पकड़वाएँगे। किन्तु मैंने यह नहीं विचारा कि मेरी सख्ती एक विचित्र समस्या उत्पन्न कर रही है। एक ओर मेरा डर दूसरा यह कि यदि मैं इन्हींके यहाँ पकड़ा गया तो पुलिस इनकी क्या गति बनायेगी। उनका भला इसमें था कि वे मुझे पकड़वा दें।

दूसरे रोज मैं सोच रहा था कि मैं जाऊँ मगर मैं रुक गया। तीसरे दिन भी रुक गया, कुछ आलस्य आ गया। अब इस रात की बात है कि मेरी आंख असाधारण शोर के कारण खुल गई। चारों ओर से सरकारी सिपाहियों ने झौंपड़ी घेर ली। "दगा-फरेब", मैं जोर से चिल्लाया और उस बुड्ढे से बदला लेने पर तुल पड़ा। मैंने उसका गला दबा दिया। सिपाहियों ने मुझे आकर ऊपर से दबा लिया। मगर न तो मुझे मारा और न हथकड़ियाँ ही पहनाईं, वरन् रस्सी से बाँधकर ले चले।

जैसे ही मैं कोतवाली में पहुँचा, कोतवाल साहब मुसकरा कर बोले—"अबे तू चला कहाँ गया था। तुझे जहाँपनाह बुला रहे हैं।" मैंने समझा कि अब मेरी शामत आ गई। खुदा इस निर्दयी से बचाए। हाथ जोड़कर प्रार्थना की "मुझे छोड़ दीजिए अब कभी लंकरान में नहीं आऊँगा। अगर आऊँ तो मार ही डालिएगा।"

कोतवाल साहब ने बड़े गम्भीर स्वर में कहा कि "पहले

जहाँपनाह से तो मिल लो।" यह कहकर मोटर वाले को बुलाया। मोटर आई और वास्तविक रूप से मुझे उसमें बैठाकर सम्राट के महल की ओर ले चले। मैं हैरान हो रहा था। मैंने हाथ जोड़े और कोतवाल साहब से कहा, "खुदा के लिए मुझे छोड़ दो। जहाँपनाह मुझे जरूर मार डालेंगे। मेहरबानी करो। वह मुझे जीवित न छोड़ेंगे।" पर उन्होंने एक न सुनी। मोटर महल में प्रवेश कर चुकी थी। मैं मोटर से उतरा नहीं किन्तु उतारा गया। मेरे पैर भारी थे। कानों में एक सन्नाटा था। कोतवाल को देखते ही दरवाजे पर खड़े सिपाहियों ने खटाक से सलामी दी। मैंने समझा कि अब यह मेरे ऊपर पिल पड़े। मैंने चिल्ला कर कहा "मार डाला।" कोतवाल साहब ने मुझे कसकर डपट दी। "तुझे चलना नहीं, बदमाश।" मैं तेजी से उनके साथ हो लिया। सीढ़ियाँ चढ़ीं, बरामदा आया। कमरे में पहुँचा। महामंत्रीका कमरा था। मेरी जान तो निकल-सी गई। मरता क्या न करता। सिपाही का हाथ झटक कर भागा। मैं जैसे तोड़ाकर भागा, चारों ओर से सिपाही सङ्गीनें लिये हुए आकाश से उतर पड़े या जमीन से उग आए। "हाल्ट" कहके एक सिपाही ने मेरे सीने पर सङ्गीन रख दी। दूसरे ने आँखों के सामने नचाई। या मेरे अल्लाह! इस संसार में कोई सहायक नहीं। एक जरा-से कीट पर यूं हाथ धोकर पीछे पड़ गए हैं। कोतवाल साहब ने एक मुक्के से स्वागत किया और गुस्से में कहा, "बदमाश, क्यों मर रहा है?"

महामन्त्री के सामने मुझे उपस्थित करते हुए कोतवाल साहब ने कहा—

"हुजूर वह यह है।"

"मैंने कुछ नहीं किया है, हुजूर।" यह कहकर मैंने महामन्त्री के पैर पकड़ लिए। कोतवाल साहब ने मुझे सीधा खड़ा करके कहा—"लंकरान में इससे बढ़कर कोई उचक्का न तो है और न कभी होगा।"

"हुजूर, मैंने कुछ नहीं किया। मैं निर्दोष हूँ।... मेरे अपराध क्षमा कर दिये जायँ।" मैंने कहा।

महामन्त्री ने अपनी नाक पर से ऐनक उतार ली और कहा—"चलिए।"

मैंने फिर महामन्त्री के पैर पकड़ लिए और सचमुच रोना शुरू कर दिया। "हुजूर, मुझे मत ले चलिए। हुजूर, मुझे मुआफ कीजिए...हुजूर, मेरे ऊपर दया...रहम कीजिए।" मगर वहाँ तो सारे ही पत्थर-दिल थे। दया के स्थान पर उस जालिम को मुझ पर हँसी आ रही थी।

"अरे मर क्यों रहा है?" यह कहकर कोतवाल साहब ने मुझे ठोकर दी। झटका देकर खड़ा किया। धक्का देकर आगे बढ़ाया। "चलता भी है कि...।"

मैंने देखा कोतवाल साहब की खूनी आँखों से आग निकल रही है।

जैसे ही मैं सुलतान के शिविर के निकट पहुँचता जा रहा था वैसे ही मेरा तन-बदन ठण्डा होता जा रहा था । जवानी की मृत्यु भयानक रूप में सामने आ रही थी । हर वृक्ष के साथ मैं स्वयं अपने शव को लटकता देख रहा था । एक दो कर्मचारियों ने एक नारा लगाया । मैं सुध-बुध भूल गया । महामंत्री और कोतवाल साहब ने मुझे लंकरान के सम्राट के सामने उपस्थित कर दिया ।

रात के ग्यारह बज चुके थे जब मुझे सम्राट के सामने उपस्थित किया गया । मैं घुटनों के बल झुक नहीं गया वरन गिर पड़ा । नाक जमीन पर डरके मारे रगड़ी नहीं अपितु घिस दी । खास दरबार हो रहा था । गिने-चुने दो-चार बड़े अधिकारी बैठे थे । सम्राट एक तख्तपोश पर तकिया लगाए धुँआ निकाल रहे थे । व्याकुलता का ऐसा अंधकार छा चुका था कि मैं सिर तक न उठा सका । मैं कोई दस कदम पर खड़ा था । सम्राट ने कहा, "भाई, तनिक देखें तो, इसका सिर तो ऊँचा उठाओ ।" मेरी गर्दन पकड़ कर कोतवाल साहब ने ऊँची कर दी । मैं सीधा खड़ा हो गया और लगा सलाम पर सलाम करने और गिड़गड़ाने—"मैंने...हुजूर.....मैं...मैं... मैं....." "क्या मैं मैं लगा रखी है, सीधा खड़ा हो" सम्राट ने बड़े रौब में कहा ।

सम्राट ने मुझे सिर से पैर तक देखा—फिर देखा । उनके चेहरे पर मुस्कान थी । उन्होंने महामन्त्री तथा कोतवाल साहब को हँसते हुए कुछ संकेत किया ।

"वाह अल्लाह.....क्या पैनी दृष्टि है आपकी भी । भाई आए तो तुम नम्बरी हो । क्या कहना है इसके विषय में ? कुछ पता तो चले ।"

कोतवाल साहब ने बड़े आदर के साथ सम्राट से कहा, "जहाँपनाह ! यह वही है जिसने शाही बाग पर डाका डाला था ।"

मैंने फिर रोते हुए जमीन पर नाक रख दी और कहा, "हुजूर,

मैंने नहीं डाका डाला.....मुझे तो मालूम तक नहीं।"

"सीधे खड़े होओ" कोतवाल साहब ने कहा। "अच्छा तो वह यह हजरत हैं।" सम्राट ने आश्चर्यजनक भाव में कहा। "जहाँपनाह, मैं नहीं हूँ" मैंने फिर कहा। कोतवाल साहब ने फिर डाट पिलाई और कहा, "इसके अतिरिक्त, जहाँपनाह, इससे बढ़कर कोई पाजी, मौजी, खतरनाक लंकरान में होना सम्भव नहीं।"

"जहाँपनाह! बिल्कुल गलत है।" मैंने रोते हुए कहा।

"अब की बार यदि यह बोले तो इसकी जबान काट लेना... ...चुप रहो, सावधान.....।" सम्राट ने इस प्रकार डाँट कर मुझसे कहा। मैं सहम गया। "चुप खड़े रहो।" कोतवाल साहब ने डाँट कर कहा। मुँह और चढ़ा कर बोले—"यह दरबारे शाही है। अभी-अभी जबान काट ली जावेगी।" आगे कोतवाल साहब कहते रहे ".....तो जहाँपनाह! यह वह व्यक्ति है जिसके उचक्केपन के आगे मेरी कुछ न चली। यह वह व्यक्ति है जो न हुजूर के नाम से डरे और न हुजूर के सेवकों की मार से। जनाब, यह वह व्यक्ति है जिसके उचक्केपन से सारा संसार तङ्ग है और मैं तो मारते-मारते थक ही गया। आदमी क्या है, भूत है। शैतान की सी ताकत है इसमें, लोहे का बना है। चोट इसके लगती ही नहीं। जहाँपनाह, तनिक इस बदमाश के कुकर्मों को तो सुनिए।"

यह कहकर कोतवाल साहब ने मेरी सारी शरारतें और बदमाशियाँ एक-एक करके वर्णन करनी प्रारम्भ करदीं। सम्राट प्रत्येक बदमाशी पर मुस्करा देते और मेरी ओर देख लेते। और कहते "खूब, खूब.....खूब।" कोतवाल साहब ने खूब ही मेरी शिकायतें कीं और अन्त में कहा, "जहाँपनाह, कोई सप्ताह ऐसा नहीं होता जबकि इसकी दर्जनों शिकायतें मेरे पास नहीं आतीं और यह दो-चार बार जूतों से नहीं मारा जाता। कान्स्टेबल अपने जूतों से पीटने

में घबराते हैं। कहते हैं, "कोतवाल साहब, हमारे जूते सेत-मेंत के नहीं।"

इस अन्तिम वाक्य पर जहाँपनाह ठहाका मार कर हँसे और कोतवाल साहब से कहने लगे—"हम तुम से प्रसन्न हैं और तुम्हारी इस सेवा के लिये तुम्हारी तरक्की करेंगे।" और फिर मेरी ओर संकेत करके कहा, "इसे इधर लाओ।" किसी ने कहा, "इसके पैर मैले हैं और चिथड़े लटक रहे हैं।" जहांपनाह ने कहा, "कोई बात नहीं, इसे इधर लाओ।" इतने में कोतवाल साहब ने एकदम से कहा, "एक अर्ज और है, हुजूर।"

"वह क्या" जहांपनाह ने कहा।

"वह यह कि यह उन्नक्का, दारों के वंश से सम्बन्धित है।"

"हैं?" जहाँपनाह ने आश्चर्य से कहा। "यह लंकरान महान के वंश से है! वाह! वाह! क्या कहने हैं इस खुर्पे के।" फिर मुझे सम्बोधित करते हुए कहने लगे, "आओ बेटा।" मैं निकट गया। मेरी तरफ उन्होंने ध्यान से देखा। ठहाका मार कर फिर हंसे। "वाह अल्लाह! क्या खुर्पा है?" बाप का नाम पूछा। फिर दादा का नाम पूछा और फिर एक आदमी की ओर देख कर कहा, "इसे आदमी बनाओ।"

अब तक तो मेरी जबान काट लेने की धमकी थी। मैं चुप खड़ा था। मैं सोच रहा था कि न जाने मुझे क्या दण्ड मिले। मैंने सुन रक्खा था कि सम्राट अनेकों प्रकार के स्वांग बनाकर अपराधियों को दण्ड दिया करते हैं। इस कारण मैंने कहा, "मुझे बोलने की आज्ञा दी जावे।"

"क्या कहता है?" सम्राट ने कहा।

"जहाँपनाह, मैं बिल्कुल बेकसूर हूँ। मैंने.....।"

"मत बको.....ले जाओ इसे.....आदमी बनाओ जल्दी.....बहुत जल्दी।" इमान की कसम! मुझे चार दरबारियों

ने साथ लिया। बगल के दूसरे कमरे में ले गए। "खुदा के वास्ते मुझे छोड़ दो।" मैंने चिल्ला कर और रो-रोकर कहा। "क्या करोगे मेरे साथ?" "दो कानों के बीच तुम्हारा सिर करेंगे" एक बोला। "तुम्हारी पूजा करेंगे" दूसरा बोला। "तुम्हारी गुमयाई बनाएँगे" एक और ने कहा।

"तुम्हारा अचार डालेंगे।"

"तुम्हें आदमी बनाएँगे।"

"अरे, दया करो मेरे ऊपर। खुदा के लिए मुझे छोड़ दो।" मैंने गिड़गिड़ाकर कहा। "मेरे ऊपर रहम करो।" किन्तु वे तो पत्थर-दिल थे। सब हँस रहे थे। इतने में एक नाई आया। मेरे बाल उसने कतरने, प्रारम्भ कर दिए। मैंने कहा, "खुदा के लिए मुझे छोड़ दो। मेरे ऊपर दया करो। मुझे आदमी नहीं बनना। मैं बाल नहीं कटवाऊँगा।"

बहुत कुछ उन्होंने मुझे समझाया। मगर मैं न माना। मेरी शिकायत सम्राट से की गई। वहाँ से एक सोटा लेकर एक सिपाही भेजा गया। उसने बिना कोई प्रश्न किए एक दर्जन डण्डे मेरे बदन पर गिन दिए और सिर पर डण्डा करके खड़ा हो गया। मार बुरी बला है। मैं रोता जाता था और बाल कटवाता जाता था। दाढ़ी मेरी बहुत ही सुगन्धित साबुन से बनाई गई। अब मैं चूँ भी न कर सका। इसके पश्चात् मुझे स्नान कराया गया, बहुत ही सुन्दर कपड़े पहनने को दिए। रेशम के थे—एक अचकन थी, फिर सिर पर बाँधने को एक बनारसी साफा दिया। कपड़े पहनाने वाले ने फिर बड़े आदर से कहा, "चलिए।"

सब लोगों से हाथ जोड़ कर मैंने कहा, "खुदा के लिए मुझे छोड़ दो। मेरा क्या होगा?" एक व्यक्ति ने मेरे कान में कहा, "सम्राट आपको दामाद बनाएँगे।" यह कह वह हँसने लगा। मैंने इस निर्दयी को देख कर कहा, "खुदा के लिए मुझे छोड़ दो।"

मरम्मत

किस्मत तो देखिए। अब मेरी मरम्मत प्रारम्भ हुई। वे व्यक्ति मुझे सम्राट् के पास ले गए। उन्होंने मुझे बैठने को कहा। मैं हाथजोड़ कर बैठ गया। महामन्त्री उठकर मेरे पास आए और उन्होंने हाथ में इतनी अशरफियाँ दीं जितनी देखीं तो क्या मैंने सुनी तक न थीं सारी उमर भर, और चुपके से मेरे कान में कहा, "यह एक सौ एक अशरफियाँ हैं। छोटी शहजादी के साथ अभी तुम्हारी सगाई होगी। तुम दामादी में ले लिए गए हो। इस कारण आदर के साथ खड़े होकर जहाँपनाह के सामने जाकर रूमाल पर अशरफियाँ रख दो और सिर झुका कर उनकी वन्दना करो।"

अब मैं समझा वास्तविक मामला क्या है। मैंने सुना था कि तरह-तरह के स्वाङ्ग बना बनाकर जहाँपनाह दण्ड दिया करते हैं। अपराधी की खूब हँसी उड़ाकर सारे दरबारी भी खुश होते हैं। या अल्लाह! मैं क्या करूँ? मैंने आव देखा न ताव और समझ गया यह महामन्त्री मुझे उल्लू बनाना चाहते हैं। मुझे उल्लू बनाकर बादशाह को प्रसन्न करके इनाम पाना चाहते हैं। मैं भला ऐसा बेवकूफ तो नहीं था। मैंने दिल में सोचा अन्त में मरना है ही। 'बेवकूफ बन कर क्यों मरा जावे। इनकी हँसी का पात्र

बनकर मरना पाप है। मैंने सोचा एक बार फिर प्रार्थना करके देखलूँ। मैंने जहाँपनाह को अशरफियाँ दिखाते हुए कहा—

"जहांपनाह, मुझे अशरफियाँ देकर यह न मालूम क्या-क्या बेहूदा बातें करते हैं।" यह कहकर मैंने अशरफियाँ पटक दीं और सिर झुकाकर बोला, "जहांपनाह, कोतवाल साहब की मुझसे दुश्मनी है। मैं बिल्कुल निर्दोष हूँ।"

सम्राट ने इसके उत्तर में मुझे लेजाने का हाथ से संकेत किया।

तेजी से महामंत्री मुझे दूसरे कमरे में ले गए और डाट कर कहने लगे—

"बदनसीब, तुझे क्या होगया है। तेरी किस्मत जागी है। जल्दी करो, अभी-अभी छोटी शहज़ादी से तुम्हारा संगम होने वाला है।"

पर मैं इन चक्करों में कब आने वाला था। मैंने हाथ जोड़ कर महामंत्री से कहा, "मैं ऐसा बेवकूफ नहीं। मुझे मारना है तो वैसे ही मार डालिए परन्तु मैं निर्दोष हूँ।" "ऐसे नहीं मानेगा" एक मूजी को यह कह कर मेरी ओर भेजा गया। मोटे बेंत के चार मेरी पीठ पर पड़े। तबीयत झक्क होगई।

सीधा अशरफियाँ लेकर मैं जहांपनाह के पास पहुँचा। मगर रो रहा था। सामने नज़र की तो वही मूजी डण्डा लेकर खड़ा है। वह मुझे इशारे से डरा रहा है कि मैं उसे ऐसा कहूँ। खबरदार कर रहा है और धमकी अलग दे रहा है—मारने की। इशारों ही इशारों में कह रहा था 'टुकड़े उड़ा दूँगा'।

लाचार होकर मैं आगे बढ़ा, मगर नजर ऊपर न उठ सकी। हंसकर जहांपनाह ने अशरफियों को स्वीकार किया। मगर मेरी नजर तो उसी की धमकी की तरफ लगी थी। सम्राट ने मेरी ओर देखकर कहा, "क्या है।" मैंने रोकर कहा, "जहांपनाह, मैं बेकसूर हूँ, वह देखो मुझे टुकड़े-टुकड़े करने की धमकी दे रहा है।"

सम्राट ने कोई ध्यान नहीं दिया। मुझे पास बुलाकर मेरी

पीठ ठोंकी । और कहने लगे, "अरे ! वाह रे मेरे खुर्पे.....खुर्पा बहादुर"—हंस कर कहने लगे "जा रे हमने तुझे नवाब खुर्पा बहादुर की उपाधि प्रदान की ।" फिर मेरी पीठ ठोंकी ।

इसके पश्चात् आज्ञा पाकर महामंत्री सम्राट की दाईं ओर खड़े हो गए । और कहने लगे, "जहांपनाह सम्राट लंकराज ने खुर्पा बहादुर को अपनी दासता से मुक्त कर दिया है । और अपनी अत्यन्त प्रिय पुत्री—यहाँ की छोटी शहजादी—के खुर्पा बहादुर के साथ विवाह का निर्णय भी किया है ।"

सब लोग खड़े होगए । शोर में मैं भी खड़ा हो गया । सब ने पुकार कर कहा, "मुबारिक सलामत, मुबारिक सलामत ।" और उधर मैं खतरे को निकट देखकर चिल्लाया । गिड़गड़ा कर कहा, "मुझसे कोतवाल साहब की दुश्मनी है । मैं निर्दोष हूँ ।"... "चुप रहो बदमाश, क्यों बकते जाते हो ?" सम्राट ने मुझे डांटा । और मैं सिकुड़ कर रह गया । एक सन्नाटा-सा छा गया । आँखें निकाल कर जहांपनाह ने कहा, "अब के यदि यह बेहूदगी की तो जिन्दा चिनवा दूँगा ।" फिर महामंत्री को सम्बोधित करते हुए बोले, "मैंने तुम्हें इसे अच्छी तरह से समझाने को कहा था । जरा सी बात है और तुम इसे कर नहीं सके ।" महामंत्री ने सिर नीचा कर लिया और बोले, "हर प्रकार से समझा चुके हैं । कुछ समझ में नहीं आता, अकल काम नहीं करती । क्या करें और क्या न करें ।"

सम्राट ने आज्ञा देते हुए कहा, "एक बड़ा बेंत मंगवाओ और इस बदमाश की खूब मरम्मत करो । इसे आदमी बनाओ ।" तुरन्त एक सुन्दर-सा बेंत आया । उसकी सोने की मूँठ थी । मैं फिर सन्नाटे में रह गया । जो सलाम मुझे तब करनी थी वह अब बड़े आदर के साथ सम्राट को कर दी । मैं बैठ गया ।

इतने में एक सेवक ने प्रार्थना की कि काजी साहब आ गए हैं । जहांपनाह ने इशारा किया कि उपस्थित किए जाएँ । मैं एक मूर्ति-

सा बना हुआ सब कुछ देख रहा था। काजी साहब आए। आकर सम्राट की उन्होंने वन्दना की और बैठ गए।

सम्राट ने काजी साहब से पूछा, "काजी की उपस्थिति में बादशाह अपनी कन्या का विवाह बिना गवाहों के कर सकता है ?" "जहांपनाह ठीक कह रहे हैं।" काजी ने बड़े आदर से कहा। "तो फिर वाह अल्लाह ! मैं अपनी शहजादी नाज़श को नवाब खुर्पा को समर्पित करता हूँ। बरा अल्लाह... ।"

अब मैं इस हँसी का अर्थ समझा। अपनी बुद्धि का तो मैं पूर्णतया ह्रास कर चुका था। पूर्ण रूप से मैं होश में नहीं था कि काजी साहब ने न मालूम मुझ से क्या-क्या पढ़वाया था—"शहजादी नाजश को मैंने कबूल किया। अब मैं उसके साथ जीवन बिताना कबूल करता हूँ।"

अब मैं समझा। कोई बहाना ढूँढ़ना था सो मिल गया। इधर मैं कहूँ कि हाँ मैंने शहजादी को स्वीकार कर लिया और उधर मेरी खाल नोंचली जावे। इस व्याकुल और असहनीय मानसिक स्थिति में मैं चुप ही रहा, काजी साहब का मुँह ताकता रहा। महामंत्री ने मेरे कान के निकट आकर कहा, "कहो कबूल कर लिया।" मैंने मुड़ कर देखा क्योंकि मुझे शंका थी कि जल्लाद नंगी तलवार लेकर खड़ा होगा कि इधर मैं कहूँ 'कबूल किया' और उधर से मेरा काम तमाम कर दिया जावे। मैंने भी अब नई चाल चली। उठकर खड़ा होगया और कहने लगा, "इस सेवक में क्षमता नहीं कि कुछ कर सके..... मैं बिल्कुल निर्दोष हूँ।"

बस यह सुनना था कि सम्राट को आगया गुस्सा। आँखें लाल करके कहने लगे, "ले जाओ इस बदतहजीब को।" झपट कर वह मूजी मुझे लेगया। तीसरे कमरे में ले जाकर दो आदमियों ने मुझे पीटना शुरू किया। उधेड़ कर सूत कर डाला। महामंत्री आगए और कहने लगे, "अरे ! कमबख्त नवाबी की उपाधि पाकर पिट रहा है।"

जहांपनाह की दामादी से इनकार करता है। अभी-अभी जिंदा चिनवा दिया जायगा। चलो जल्दी, और सावधान अगर इंकार किया तो।" जल्दी से मेरे कपड़े और साफा ठीक कर दिया गया जैसे कि मैं पिटा ही नहीं। काजी साहब ने मुझसे फिर वही प्रश्न किया। मेरी जबान बन्द हो गई। कनखियों से मैंने देखा कि चोबदार बेंत हिला रहा है कान में महामंत्री न जाने क्या कह रहे थे और जहांपनाह की आँखों से ज्वाला निकल रही थी।

"शाह लंकरान की दामादी से इंकार करता है?" गरजकर जहांपनाह ने कहा। "कबूल किया" अनायास ही मेरे मुंह से निकल गया। काजी साहब ने कलमा पढ़कर अपना कार्य पूर्ण किया। मैंने चारों ओर देखा कि कहीं तलवार तो नहीं पड़ती। पर 'मुबारिकबाद' 'मुबारिकबाद' से दरबार गूँज उठा। मैंने उठकर जहांपनाह की वन्दना की। महामंत्री ने मेरी जागीर की घोषणा की। इक्यावन हजार रुपये सालाना की जागीर, ढाई हजार रुपये का जेब खर्च। मुझसे फिर कहा कि सलाम करो। मैंने झुककर सलाम किया।

जहांपनाह ने पास बुलाकर पहले के समान मेरी पीठ पर हाथ फेर कर कहा, "सलामी की तोपें छोड़ी जावें।" सारे किले में तोपखानों के शब्दों से धूम मच गई। मैंने दिल में कहा, "काश! यह सब कुछ मजाक न होता।" यह तो सब कुछ निकाह-सा हो रहा है। मैं सोच रहा था कि सम्भवत: मुझे समय मिले और मैं भाग जाऊँ। इतने में जहांपनाह ने ख्वाजा को बुलाया और मुझसे भी कहा। "जाओ!" "कहां ले चले हो मुझे?" मैंने ख्वाजा से पूछा जब दूसरे कमरे से निकल कर हम तीसरे कमरे में गए।

उसने उत्तर में बड़े आदर के साथ कहा, "हुजूर, आपके सामने ही तो जहांपनाह ने आज्ञा दी कि आपको जनाने महल में छोड़ दिया जावे।"

"क्यों?" मैंने पूछा।

ख्वाजा मुस्कराकर बोला, "हुजूर, इसलिए कि वह आपको बेगम साहिबा के पास भेज दें। आपका निकाह पढ़ा जा चुका है न।"

"कौन बेगम साहिबा ?"

"गुस्ताखी माफ ! हुजूर इतनी मार खाई, अभी भी अक्ल न आई। क्या और मार खाने की सलाह है ?"

"अरे यार ख्वाजा ! तुम मुझे छोड़ दो न।"

"क्या करेंगे आप ?"

" मैं इस ओर से होकर फाँद कर निकल जाऊँगा।" मैंने कहा। "ऐसे में तो समय है। सच कहता हूँ मैं निर्दोष हूँ। मुझे ठीक बताओ कि क्या बाद में मुझे छोड़ दोगे ?"

"अब आप चलते हैं कि नहीं ? फिर बुलाऊँ.....उसी डण्डे वाले को।"

"लो यार चलता हूँ।" यह कहता हुआ मैं एक कमरे से दूसरे कमरे में बड़ी हैरानी के साथ देखता हुआ चलता गया। न जाने कितने कमरे पार कर दिए कि सामने एक बड़ा लाल-सा पर्दा दृष्टि-गोचर हुआ। वहाँ की सरदारनी ने मुझे झुक कर सलाम किया। और अन्दर ले गई।

"बड़ी बी" मैंने कहा।

"क्यों ?" उन्होंने कहा।

"क्यों, कहाँ ले जाती हो मुझे ?"

इसके उत्तर में उसने एक आवाज दी और एक जुर्मट सुन्दर और युवती लड़कियों का दल मुझसे आकर चिपट गया। वे सब की सब मुझे लेकर चलीं। दो कमरे पार करके एक दरवाजे के पासमुझे लाकर खड़ा कर दिया और पर्दा हटाकर जो मुझे कमरा दिखाया, वह मैं देखकर दंग रह गया, या अल्लाह मैं कहाँ हूँ। एक चुलबुली सी अत्यन्त सुन्दर लड़की ने मुझसे कहा, "वह देखो सामने पर्दा है जिसके पीछे छोटी शहजादी दुल्हन बनी बैठी हैं। आप अन्दर चले

जावें किन्तु पर्दे को हाथ लगाने से पहले बड़े आदर के साथ बेगम साहिबा को पुकार कर कहें कि सलाम अर्ज है और इस प्रकार से सात बार सलाम अर्ज करें।" यह कहकर उसने कहा "जाइए।" मैंने उसका मुखड़ा देखा और दिल में कहा कि या मेरे अल्लाह! अब मैं समझा। खुदा पनाह! रईसों और नवाबों के मनचले मजाक तो देखिए। मैं बिल्कुल समझ गया कि हो न हो अवश्य ही इस पर्दे में कोई सिपाही या जल्लाद छुपाया हुआ है। ताकि जैसे ही मैं आगे बढ़ा.....। मैं न जाने क्या-क्या सोच रहा था, अजीब प्रकार की द्विविधा में था। कभी कोई विचार आता, कभी कोई। बादशाहों के अपने अपराधियों के साथ ऐसे मजाक तो बड़े सुने हैं। वह उनकी मनोभावनाओं के साथ खेलते हैं। उनको बेवकूफ बनाने में उन्हें मजा आता है। हो न हो यह भी वैसा ही एक मजाक है। मैंने कह दिया, "मैं नहीं जाऊँगा। पर्दा नहीं छुऊँगा।" इस पर वह छोकरी उलझ गई मुझसे। सब की सब पड़ गईं मेरे पीछे और लगीं मुझे घसीटने। मैं इन लौंडियों से भला कब हार खाने वाला था। मैंने इन्हें झटका दिया और सबको इधर-उधर कर दिया। बस क्या था, कोई इधर गिरी तो कोई उधर। सामने देखा तो वही बुढ़िया खड़ी थी।

बुढ़िया ने कहा, "जहांपनाह पूछ रहे हैं कि नवाब खुर्शी बहादुर कहाँ हैं? शाहजादी साहिबा कहाँ हैं? वे क्या कर रहे हैं।" इस पर उन सब छोकरियों ने टेढ़ा-सा मुंह करके कहा कि वे तो अन्दर ही नहीं जाते। वह औरत मेरी ओर देखने लगी जैसे वह मुझे भी उत्तर देने के लिए कह रही हो। मैंने कहा, "बड़ी बी, मुझे क्यों इस प्रकार मरवाने की सोच रही हो। अगर मरवाना ही है तो वैसे ही मरवा दीजिए। अब मैं माँफी भी नहीं मागूँगा। कोतवाल के बच्चे ने मुझसे बड़ी दुश्मनी निकाली है। ...मुझे कहाँ भेज रहे हैं। पहिले तो कमरे में कोई शहजादी नहीं.....अगर हो भी तो मेरी जान की खैर नहीं।"

बड़ी बा न लाख समझाया पर मैं न माना। मेरे मुंह पर तो एक ही न...न...चढ़ी हुई थी। वह भी बहुत थक गई। .....आगे क्या देखता हूँ कि जल्लाद के समान जहांपनाह अपना चेहरा बनाए, हाथ में बड़ा-सा हंटर लिए चले आ रहे हैं। आते ही न आव देखा न ताव मुझे रुई की तरह धुन डाला। कहने लगे, "पाजी, निकाह करके भागना चाहता है.....मेरी बेटी के साथ.....मैं तुझे जिन्दा नहीं छोड़ूँगा।.....पाजी.....नामाकूल। मैं.....यह देखो तुम्हारा काम तमाम कर दूँगा।" वे छोकरियाँ समझदार थीं। बीच में पड़ कर उन्होंने मुझे बचा लिया नहीं तो उस जल्लाद से क्या मैं छूटता। इसके पश्चात् जहांपनाह चले गए। "मार डालेंगे, जहाँ-पनाह", उस चुलबुली छबीली लड़की ने कहा, "जाओ, जाकर सलाम करो।" मुझे उसने पर्दे के अन्दर धकेल दिया—"और नहीं जाओगे तो याद रखिए...।"

रहस्य

अब मैं सोच रहा था यदि इस पर्दे के पीछे कोई जल्लाद भी हो तो क्या बात है ? मैं भी तो आखिर एक पुरुष हूँ, यहाँ और कोई है नहीं। मैं स्वयं भी तो उसके साथ उलझ सकता हूँ। दूसरा विचार एक और आया। मैं झगड़ा भी समाप्त करना चाहता था। अब मेरे हृदय का भय भी कुछ-कुछ दूर हो चुका था ! मैं आगे बढ़ना चाहता था। मैंने सोचा शायद मेरा विवाह शहजादी से सचमुच हो ही गया हो।.....एक ओर यह जिज्ञासा भी हृदय में अपना स्थान बनाए हुए थी कि आखिर यह मामला क्या है।.....यह जानना जरूर चाहिए। मेरा साहस अब बढ़ चुका था। मेरा मस्तिष्क खुल चुका था। इस मनोरंजन का मैं स्वयं भी लाभ उठाना चाहता था। अब मैं इतना उदासीन नहीं रहा था।

मैंने कमरे के चारों ओर देखा। ईमान की कसम खाकर कहता हूँ—ऐसा आश्चर्यजनक कमरा मैंने कभी नहीं देखा था।...वह शाही ठाठ था वहाँ पर ! सारा कमरा बेल-बूटों की चित्रकारी से सजा था। एक ओर बिजली के रंगबिरंगे बल्व लगे थे, दूसरी ओर सुन्दर कालीनें बिछी हुई थीं, ऐसा शानदार सोफासैट लगा था कि देखकर वहीं लेटने को जी चाहता था। ऊपर की छत

ऐसे सजी थी जैसे रक्तिम मखमल उस पर लगी हो, सारी स्वर्ग की सजावट वहीं पर सिमट कर आ चुकी थी। मेरी तो आँखें एक बार चुँधिया गई। न जाने पहिले मैं कैसे इस सारे नजारे से दूर रहा। तिपाइयों और कुर्सियों की सजावट भी अनोखी थी। कुछ समय के पश्चात् मेरा ध्यान उस पर्दे के ऊपर गया। देखा कि अत्यन्त सुन्दर शैय्या है। उस पर अनेकों रंगबिरंगे तकिए पड़े हैं। शैय्या पर इधर उधर झालरें लटक रही हैं। वहाँ न जाने कितना इतर छिड़का हुआ है। सुगन्धि नाक पर आकर न जाने क्या-क्या कह रही है। वह मानो आह्वान कर रही है। मैं तो हतबुद्धि-सा खड़ा रहा। समझ नहीं पाया वह सारे का सारा नजारा किस धनागार को मेरे लिए लेकर आ रहा है। मैं आगे भी नहीं बढ़ सका। इतने में वही चुलबुली आवाज मेरे कान में पड़ी। उसने सूचना दी कि जहाँपनाह आ रहे हैं। इस बार मैं डरा नहीं। अब मैं आगे बढ़ गया, पर्दे के निकट पहुँचा और धीरे-से आवाज दी, "शहजादी' साहिबा।"

उत्तर न मिलने पर मैंने फिर कहा, "शहजादी साहिबा, इस सेवक की सलाम स्वीकार करो।" यह कहकर मैंने सात बार सलाम किया। इसके बाद मैंने फिर कहा कि सेवक को चरणों में शरण दी जावे। यह कहकर मैं कुछ समय खड़ा रहा। पर मुझे कोई उत्तर न मिला, मुझे कुछ शंका होने लगी, मैंने पास ही पड़ी एक तिपाई पर हाथ जमा दिया। मैं ऐसा तैयार खड़ा हो गया कि यदि कोई हमला करे तो उसकी रोक थाम कर सकूँ। फिर मैं पर्दे की तरफ आगे बढ़ा। पर्दा कुछ हिला। मैंने फिर सलाम अर्ज की और कहा अब अधिक तंग मत कीजिए। लेकिन इस बार भी कोई जवाब नहीं मिला। मैं फिर पीछे हट गया। तिपाई को मैं हर समय थामे हुए था। हर वक्त खतरे का सामना करने के लिए तैयार था। ...कुछ देर मैं रुका। मैंने सोचा, मैं डरता क्यों हूँ। इस बार मैंने पर्दा अधिक जोर से खींचा और साथ ही साथ आवाज भी दी। मैंने पूछा "कौन है।" उत्तर में कहा गया

कि "मैं हूँ।" मैंने कड़क कर कहा "मैं कौन ?" उत्तर नहीं मिला। लेकिन मैं पहचान गया। औरत की आवाज थी। मैंने अनुमान लगा लिया—हो न हो यह शहजादी है। हमारा निकाह हो ही गया होगा। परन्तु तिपाई मैंने नहीं छोड़ी थी। पर्दे को और खींच डाला तो एक कोमल आवाज आई, "यह कौन गुस्ताख है ?"

यह आवाज इत्र की सुगन्धि लिए हुए थी। मेरे दिमाग तक पहुँची। पर मेरे मिजाज ठिकाने आ गए—शहजादी चण्डी बनी हुई थी। पास ही पड़ा एक खासदान का डिब्बा मेरे मुँह पर दे मारा। मेरे हाथ तिपाई से हट चुके थे। शहजादी उठ कर खड़ी हो गई। उसका जलाल देखने लायक था। हुस्न और जलाल दोनों मिलकर न जाने उसे किस आकर्षण से भर रहे थे। मैं तो सच कहता हूँ, काँप रहा था। वह शेरनी की तरह चमकी। उसने आँखें निकालीं और मुझे डाँट कर कहा "नामाकूल, जाहिल, पाजी, यह गुस्ताखी तुमने क्यों की ? तुम कौन बला हो ?"...मैं खुदा की पनाह की चाह कर रहा था। वह फिर गरजी, "निकल...निकल गुस्ताख यहाँ से।"

मैं सिर पर पैर रख कर भागा। मारे डर के काँप रहा था। बाहिर दासियों ने मुझे देखा। वे कहने लगीं, "क्या हुआ।...क्या हुआ।" मैंने अपना मुँह उन्हें दिखा दिया और कहा, "शहजादी ने मुझे निकाल दिया।"

मैं यह बातें कर ही रहा था कि एक दासी हाँफती हुई आई। उसने खबर दी कि जहाँपनाह आग बबूला हुए आ रहे हैं। मेरे पैरों तले जमीन खिसक गई। मैं भागा, फिर वहीं पहुँचा। सारी शक्ति लगा कर पर्दा खींच डाला। अब मुझे कुछ अनुभव हो रहा था कि शादी हो गई है। मैंने किवाड़ लगा दिए। सोच रहा था अगर शादी नहीं तो स्वप्न तो अवश्य देख रहा हूँ। आगे बढ़ा तो शहजादी सामने फिर उसी चण्डी के रूप में थी। "बदतहजीब" और जूता उनके हाथ में था।

अब मैंने सोचा कि ऐसे काम नहीं चलने का। मैं तनकर खड़ा हो गया। होंठ दबाते हुए मैंने कहा, "बदतहजीब।"

"हाँ, बदतहजीब...निकल यहाँ से।"

"मैं नहीं जा सकता।" कहा, "नहीं जा सकता?" वह जूता लेकर बढ़ीं। वाह री कुदरत, यह क्या हो रहा है? मैंने कहा—"जोरू की जूतियां.....।" जैसे ही उसने मुझे मारा मैंने हाथ पकड़ लिया। डाँट कर कहा, "बाहर जाता हूँ तो तेरा बाप मारता है और अन्दर तू खुद।"

"निकल यहाँ से, तू है कौन?" शहजादी साहिबा ने कहा।

मैंने चापलूसी के लहजे में कहा—"मेरी बेगम कितनी भोली है, इतना भी नहीं जानती। खैर! शायद मैं तुम्हारा पति हूँ। और यहाँ से बिल्कुल.....बिल्कुल नहीं जाऊँगा। उधर बाहर मुझे मार पड़ती है, इधर अन्दर आप मार देती हैं। मेरा निकाह भी आपसे पढ़ा जा चुका है। काजी का बच्चा सारी कार्यवाही कर चुका है। खुदा के वास्ते अभी मुझे कुछ मत कहो। अगर मैं आपके पसन्द नहीं तो बाद में निकाल दीजिएगा वर्ना बाहर तो मेरी खैर नहीं।"

मैंने शहजादी साहिबा की ओर देखा। वे घबरा रही थीं। उनका गुस्सा न जाने किस आकाश लोक की यात्रा के लिए निकल चुका था। लेकिन उन्होंने फिर कहा—

"तुम निकल जाओ यहाँ से।"

"नहीं जा सकते हम।" हमने जरा ऊँचे स्वर में आँखों में आँखें डालते हुए कहा।

"निकल जाओ यहाँ से," उन्होंने कुछ व्याकुल होकर कहा।

"बिल्कुल...बिल्कुल नहीं।" मैंने कड़क कर कहा। "नहीं जा सकते हम, जी।"

"निकल जाओ यहाँ से।" शहजादी ने फिर कड़क कर कहा।

"हम नहीं...नहीं जासकते" मैंने भी कड़क कर कहा। यह कह कर मैं आगे बढ़ा। मैंने अपना हाथ बढ़ाया। वह बड़ी सफाई से कुछ दूर हट गई। इतने में वह पर्दे के पास पहुँची। वह उसमें एक जादूगरनी की तरह घुस गई। मैं दूर खड़ा देखता का देखता रह गया। मेरे मुँह से निकल पड़ा, "वह मारा अनाड़ी को।"

मैं आगे बढ़ा। पर्दा उठाया तो अकल दङ्ग रह गई। वहाँ शहजादी कहाँ थी? वहाँ तो लाल रङ्ग की एक गुड़िया रखी थी। वह भी वीरबहूटी सी दिखाई पड़ रही थी।

"शहजादी साहिबा!" मैंने ऊँची आवाज में पुकारा।

उत्तर नदारद था।

दो तीन बार उसी प्रकार से सलाम अर्ज किया। कोई उत्तर नहीं मिला। असली वीरबहूटी को देखकर तो पता भी चल जावे कि उसका मुँह सिर किधर है। मगर इस गुड़िया का तो कुछ भी पता नहीं चलता। वहाँ अब ऊनी शाल की दो गुड़ियाँ रखी थीं—एक इधर और एक उधर। झाँका इधर-उधर मगर सिर का कुछ भी पता नहीं चलता था। बहुत ऊपर नीचे किया, झँझोरा परन्तु कोई असर नहीं, कोई जवाब भी तो नहीं मिलता था।

अब मैंने देखा कि शहजादी साहिबा तो हार गई। किवाड़ सब लगे हुए थे। इस कारण पिटने का तो कोई डर रहा ही नहीं था। मैंने इधर-उधर देखा। नजर दौड़ाई छोटी-छोटी मेजों पर जिनके ऊपर कुछ पड़ा था और वे ढके हुए थे। कोई उनमें मजेदार वस्तु होगी—खाने की, मैंने सोचा। मैं चला उस ओर को। मेरी दृष्टि शहजादी साहिबा के जूते पर पड़ी। उस पर हीरे झिलमिल-झिलमिल कर रहे थे। क्या खूबसूरती थी उनमें! मैं एक दम से रुक गया। फिर शहजादी साहिबा की ओर देखा। वह तो एक बेजान मुर्दे की तरह गठड़ी बनी पड़ी थी। मैंने उस पर चादर उढ़ा दी और पर्दा गिरा दिया। और जनाब बड़े ध्यान से मैंने इस जूती को देखा। देखकर बुद्धि उड़ गई। तरह-तरह के जवाहरात टंके हुए थे। सब सच्चे होंगे, मैंने अपने दिल में सोचा, और यह भी सोचा कि शादी तो मेरी होगई है शायद। यह 'शायद' अब भी मेरे साथ था। बुद्धि कुछ कम काम कर रही थी। हो न हो मैंने सोचा अगर बन्दा इस जूती को लेकर चम्पत होजावे तो क्या कहने हैं। मैंने फिर जूती को देखा। उङ्गली से बीच का बड़ा हीरा देखा फिर बड़ा प्रयत्न करके उसे उखाड़ लिया

और भली प्रकार से अपनी अंटी में लगा लिया। सोचा अगर भाग सका तो कहीं काम आवेगा।

मैं हीरा नोंच कर छोटी-छोटी मेजों की ओर बढ़ा। यह कालीनों का—बड़े-बड़े ऊनी :कालीनों का फर्श भी कितना निकम्मा होता है। दो स्थानों पर गिरने से बचा। ख्वाबपोश जिनसे कि यह मेजें .ढकी हुई थीं...उनको देखा तो उन पर छोटे-छोटे सच्चे मोती लगे हुए थे। एक बहुत बड़ा भी था जो बीच में था। मैंने बिना किसी कठिनाई के वह मोती नोंच लिया। फिर खाने की वस्तुओं को देखा। ऐसी थीं जो उमर भर खाई तो क्या देखी भी न हों, सुनी भी न हों। खूब डट कर खाया। खाने के पश्चात मैं सोच रहा था ये सोने की नमकदानियाँ और चाँदी के बर्तन किसी प्रकार से लेकर दीवार फांद कर भाग जाऊँ। क्योंकि दिल बोल रहा था कि शादी हो तो गई मगर कुछ झगड़ा सगड़ा इसमें अवश्य है। मैं इन विचारों में मग्न था। पश्चात् मैंने कनखियों से देखा कि शहजादी पर्दे की दाईं ओर से बड़ी सफाई से झाँक रही है। मैंने दिल में कहा पकड़ो इसे। फिर मैं एक चित्र को देखने लग गया। सरकता भी जाता था बड़ी होशियारी के साथ और शहजादी को कनखियों से देखता भी जाता था। शहजादी इसी ओर झाँक रही है यह सोच कर मैं उसे बेखूबी नहीं देखता था। मैं बढ़ता-बढ़ता आड़ में पहुँचा। अभी दूर ही था, फिर भी दम से मुलायम रेशम के बिस्तरों में शेर की तरह झपट कर शहजादी का गला पकड़ लिया। एक दबी हुई चीख उसके मुंह से निकली। मैंने उसका हाथ पकड़ कर घसीट कर कालीन पर रख दिया। वह पर्दे में जाने के लिए शक्ति का प्रयोग करने लगी। मैंने ज़रा डाँट कर कहा, "अब मैं तुम्हारी बेतरह ठुकन्तरी करूँगा ...बैठो सीधी। इधर देखो...हमारी तरफ...जबाव दो, हम जो पूछें ...जीवन से तंग हैं हम...हमें मौत वैसे ही अच्छी लगती है...हम डरते नहीं किसी से...बस बस....लो...अब मेरी बातों का जवाब देना तुम ...नहीं तो...।

शहजादी साहिबां को सीधा करके मैंने आगे बैठा लिया। वह पूरे मेरे काबू में थी और शर्म के मारे मरी जा रही थी। लेकिन जैसे ही मैंने कहा—"नहीं तो" एक दम से वह बल खा गई। "या अल्लाह!" मुँह को अजीब सा बना कर कहा, "जरा कुछ तहजीब है?" मैं सन्न सा रह गया। शहजादी में सुन्दरता के साथ-साथ अपने बाप जैसा गुस्सेवाला रौब भी था। मैंने झट से सलाम अर्ज करने शुरू किए। मैंने कहना प्रारम्भ किया, "मैं कुछ कहना चाहता हूँ आप स्वयं ही बिगड़ पड़ी हैं।...आपको क्या मालूम मेरे ऊपर क्या मुसीबत आई है।"

यह कह कर मैं हाथ बाँध कर स्वयं सीधा खड़ा होगया तो पता चला जैसे मैं स्वयं लंकरान के सम्राट के सामने खड़ा हो गया हूँ। मैं बैठने लगा कि शौक से बातें करूँगा तो शहजादी साहिबा को मुझ पर गुस्सा आ गया। वह बोल उठीं कि बिना आज्ञा के बैठना नहीं चाहिए।

मैंने मुआफी माँगी.....थोड़ा सा रुका, फिर सलाम अर्ज की और बैठ गया। दिल में कहा, या अल्लाह! यह छोकरी तो बहुत तेज है। अभी तो इसकी गर्दन दाबी थी और अब लगी है रौब जमाने। खैर इसको ठीक करूँगा। अगर शादी होगई होगी तो बिना मारे पीटे यह काबू में नहीं आने की। फिर मैं बैठ गया और कहने लगा, "शहजादी साहिबा.....मैं गरीब आदमी हूँ मगर सम्राट लंकरान के वंश से हूँ।"

इस पर शहजादी ने एक बड़ी ही कठोर चितवन से देखा जैसे कि कोई शंका हो। "जी हाँ।" मैंने कहा—"लंकरान महान् के वंश से हूँ। दाराओं से सम्बन्धित हूँ। मेहनत मजदूरी किया करता था। बताओ डेढ़ रुपया रोज में क्या गुजर चलती है। अब एक दम से पकड़ा गया। मैं समझा कि मारा जाऊँगा और मेरे साथ मजाक हो रहा है।"

यह कहकर मैंने दरबार की सारी घटना कह दी—किस प्रकार से डरता था, किस प्रकार से आदमी बनने से मैंने इंकार किया, और किस प्रकार पीटा गया, किस प्रकार से निकाह के समय मैंने डरकर मना कर दिया था और फिर कैसे पीटा गया। यह सुनकर शहजादी हंस पड़ी। मैंने भी सब का वर्णन बड़ा लच्छेदार किया था। फिर मैंने बतलाया कि किस प्रकार मैं अन्दर आया और किस प्रकार से जूता लेकर आपने मरम्मत की थी।

शहजादी साहिबा के मुख पर मुस्कराहट के साथ फूलों की वर्षा हो रही थी। मैंने दोहराया "आखिर आप मुझे मारने के लिए क्यों तुल पड़ी थीं।" शहजादी साहिबा ने कहा, "मैं तुम्हें गँवार समझती थी कि तुम मुझसे गुस्ताखी करने आए हो। मुझे क्या मालूम कि जहांपनाह ने ही धमकी दी थी कि गँवार.....।"

मैं हंस पड़ा और चौंक पड़ा। मैंने कहा, "शहजादी साहिबा, अगर हुकम हो तो कुछ कहूँ लेकिन यदि आप गुस्से न हों तो।..... उस दिन जो आप बाग में आई थीं.....उस दरोगा की लड़की से आप बातें कर रही थीं.....।"

शहजादी साहिबा चौंक पड़ीं, "हैं! "तुम्हें कैसे मालूम?"

मैंने कहा, "मैं वहाँ बाग में.....गया था.....मिला था..... फिर दरोगा की लड़की और आपकी बातें दरवाजे की दरार से सब सुनीं।"

"तुम थे!" शहजादी साहिबा ने कहा। "तुमने...?"

"हाँ! हाँ!! आपका बाग खसूटने गया था।"

कुछ उदासीन सी शहजादी ने कहा, "यह आप को नहीं करना चाहिए था।" मैंने कुछ स्पष्ट होते हुए कहा, "कहीं फिर थोड़े ही बाग खसूटने जाऊँगा। इन कहानियों को तो अब जाने दीजिए और खुदा के लिए मुझे एक बात बतलाइए। वह यह कि अब मैं मारा-कूटा तो नहीं जाऊँगा।" शहजादी साहिबा फिर हंस पड़ीं और कहने

लगीं, "बदतहजीबी, और बेअदबी करना छोड़ दो, और जरा रौब के साथ रहा करो।" मैंने कहा, "अजी, यह बेकार की बातें जाने दीजिए। मुझे तो ऐसी तरकीब बतलाइए जिससे बस पिटने का डर जाता रहे। और यह बतलाइए कि कोई खतरा तो नहीं, नहीं तो मैं भागने की चिन्ता करूँ।"

"भाग जाओगे ?" वह बोली।

"और नहीं तो क्या ? यहाँ चार चोट की मार थोड़े ही खाऊँगा...दिन रात।" मैंने कहा, "या तो तुम बचाओ...या तरकीब बताओ।"

शहजादी साहिबा एकदम से बोलीं, "तुम तहजीब सीखो तहजीब...यह तुम तुम ?"

"मुआफ कीजिये...यह बात तो ठीक है, लेकिन मुझे कोई तरकीब बतलाओ जिससे मेरा विश्वास बंध जावे।"

"बस तरकीब यह है कि तुम्हें शहजादों की तरह रहना चाहिए। दरबार के सभ्य तरीके सीखने चाहिएँ। सब सेवकों और सेविकाओं पर रौब रखना चाहिए। मेरे सामने सदा विधिपूर्वक खड़े होना चाहिए। मैं सेविकाओं को बतला दूँगी। यदा कदा खास अवसरों पर आपको मिलें व सलाम किया करें। सदा सभ्य ढंग से बोला करें। दरबार में जाना हो तो बिल्कुल किसी से नहीं डरना चाहिए। अन्दर जहांपनाह के सामने सभ्यता से और नियम पूर्वक उपस्थित हुआ करें। आपको सब नियम धीरे-धीरे बतला दिए जावेंगे। जब आप सलाम करोगे तो मैं रूमाल आगे बढ़ा दूँगी। इसके कोने को पकड़ कर तुम आँखों से और होटों को लगा लेना। बस यही नियम है।"

मैं ध्यान से यह बातें सुन रहा था। अब मुझे यह तो विश्वास हो चुका था कि शादी मेरी होगई। अब यह भी मान चुका था कि यह सब नियम मुझे सीखने पड़ेंगे। लेकिन मैंने फिर भी हिम्मत

बांधी और कहा, "तुम इन बातों को छोड़ दो। यह बतलाओ कि हमारी शादी का गठजोड़ होगया या अभी कोई झगड़ा बाकी है? और बन्दा अब आपके...है या नहीं। और अगर... ।"

"हाये!" शहजादी साहिबा ने त्यौरी पर बल दिया और लगीं गरजने—"यह...यह गुस्ताखी।" उन्होंने गुस्से में बल खाया था। मैंने दिल में कहा ऐसा ही पागलाना व्यवहार ठीक रहेगा। मैंने कहा, "गुस्ताखी...गुस्ताखी को डालो चूल्हे में...तुम हो हमारी बीवी... आदर शादर हम कुछ जानते नहीं...न...नहीं जानते हैं यह सब झगड़े क्या हैं... ?

"तुम जात का ठहरीं शहजादी और हम आखिर ठहरे खुर्पे... मगर खुदा की सौगन्ध, हम तुम्हें अपने सिर पर बैठाएँगे।.....हम अपनी बीबी और खूबसूरत शहजादी को सिर पर बैठाएँगे ?"

पूर्व इसके कि शहजादी कुछ कहे मैंने अपनी प्यारी शहजादी को लपक कर फूल की तरह उठा कर सिर पर रख लिया। मेरा दिमाग शहजादी साहिबा के अतर की सुगन्ध से भर गया। और मैं अब उनको सिर पर बैठा कर लगा झूला झुलाने।

"हाय! हाय! यह गुस्ताखी!!" शहजादी साहिबा सिर पर से बोलीं। इसके उत्तर में मैंने उन्हें सिर से नीचे उतारा, उन खूब-सूरत छोटे गालों पर दो चार चांटे रसीद किए। फिर उसी पर्दे में रख कर जता कर कहा कि जरा होश की बातें किया करो।

दरबार

सुबह के दरबार में रंगरलियों का सारा सामान तयार हो रहा था। आप देखते तो हैरान रहते। हर दरबारी व्यक्ति की आँखें मेरे ऊपर जड़ी थीं। सब के होटों पर 'नवाब खुर्पा बहादुर' का नाम था। चारों ओर निस्तब्धता छाई हुई थी।

मेरे ऊपर शाही घोषणाओं की बर्षा हो रही थी। तीस हजार रुपया वार्षिक आमदनी की...कराची और बम्बई में पूंजी की। इक्यावन हजार की जागीर लंकरान में घोषित की गई। शहजादी के खर्च आदि के लिए इक्कीस हजार की जागीर अतिरिक्त मिली। रहने के लिए बाहर आराम-महल दिया गया। बहुत सारे सेवक मोटरें आदि भी नियुक्त की गई। मुझे पढ़ाने के लिए ग्यारह उस्ताद नियुक्त किए गए। कोई उर्दू पढ़ाने के लिए, कोई घुड़सवारी के लिए, कोई अंग्रेजी पढ़ाने के लिए, कोई खेल सिखाने के लिए।...कोई दूसरी बातें सिखाने के लिए। सेना में मुझे कप्तानी का पद दिया गया और घोषणा की गई कि सेना का काम सीख जाने के उपरान्त कमान्डर-इन-चीफ बना दिए जाओगे।

बाहर के दरबार से छुट्टी मिली। अब महासाम्राज्ञी के दरबार में भी जाना था। वहाँ पहुँचा

(बिना मार खाए)। वहाँ पर जो मेरे ऊपर मुहब्बत के फूलों की वर्षा हुई उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। मैं तोफों से लद गया। पश्चात् फिर दरबार में आया। इस समय के दौरान में 'आराम महल' की ओर मोटरों का तांता बंध गया। शहजादी साहिबा ने भी महल की तरफ प्रस्थान किया, अपने सारे जनाना स्टाफ के साथ।

साधारण दरबार के पश्चात् शाही दावत हुई। मेरी सभ्यता, मेरा व्यवहार सब कुछ शाही हो चुका था और रौब देखने योग्य था। जहाँपनाह ने मेरी पीठ ठोंक कर कहा, "वाहरे मेरे यार खुर्मे... कर लिया न ठीक, एक ही दिन में मार पीट कर।" मेरा भी जवाब देखिए, मैंने भी जहाँपनाह के पांव चूम लिए। बस गदगद ही हो गए वे तो।

शाही दावत समाप्त हुई और मैं अपने आराम-महल की ओर चल पड़ा। मोटर बरामदे के पास जाकर रुकी और गार्ड ने मुझे सलामी दी। मैं उतरा तो खुदा की शान दृष्टिगोचर हुई। क्या देखता हूँ कि जमाल खाँ अकड़ा हुआ...एटैन्शन में मुझे सलामी दे रहा है। कौन जमाल खाँ ? वही जिसने कोतवाली में मुझे पीट-पीट कर चमड़ी उधेड़ दी थी।

मैं अन्दर बढ़ा तो खजान्ची ने झुक कर मुझे सलाम किया। एक पर्चा हिसाब का मेरे हाथ में दे दिया। पता चला कि एक-एक साल का मेरा और शहजादी का खर्चा खाते में जुड़ा हुआ था। वह मेरा खजान्ची था। वह रोज़ आकर यहां अपना दफ्तर लगाएगा और आवश्यकता के अनुसार समय-समय पर मुझे रुपये देता रहेगा। मैंने कहा ठीक है।

मैं अन्दर बड़े हॉल में घुसा। वहाँ की शान और ठाठ देखकर अपने आपे में न रहा। एक स्थान पर बैठ गया। इतने में परियों का एक जमघट आया, याने लौंडियाँ आईं, मेरे पास आकर घुटनों के बल सलाम किया। "चलिए" यह शब्द मुझे सुनाई दिया। एक

चुलबुली सी लड़की ने मुझसे कहा, "शहजादी साहिबा को झुक कर सलाम करिए। पहला अवसर है, नहीं तो जहाँपनाह के पास सूचना पहुँच जाएगी···और शायद अबकी फिर...।"

मैं अन्दर बड़े हॉल में प्रविष्ट हुआ। यहाँ शहजादी श्रंगार से लदी हुई थी। एक-एक बाल में मोती लगे हुए थे। जवाहरात और दरबारी वस्त्र पहने आसन पर किस शान के साथ बैठी थी। मैं देखता ही रह गया इस रूप लावण्य को। एक शब्द सुनाई दिया, "वाला शान आली मुकाम जनाब नवाब दौला नवाब खुर्पा बहादुर।" यह शब्द एक बार ऊँचे सुनाई दिए। मैं चौंक पड़ा। यह मेरे लिए संकेत था। और मैंने झुक कर सात बार सलाम करना प्रारम्भ किया। दिल में कहता जा रहा था "अरी वाह री जोरु, तेरे ये ठाठ।"

शहजादी के चेहरे पर अत्यधिक विचारशीलता थी जिसमें उसकी खूबसूरती भी विचारशील ही दिखाई देती थी। उसने सलाम के उत्तर में अपना सुन्दर और कोमल हाथ आगे बढ़ाया जिसमें रेशमी रूमाल था। मैं आगे बढ़ा। मैंने घुटना टेककर रूमाल को बोसा दिया। शहजादी साहिबा ने उठने की झूंठ मूठ धमकी दी। मैं झट से सलाम करके बराबर वाली कुर्सी पर बैठ गया।

यह वास्तविक रूप से हमारा दरबार हो रहा था। अब और दरबार प्रारम्भ हो गया। वही पुरानी सी दासी महामन्त्री का कार्य कर रही थी। एक-एक लड़की को अब वस्त्र, धन, जेवर, और इनाम मिलने प्रारम्भ हुए थे। उनकी तनख्वाह में तरक्की की घोषणा की गई थी। और फिर ख्वासिनों की उपाधियाँ और पद नियत किए गए। किसी को 'जमरुदी', किसी को 'गुल खशबू' किसी को 'गुल-नार' की उपाधि दी गई।

इसके पश्चात् इन लड़कियों ने तरह-तरह के कपड़े बदल कर गुलाबपाशी की हम दोनों पर सुगन्धित वर्षा की। सबने हमें बधाई दी और गाना शुरू किया। इस प्रकार का नाच किया कि देखा

ही करें। मैं वह सब कुछ देखकर स्तम्भित सा रह गया। गौं बोल उठा चुपके से 'वाहरी जोरू तेरे ये ठाठ'। कहानी को संक्षिप्त करते हुए मैं बतलाता हूँ कि यह दरबार सफलतापूर्वक समाप्त हो गया। कपड़े छोकरियों ने उतरवाए। शहजादी साहिबा ने भी अपने वस्त्र बदले। हम दोनों अन्दर के गोल कमरे में बातें करने आ गए।

या अल्लाह! शहजादी साहिबा कितनी प्रसन्न थीं। उनकी मुस्कराहट खिली कली से भी कहीं ज्यादा खुशनुआ थी। मैंने उन्हें अपने गले से लगाया···हाथ मैंने अपने हाथ में लिया और हाथ पर प्रणय के इतने बोसे लिए कि उनके हाथ को तरल कर दिया। शहजादी साहिबा ने अब एक मनहूस सी खबर सुनाई; वह यह कि उनके भाई वली अहद बहादुर उनकी शादी पर बहुत नाराज और गर्म हैं। यह शादी उनको इतनी अखरी कि जब उन्होंने सुना तो घबरा कर बेहोश हो गए और गिर पड़े। कहते हैं कि उन्होंने कहा कि वह अपनी जान दे देंगे पर यह शादी नहीं रहने देंगे, इसको छुड़वा कर ही हम दम लेंगे। यही कारण था जो मैंने उन्हें न दरबार में देखा और नहीं उनका कभी जिकर सुना।

दिल में कहा कि साले का सिर न फोड़ दूँ तो मेरा जुम्मा। परन्तु मैं घबराया अवश्य था क्योंकि वह मशहूर जिद्दी आदमी है। नौजवान गुस्सा है, कहीं कुछ कर न डाले।

शहजादी साहिबा ने भी कहा कि बेहद जिद्दी हैं। मेरी मुहब्बत में ही ऐसा कर रहे हैं। मैं उन्हें राजी कर लूंगी। मैंने दिल में कहा अगर नाराज ही रहेगा तो क्या? साले का सिर फोड़ दूँगा। वह समझता क्या है मुझे। फिर मैंने होसला करके शहजादी को कहना प्रारम्भ किया—

"शहजादी साहिबा! मेरी नाजू बेगम! अगर शहजादा साहब रजामन्द न हुए तो। ···तो क्या तुम मुझे···मुझे तुम·····तुम मुझे निकाल दोगी।"

एक छपकी सी शहजादी साहिबा के मुखड़े पर आई और चली गई। कुछ गुस्से से बोली, "कोई मजाल है इनकी! ...और तुम इनके निकाले निकल जाओगे?"

"सिर फोड़ दूँगा, सब वली अहदी भुस्स में मिला दूँगा।"

"हाए! हाए!!" बहुत सम्भल कर शहजादी साहिबा ने अपना हाथ मेरे मुंह पर रखते हुए कहा। "बकवास मत करो...होना आखिर को वही है जो होगा।"

इसके पश्चात् शहजादी साहिबा का सुन्दर चेहरा दमक उठा, जगमगाहट आ चुकी थी...फूल सी खिल गई थीं। अपनी आँखों में एक विशेष प्रकार की दुनियाँ को लाकर मुस्करा रही थीं।

उन्होंने कहा "खुर" और मैंने शब्द को पूरा कर दिया और कहा "पे" और "पे" के साथ ही शहजादी साहिबा को उठा कर सिर पर रख लिया और लगा झूला झुलाने उनको।

इधर इनके मुँह से हल्की सी चीख निकली और उधर खान बहादुर रज्जनखाँ एकदम से अन्दर आगए।

"ए हे...मेरी शहजादी" इन के मुँह से निकला और इधर मैं पानी पानी शर्म में होकर शहजादी साहिबा को जमीन पर छोड़ चुका था।

"ए नबाव साहब" रज्जन खाँ बोले, "आपने गजब ही कर दिया, और शाही आदर भी तो कोई वस्तु है। ऐसी बे-अदबी...ऐसी गुस्ताखी...आखिर यह बादशाह की बेटियाँ हैं...मेरी जान, इनकी इज्जत करो। मैं आप के सदके...।"

यह कह कर मेरी बलाएँ लेने लगे और इतने में शहजादी साहिबा न जाने किधर रेंगकर खिसक गईं।

वह दासी...और वह बुजुर्ग सूरत दासी जिसने हमारे छोटे से दरबार में दासियों को उपाधियाँ और इनाम बाँटे थे उन्हें जहाँपनाह ने ही "खान बहादुर रज्जनखाँ" की उपाधि दी थी। और इन्होंने

क्योंकि शहजादी साहिबा को खिलाया था इसलिए यहाँ आई थीं। इतने में एकान्त देखकर मुझे तो सोफे पर बैठा दिया और खुद फर्श पर बैठ गई...एक छोकरी आई तो उन्होंने कहा कि शहजादी साहिबा को कह दो कि मैं नवाब साहिब को पढ़ा रही हूँ। जब निस्तब्धता हो गई तो रज्जन खाँ ने कुछ परेशान होकर कहा :

"बेटा, खुदा के वास्ते ध्यान से चलना। पग-पग पर कुएँ हैं। जब समय बीतेगा तो इन रेशम के गद्दों को काँटों का ढेर समझोगे। किसी बात को भूल मत जाना, दम मारने में क्या से क्या हो जाएगा। जरा फूंक कर कदम रखना। मुझे शहजादी साहिबा बहुत प्यारी हैं। इसी कारण तुम भी मेरी आँख के तारे हो मगर अच्छी प्रकार से समझलो कि पग-पग पर यहाँ पर कुएँ हैं।"

मैं कुछ घबरा सा गया और कहा, "क्यों ? कैसे ?"

"कैसे !" रज्जन खाँ ने भौं सिकोड़ कर कहा। "पूछते हो कैसे ? खुद आँखों देखते हो और पूछते हो कैसे ? जानते हो मैं क न ? मेरा नाम है राजोदार खान याने रज्जन खाँ ! मैं सरकार की राजदार हूँ। इस सीने में (अपने सीने पर हाथ रखते हुए) राज़ ही राज़ भरे पड़े हैं। आप पूछते हैं कैसे, तो अच्छा यह है कि रज्जन खाँ के मुख से पहिला राज़ सुनिए।

पहिला रहस्य

रज्जन खां ने पहिला राज़ इस प्रकार से वर्णन किया।

"देखो बेटा! मेरा नाम रज्जन खाँ है और मैं तुमसे लंकरान के सम्राट के गुप्त रहस्य वर्णन करती हूँ—इस कारण कि तुम समझलो कि तुम कहाँ पर हो। यह उस समय का वर्णन है जब कि सम्राट जवान ही थे, जन्मदिन की रङ्गरेलियाँ मनाई जारही थीं। अन्दर और बाहर रास हो रहा था। जशन का सारा सामान तैय्यार था, दिन भर जनानखाने में जशन रहा, सरकार ने महल में बड़े ठाठ से दरबार किया था।

स्वर्गीय ज़मानी···अल्लाह स्वर्ग में वास करे। मेरी आँखों में इस समय उनकी जवानी की सूरत घूम रही है। बहुमूल्य रत्नों से लदी हुई, बाल-बाल मोतियों से भरी हुई और अत्यधिक शृङ्गार किए हुए महल में इस शान से आई कि बली अहमद बहादुर की स्वर्गीय माता रङ्गीन महल बेगम की आँखें भी झपकने लगीं। यह रहस्य तो मैं बाद में बतलाऊँगी। यहाँ इतना ही काफी होगा कि जनाने महल में बड़ी धूम-धाम थी और रात के समय बाहर जशन हो रहा था।

चालीस कमरों वाला महल बड़ी शान से सजा हुआ था। प्रत्येक कमरे में कालीन का फर्श था। प्रधान

कमरे में अंग्रेजी बैंड की तान पर अंग्रेजी नाच हो रहा था। सरकार अंग्रेजी लिवास में बड़ी शाहाना सजधज में थे। बहुत से अफसर इस जलसे में भाग ले रहे थे। मेरी ड्यूटी भी इसी हॉल में थी। उस दिन क्या बताऊँ, बेटा, जल्सा आँखों में फिर रहा है। एक से एक खूबसूरत अंग्रेजिन वहाँ पर हाजिर थीं। उसी जमघट में थी एक सोलह वर्ष की लड़की। क्या अर्ज करूँ, उसके हुस्न और सौन्दर्य ने सरकार की क्या हालत कर दी थी। यह अंग्रेज माल मंत्री की लड़की थी। सरकार के साथ एक चक्कर सैर का लगा चुकी थी। कामनी सूरत, नाजुक बदन, अनोखी अदा। बस यह समझ लो कि किसी फूलों के बगीचे में सुगन्धित केसर का आगार रख दिया हो। सरकार उस पर इतने मस्त हुए कि भरे दरबार में अपने गले से फूलों के हार उतार-उतार कर उसके गले में डालने लगे। उपस्थित जनों ने बैंड की लय में खुशी के मारे तालियाँ बजाईं। वह अपनी मस्ती पर इतराती, इठलाती, मुस्कराती, बिजलियाँ गिराती अपने बाप के पास जा बैठी। मुझ से सरकार ने पानी माँगा तो उनके गले में वह कीमती हार देखा था। रात भर यही चक्कर रहा। तीसरी बार वह हार भी उसके गले में चला गया। सुबह होते ही जब जल्सा समाप्त हुआ तो मैंने बड़े आदर से सलाम किया। फूल के समान खिल गए। हाथ पकड़ कर मेरा अलग ले आए और अपने सीने पर हाथ लगा कर कहा "खामोश"। मैं आदर के मारे झुक गई।

दूसरे ही दिन उसके बाप की तरक्की हो गई। एक सप्ताह तक उसके बाप और माँ पर कृपा की वर्षा होती रही यह उसको भी मालूम हो गया। अधिक देर तक बात भी दिल में नहीं रखी और मौका देखकर अन्त में उसके बाप से अपनी इच्छा प्रकट कर दी। बाप ने बड़ी सादगी से कहा—"आप उससे स्वयं पता करलें। मेरी ओर से केवल एक शर्त है। वह यह कि एक तो पर्दे में नहीं रहेगी और दूसरे अपना धर्म नहीं बदलेगी।"

कुछ भी हो इतना कहूँगी और चाहे जो भी बात हो लेकिन सरकार अपने धर्म में बहुत पक्के हैं । कहने लगे धर्म भी बदलना पड़ेगा और पर्दे में भी रहना पड़ेगा। स्पष्ट है कि उसके बाप को यह किसी प्रकार भी स्वीकार न था। यह बात दिल ही दिल में पकती रही। सरकार उससे स्वयं बात करना चाहते थे । एक दिन वह अवसर भी आ गया। एक दावत पर उस लड़की के माँ बाप ने उसे अकेली छोड़ दिया। सरकार की उससे बातें हुईं । वह बड़ी रुखाई दिखलाने लगी। कुछ समय बातें होती रहीं। सरकार ने इधर-उधर की बातें करके उसके दिल को पहचानने का प्रयत्न किया । उस लड़की ने साफ इंकार कर दिया। कहा कि उसकी किसी और से मुहब्बत है। वह उसे वचन भी दे चुकी है। उस वचन को वह भग नहीं करना चाहती। सरकार ने यह बात बड़े हौसले के साथ सुनी। परन्तु बर्दाश्त कर गए। कोई भी बात बाहर नहीं आने दी। उसके बाप की और तरक्की कर दी। उस लड़की को और भी तोफे दिए। फिर भी यह रहस्य बाद में खुल गया था।

उस अभागिन ने यह न सोचा कि क्या बात है जो उसने इंकार कर दिया है—वह भी लंकरान के सम्राट से। उसने इतने बड़े सम्राट को ठुकरा दिया था। सरकार मारे गुस्से के झुंझला रहे थे, बल खा रहे थे। उसके तीसरे दिन की बात है, उन्होंने मुझे बुलवाया, सारी कथा का वर्णन करने के उपरान्त कहने लगे, "क्या करना चाहिए ?"

मैंने सरकार को उत्तर में कहा कि ऐसी छोकरी को तो यही सजा देनी चाहिए कि उसे दासी बना दिया जावे।

खुश होकर सरकार ने मुझे शाबाश दी और कहने लगे, "कोई तरकीब भी तो बतलाओ।"

मैंने कहा, "सरकार क्षमा करें, मैं कोई तरकीब तो नहीं

बतला सकती। हाँ, अगर आप यह काम चाहते हैं तो हो सकता है। इसे आप मुझ पर छोड़ दीजिए और तीन महीने की मोहलत दे दीजिए। ऐसी तरकीब करूँगी कि न तो लन्दन तक में उसका कोई सहायक हो सके, और न ही आपकी बदनामी हो।"

वह लड़की जन्म दिन के जशन में सम्मिलित होने के लिए शिमला से आई थी। शिमला में वह एक स्कूल में पढ़ती थी। और एक दो दिन में ही लौट जाने वाली थी। इस कारण सरकार ने कहा, "वह तो जाने वाली है!" इसके उत्तर में मैंने प्रार्थना की, "आप इस बात की कोई परवाह न करें।"

× × ×

अब यह काम मेरे ऊपर छोड़ दिया गया था। मैंने तीन एक नम्बरी बदमाशों की खोज की। यह तीनों बहुत ही संगीन अपराधों के कारण जेल भुगत रहे थे। मैंने जहांपनाह से प्रार्थना की कि उन तीनों कैदियों को जेल में से नियत समय पर मेरे पास भेजा जावे। सरकार ने इसका कारण जानना चाहा। उत्तर में मैंने कहा कि इसका उत्तर वह छोकरी स्वयं ही देगी।

सरकार की आज्ञा की देर थी। तीनों बदमाश मेरे पास आ उपस्थित हुए। मैंने एक-एक से अकेले में बात की और उनको अच्छी प्रकार से समझा दिया। उनको हुकम दिया गया कि जैसा उनको कहा जावे वे वैसा ही करें। बहुत छोटी सी सेवा उनको सौंपी गई थी। वह यह कि जान-बूझ कर इनको जेल से भागने दिया जावेगा। पीछा किया अवश्य जावेगा, गोलियां भी हवा में छोड़ी जावेंगी, मगर तुम्हें निकल जाने दिया जावेगा। इसके पश्चात् इनका यह कर्त्तव्य होगा कि वे वास्तविक रूप से छुपे रहेंगे। इनकी गिरफ्तारी के लिए हजारों रुपये के इनाम के इश्तहार भी बांटे जायेंगे।

"इसके पश्चात्" उनसे मैंने कहा "सेवा के लिए किसी विशेष दिन तुमको बुलाया जावेगा। तुमको एक लड़की दिखलादी जावेगी

जो अकेली एक ड्राइवर के साथ सड़क पर जा रही होगी। तुम उस मोटर को रोक लेना। लड़की के मुँह में कपड़ा डाल कर उसे बांध लेना। मोटर को और उसके सामान को लूट लेना। ड्राइवर को मोटर में बिठला कर पिस्तौल दिखलाकर जंगल में ले जाना। वहाँ ड्राइवर को छोड़ देना। लड़की की आँखें बांधकर गुप्त-मार्ग से मुझे सौंप देना। यह कार्य बड़ी होशियारी से करना तुम्हारी फिर तलाश होगी। तुम तीनों पर फिर मुकदमा चलाया जाएगा। तुम तीनों को उमर कैद का हुकम दे दिया जावेगा। पचास रुपये माहवार तुम्हारी तनखाह नियुक्त कर दी जावेगी। रात को तुम्हें छोड़ दिया जावेगा। वैसे तुम पूरे स्वतंत्र होगे। केवल जेल में उप-स्थिति देनी पड़ेगी।"

स्पष्ट है कि तीनों राजी होगए। मैंने उनको समझा बुझाकर सरकार के सामने उपस्थित किया। हुकम हुआ कि इनको पाँच-पाँच सौ रुपया देकर अभी छोड़ दिया जावे। तीनों दुआएँ देते हुए चले गये। सरकार ने मेरी तरकीब सुनी तो हैरान रह गए।

× × × ×

लड़की को शिमला गए बीस दिन हुए थे। तीनों कैदी छोड़े जा चुके थे। उनकी दुबारा गिरफ्तारी के लिए इश्तहार लगाए जा चुके थे। पकड़ने वालों को ऊँचे इनामों की घोषणा की गई थी। पुलिस की सरगर्मियाँ तेज होगई। मैंने जहांपनाह को इशारा दिया और उन्होंने उस लड़की के बाप को, जो माल-मंत्री था, दिल्ला किसी दौरे पर भेज दिया। उधर बाप की ओर से लड़की को जल्द आने के लिए तार दे दिया। तार जबावी भेजा गया था। उसका जबाव आया कि मैं अमुक दिन आरही हूँ। तार न्याय विभाग के मंत्री ने पढ़ा। वह तार उसकी माँ को दया गया। लड़की की माँ की समझ में ही नहीं आ रहा था कि लड़की क्यों आ रही है। वह बहुत परेशान

थी। वह उसे स्वयं स्टेशन पर लेने गई। वापिसी पर रात थी और रास्ता निर्जन था। उनकी मोटर घेर ली गई। उन तीनों डाकुओं ने बड़ी सफाई के साथ आक्रमण किया। वे ड्राइवर, उसकी माँ और लड़की को जंगल में ले गए। ड्राइवर और उसकी माँ को छोड़ दिया गया। उन्होंने थाने में रिपोर्ट दर्ज करवाई। सरकार के पास भी आकर फरियाद की। सरकार ने कोतवाल और इन्स्पैक्टर जनरल को सख्त आज्ञाएँ भेजीं। मामले का पता करने के लिए फरमान जारी किए गए। उनकी गिरफ्तारी के लिए और भी बड़े-बड़े इनामों की घोषणा की गई। शाही गजट में भी यह सब विवरण दिया गया। उसके बाप को दिल्ली सहानुभूति के तार अलग भेजे गए।

रात के बारह बजे होंगे कि निस्तब्धता और नीरवता के मध्य तीनों अपराधियों ने एक कम्बल में लपेटी हुई अमानत को हमारे हवाले कर दिया। 'तारीख-महल' का दरवाजा खोला गया।

मैंने पूछा यह 'तारीख-महल' कहां है ?

वह बोलीं, "सुनते जाइए, दरबार वाले कमरे में जो रास्ता जनाने महल में जाता है उसके बाएँ हाथ की ओर एक कमरा है। इसके अन्दर तहखाने का एक दरवाजा है। संगमरमर की चौड़ी सीढ़ियाँ उतर कर पाताल में जाकर तारीख-महल है। महल के नीचे सत्रह कमरे हैं, वह पूरा का पूरा महल है। आप सुनते जाइए। तारीख-महल का दरवाजा खोला गया और मैंने अमानत को नीचे पहुँचवा दिया। अपराधियों को इनाम देकर चलता किया। एक बटन दबाते ही तारीख महल में दिन होगया। मैं तो ऊपर आ गई। तीन गुप्तचरों को नीचे भेज दिया। उन्होंने वहाँ जाकर लड़की को खोल कर कम्बल में से निकाला। कोई पन्द्रह मिनट पश्चात् एक दासी भागती हुई मेरे पास आई। उसके होश उड़े हुए थे। उसने आकर खबर दी कि मिस साहिबा आग बबूला हो रही हैं। जहांपनाह ने मुझे भेजा है।

मैं तारीख महल के विशाल हॉल में पहुँची। वह महल अनेक प्रकार की कला से सुसज्जित था। कारीगरी के नमूने दृष्टिगोचर हो रहे थे। फर्श पर ऊनी गलीचे बिछे हुए थे। अन्दर प्रकाश की जगमगाहट से दिन हो रहा था। कमरे में एक सोफे के पास मिस साहिबा सौंदर्य के गर्व में चूर लाल बबूला बनी खड़ी न जाने क्या-क्या बक रही थी। मैंने पहुँचते ही उसे एक फर्जी सलाम किया। दोनों दासियों को इशारा किया, वे दोनों चली गईं। इसके पश्चात् जहांपनाह के पाक और सच्चे प्रेम की कथा उसे सुनाई। उस चुड़ैल पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने न जाने क्या बकवास शुरू कर दी। जहाँपनाह ने हुकम दिया कि उनकी ओर से निकाह का संदेश दिया जावे। मगर उसने एक न सुनी। जहाँपनाह को उसने बहुत अनाप-शनाप कहा था। मैंने लाख समझाया, फुसलाया, डराया मगर उस मक्कार ने एक न मानी। जब मैंने जरा क्रोध से काम लिया हो वह मेरी ओर शेरनी के समान लपकी। मैं मजबूर होकर वहां से भागी तो वह भी मेरे पीछे-पीछे भागने लगी। मैंने लाचार हो कर वहाँ अन्धेरा कर दिया। बड़ी कठिनाई से टटोल-टटोल कर अपना रास्ता नापा। जहाँपनाह को दरवाजे पर अपनी इन्तजार में पाया। मैंने जहाँपनाह से कहा कि यह अब मेरे बस का रोग नहीं है। इस पर उन्होंने रोशनी कर दी और स्वयं अन्दर नीचे चले गए। हॉल में पहुँचते ही दोनों में अंग्रेजी में बातें हुईं। अंग्रेजी मेरी समझ में नहीं आती। फिर भी पता चल रहा था कि जहाँपनाह उसे समझा रहे हैं। लेकिन वह सिर पर ही चढ़ी आ रही थी। जहाँपनाह के मान और शान की उसने कोई परवाह नहीं की। इस पर जहाँपनाह का रङ्ग मारे गुस्से के बदल गया।

उन्होंने तालियाँ बजाईं और पाँच दासियाँ आ पहुँचीं, एक और ताली बजाई तो वहाँ अन्धेरा कर दिया गया। हम सब उनको वहाँ छोड़ कर चली आईं।

इसके तीन दिन के पश्चात् माल मन्त्री आ गए शहर भर में इस खबर से तहलका मचा हुआ था। पुलिस के कार्य की रिपोर्ट प्रति दिन उपस्थित की जाती थी। पुलिस और फौज दोनों को इस संबन्ध में आज्ञाएँ दी जा चुकी थीं। यह सब कुछ बाहर हो रहा था और अन्दर तारीख महल में मिस साहिबा एक हल्की सी जेल भुगत रही थीं। उसका अब वह गरूर और ऐंठइज्जत लुटने के पश्चात् कुछ न रहा था। हाँ चेहरे पर एक उदासी की झलक आ गई थी। शाही दबदबे से वह कब की हार मान चुकी थी। वह जानती थी कि जिसने उसकी इज्जत लूटी है वह उसे जिन्दा गड़वा भी सकता है। मैंने इस बात का इशारा एक बार उसके कान में कर भी दिया था। मैंने कहा था कि इससे अच्छा है कि मान जाओ। लेकिन उसके दिल में भारी शंका जन्म ले चुकी थी। वह लंकराने आजम से बदला लेने की ठान चुकी थी। उधर मैंने जहाँपनाह को सलाह दी कि वे हर प्रकार से उसे राजी करने का प्रयत्न करें। जहाँपनाह कहते थे कि ऐसा न हो कि मैं इसको छोड़ दूँ और यह फिर मेरे पास न आवे। इस कारण वह हर प्रकार से उसे प्रसन्न रखने का प्रयत्न करते थे ताकि वह राजी हो जावे।

अब आवश्यकता थी कि माल मन्त्री से लड़ाई का कोई कारण निकाला जावे। इस कारण जिस कार्य के लिए वे गये थे उसका विवरण जहाँपनाह ने सुनाया और उसमें एक गलती निकाल कर उन पर खूब नाराज हुए। और सजा के रूप में उनकी तनखाह में दो सौ रुपये महीने की कटौती कर दी गई। इस खबर को सरकारी गजट में छापा गया।

माल मन्त्री अंग्रेजी सरकार का प्रतिनिधि था। भला वह इस बात को कैसे सहन कर सकता था। उसने झट से त्याग पत्र दे दिया। जहाँपनाह ने तीन मास पश्चात् उसके स्वीकार किए जाने की

आज्ञा दी कि इस दौरान में वह अपना चार्ज दूसरे व्यक्ति को दे देवें। माल मन्त्री ने उसी समय त्यागपत्र को स्वीकार किए जाने की प्रार्थना की। किन्तु जहाँपनाह ने फौज की गारद उनके स्थान पर बैठा दी और कहा कि हमें शक है; रुपये का मामला है, उसकी जाँच पड़ताल की जावेगी जिससे कि कोई गबन न हुआ हो। जाँच के लिए एक अंग्रेज अफसर को बुलाया गया और हुकम दिया गया कि इनके विभाग की जाँच करके रिपोर्ट उपस्थित की जावे जिससे यदि माल मन्त्री दोषमुक्त हों तो उन्हें छुट्टी दी जावे।

यह सब कुछ तो इधर हो रहा था। दूसरी तरफ मिस साहिब की खोज में पुलिस सरगर्मी से लगी हुई थी, जब कि वह स्वयं तारीख महल में रङ्गरलियों का केन्द्र बनी हुई थी। अन्त में वह समय आया जब पुलिस ने उन तीन में से दो को गिरफ्तार कर लिया। तीसरा भाग निकला। दूसरे दिन जहाँपनाह ने आज्ञा दी कि इन पर मुकदमा चलाया जावे। इसके लिए एक विशेष जज नियुक्त किया गया। मुकदमे की सारी कार्यवाही एक बन्द कमरे में हुई। माल मंत्री की मेम ने उन अपराधियों को पहिचाना। उन पर आरोपित अपराध बतलाए गए। उन दोनों ने सारे अपराध तीसरे पर डाल दिये। उन्होंने कहा कि मिस साहिबा के साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं। उस की बेइज्जती तीसरे आदमी ने ही की होगी।

मुकदमा चल रहा था। सारे शहर में खलबली मची हुई थी। शहर के एक मकान में मिस साहिबा सहित तीसरा भी पकड़ा गया। मिस साहिबा को उसके माँ बाप को सौंप दिया गया। मिस साहिबा ने सारी कहानी अपनी माँ को बतलाई। जब तीसरे अपराधी की पहिचान के लिए और मुकदमे की पैरवी के लिए उनको बुलाया गया तो उन्होंने इन्कार कर दिया। क्योंकि सबूत पर्याप्त मिल चुके थे और ये अपराधी अपने अपराधों को स्वीकार कर चुके थे। उन तीनों

को अपराधी घोषित करके कड़ा दण्ड दिया गया, उधर कैद था। उधर माल मन्त्री ने बेटी की इस प्रकार बेइज्जती का हाल सुन कर मामला गवर्नमेंट के पास उपस्थित किया।

एक बार तो इस कार्यवाही से तहलका मच गया क्योंकि अंग्रेजों का पल्ला सदा भारी ही होता है। वहाँ की बड़ी सरकार ने जब जहाँपनाह से जबावतल्बी की तो उन्होंने बहुत ही कठोर शब्दों में उसका उत्तर दिया। उन्होंने लिख दिया कि यह मालमन्त्री की बद-माशी है और इसकी अन्त तक छानबीन की जावेगी। मुकदमे की सारी फाइलें वहाँ भेज दी गईं। वहाँ भला क्या कमी थी। आदि से अन्त तक फाइलों का मुँह भरा हुआ था। परिणाम यह हुआ कि बड़ी सरकार ने उल्टी आज्ञा दी कि माल मन्त्री जहाँपनाह से क्षमा माँगें और त्यागपत्र वापिस लें। मरता क्या न करता। माल मन्त्री को क्षमा माँगनी पड़ी परन्तु त्यागपत्र उन्होंने वापिस नहीं लिया।

क्षमा माँग लेने के पश्चात् जहाँपनाह ने माल मन्त्री की तन-खाह फिर से उतनी ही कर दी, और यह खबर गजट में आ गई। यह भी बहुत ही नरम भाषा में लिखा गया कि अगर त्यागपत्र वापिस ले लेंगे तो दूसरे आरोप भी क्षमा कर दिए जावेंगे। मालमन्त्री को एका-न्त महल में बुलाया गया। वहाँ पर मैं भी उपस्थित थी। परन्तु बातें सारी अंग्रेजी में हुईं इसलिए मैं कुछ जान न पाई। पश्चात् जहाँ-पनाह ने स्वयं बतलाया कि लड़की शाही हरम में भेजने के लिए राजी हो गया है।

इस प्रकार से मिस साहिबा जहाँपनाह के अधिकार में आ गई। उसको जहाँपनाह ने 'दिलरस बानो बेगम' की उपाधि प्रदान की। और वह यही 'दिल रस बानो बेगम' थी जिसके कारण लंकराने आजम की शान मिटी में मिल गई। वह सब कुछ हुआ जो कभी नहीं हुआ था। लंकराम के सम्राट को इस फिरंगिन के कारण वह अपमान

और अनादर मिला जो कभी नहीं मिला था। सच पूछो तो लंकरान सम्राट को अपने किए की सजा मिली थी। दिलरस बानो ने लंकरान के सम्राट से ऐसा बदला लिया कि सात पीढ़ियों तक उस वंश पर कलंक का टीका लग गया। ऐसा बदला लिया कि आज तक जहाँपनाह अंगारों में लेट रहे हैं। दुनियाँ इनको प्रसन्न देखती है किन्तु इनके जैसा घुन किसी को नहीं खा रहा। बानो को मरे अब सात बरस हो गए हैं। परन्तु उसके बदले की बर्छियाँ लंकरान के सम्राट और उसकी संतान के कलेजे को छलनी बना रही हैं। इस कारण सावधान, किसी भूल में मत रहना। होशियार रहना और याद रखना कि दिलरस बानों के बदले की चिनगारियाँ तुम्हें भी अपने शोलों में लपेट लेंगी। दूसरा रहस्य मैं फिर कभी बतलाऊँगी। अभी इस पर ही ध्यान दो। इस पर सोचो मगर खबरदार जो यह बातें तुमने शहजादी साहिबा को कभी बतलाईं।

मैंने गौर से इस मक्कार की बातें सुनीं। फिर सन्नाटे में आ गया। कुछ सोच में भी पड़ा रहा। इतने ही में शहजादी का जुगनू सा सुन्दर मुखड़ा दरवाजे में से चमका। उसकी मुस्कराहट में से प्यार की ज्वाला निकल रही थी। मैं रोमाँचित हो गया। और "लैला" कह कर अपनी शहजादी की ओर झपट पड़ा।

परन्तु मैंने देखा कि शहजादी के सुन्दर चेहरे पर जलाल की एक झलक आ गई। मैंने उनसे कहा, "क्यों"! शहजादी ने अत्यधिक भावना मय क्रोध की दुनियां में पहुँच कर मुझ पर टीका टिप्पणी करते हुए कहा कि मेरी शान में मजाक करते हुए तुम्हें "हराफा" का शब्द नहीं कहना चाहिए था, और वह भी इतना ऊँचा।

"अरे!" मैंने और भी दहाड़ कर कहा, "पगली कहीं की। लेकिन हमने तुम्हें 'हराफा' कब कहा था। पर यह है तो सही। और अब कहिए···?"

लपक कर शहजादी ने अपने नाजुक सुन्दर हाथ से मेरा मुंह बन्द कर दिया। मैं डर कर बोला, "खुदा के लिए...।"

"तो फिर !..." यह कह कर जब मैंने पकड़ कर निक फेरी तो वह फिसल गई और तेजी से मुझ से कहा, "आदमियत सीखो... क्या बातें हो रही थीं ?" यह कहती हुई वह कोच पर बैठ गई और सामने पसदड़ा मारकर मैं भी बैठ गया। मैंने शुरू से लेकर अन्त तक जो कुछ सुना था वह अपनी प्यारी घर वाली को सुना दिया। मैंने ध्यान से देखा कि यकायक से वह कुछ चिन्तित सी हो गई।

मैं ध्यान से उसके मुख को देख ही रहा था कि एक दासी ने आकर कहा, "हुजूर वली अहद बहादुर पधार रहे हैं।"

वली अहद बहादुर

वली अहद बहादुर याने मेरे योग्य साले मेरे कठोर विरोधी थे—ऐसे कि मेरी शादी को सुनकर दुखित हो, बेहोश हो गए थे। वे घोषणा करके कह चुके थे कि इस शादी को कभी भी जारी नहीं रहने देंगे। साँप तो जा चुका था मगर अब वह उसकी लकीर को पीटने आए थे। मुझे याद है कि मैं उनका आगमन सुनकर थोड़ा सा घबरा गया था। इस कारण नहीं कि वह मुझसे तगड़े हैं। अजी छोड़िए, एक घूँसा मार दूँ तो दम निकाल दूँ। मैं इस कारण डर रहा था कि कहीं उनकी मरम्मत न करनी पड़े। ये विचार उनके आने पर मेरे हृदय में आए।

आते ही उन्होंने पहिले अपनी बहिन को बुलवाया पर साथ में मुझे नहीं बुलवाया। याने डरी हुई एक दासी ने बड़े अजीब सहमे ढंग से कहा—"खुदा के लिए... नवाब साहिब ने आपको कहा है कि न आवें...।"

मैंने इस छोकरी को कहा—"हट" और जब वह चली गई तो पंजों के बल बराबर वाले कमरे में पहुँचा और दरवाजे से ही पर्दे की आड़ में झांक कर देखा। मैंने देखा कि वली अहद साहिब बड़ी शान के साथ इत्मीनान से कुछ अजीब से तिरछे होकर सोफे पर बैठे हैं। मखमल की ताजनुमा टोपी हीरों से जगमगा रही है। उसकी

कलंगी इस प्रकार से कांप रही है कि उनका गुस्सा बतला रही हो। इस घमन्डी साले के सीने में मेरे प्रति जहर घुमड़ रहा था। उस पर एक बड़ा सा हीरा जगमगा रहा था। सामने उनकी बहिन बहुत ही आदर के साथ भोलेपन में सहमी हुई खड़ी थी। क्या अपराध किया था उसने ? एक अपराधिन...। एक दण्डनीय के समान खड़ी थी वह। उसका अपराध था मुझ से मुहब्बत करना। महलों में रहने वाली, इतनी सुन्दर शहजादी मुझ जैसे गंवार से मुहब्बत करने के अपराध में अपने भाई के सामने खड़ी थी। वली अहद एक अजीब सी शान के साथ बहिन को देख रहे थे। बहिन भाई एक ही सांचे में ढले थे। वही पतली सी नाक, रंग गोरा, पतले पतले होट, किताबी चेहरा, बाइस या तेइस वर्ष की उमर, परन्तु इस समय वली अहद का चेहरा कुछ इस प्रकार से लंकरानी जलाल का दर्पण बना हुआ था कि मजबूरन मुझे कहना पड़ा, "मालूम होता है आगई शामत इनकी।"

इधर ये शब्द मेरे मुँह से निकले उधर एक सांप जैसी फुँकार मेरे कान में आई। खुदा की कसम वे गुस्से से पागल हो चुके थे, और मेरे सामने एक बेहद डरावना चेहरा लेकर आए। आँखें गारे खौफ के निकली पड़ रही थीं। अब इन्होंने मुझे बाजू से पकड़ कर कांपते हाथों से घसीटा।

बड़ी तेजी से वे मुझे बराबर वाले कमरे में ले गए। अत्यधिक परेशानी को जाहिर करते हुए व्याकुल हो इन्होंने मुझ से कहा—"खुदा के वास्ते...अंधेर कर रखा है आपने...झांक रहे थे आप...और जो देख लेते तो क्या होता ?"

"होता क्या ?" मैंने लापरवाही से कहा—"मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं।"

सिर पीट कर रज्जन खाँ ने कहा—"शहजादी साहिबा को ले जाने पर मजबूर न करें। वह आपके बहुत विरुद्ध हैं।" कमरे में

से शहजादी साहिबा के जोर से रोने की आवाज आई। एक चीख आई और उधर रज्जन बैठ गई। और मैं इन विचारों में डूब गया कि यह सुन्दर पत्नी कहीं हाथों से न निकल जावे।

बहुत व्याकुल होकर बिजली के समान मैं कमरे की ओर पहुँचा। क्या देखता हूँ कि वली अहद साहिब शहजादी को घसीट रहे हैं। मैं क्या वर्णन करूँ। मारे गुस्से के मेरा क्या हाल हो गया। खूनी गर्ज के साथ मैंने डपटा और कहा—"खबरदार" और दनदनाता हुआ वली अहद बहादुर पर इस प्रकार से झपटा कि इनके मुँह से बरबस निकल पड़ा—"लेना" और यह कहकर कुछ घबराते हुए वे सोफे के पीछे हट गए।

जब तक कि मैं पीछे हटूँ इनकी आवाज के साथ ही दो ख्वाजा सरा तोप के वहां आ पहुँचे। गोले के समान 'गुस्ताख' 'खबरदार' के नारे लगाते हुए मेरी तरफ झपटे। मैंने भी सोचा जरा साले को नमूना दिखा दूँ। अतः इनके स्वागत के लिए स्वयं भी आगे बढ़ा। दोनों के हाथों में असला था। ज्योंही आगे वाला जरा जोर में आया, मैंने ऐसे जोर का थपेड़ा मारा कि चक्कर खाकर उधर जा गिरा। अब दूसरा सामने आगया। मैंने उसके भी सीने में घूँसा मारा तो वह भी ढेर होकर गिर पड़ा। उसका गिरना था कि वली अहद साहिब का पिस्तौल मेरे ऊपर चल गया। एक धमाका हुआ और गोली मेरे कान से होती हुई निकल गई। पूर्व इसके कि मैं संभालूँ या वे दूसरा फायर कर सकें मेरी प्राण प्यारी माने, मेरी शहजादी सब कामों और विचारों को छोड़कर एक परवाने के समान मेरे ऊपर आकर गिर पड़ीं। और चीखकर बोली "रहम कीजिए।" यह कह मेरे बिल्कुल ही सामने खड़ी हो गईं। उधर मैंने अवसर की गम्भीरता को पहचानते हुए उससे अपने को छुड़ा कर एक छोटी मेज उठाई और शहजादी साहिबा से कुछ दूर होने का प्रयत्न करते हुए कहा "सिर फोड़ दूँगा।"

यह सारा दृश्य आँखों के सामने था। फायर की आवाज सुनते ही सारे महल में हलचल मच चुकी थी। रज्जन खां अपनी दासियों की सेना के साथ रोती पीटती एवं अजीब सी शकल बनाए वलीअहद साहिब बहादुर के कदमों की ओर "रहम रहम" करती हुई दौड़ीं। यह दृश्य देखने योग्य था। इधर मेरे हाथ में मेज का पाया और उधर वलीअहद साहिब के हाथ में रिवाल्वर और उनके कदमों में रज्जन खां का सिर। अब उन्होंने बड़े जोर से चीखना प्रारम्भ किया। "खुर्पे हैं हुजूर, मुआफ कीजिए।" उनका रिवाल्वर वाला हाथ जरा नीचा हुआ। शहजादी साहिबा तीर की तरह भाई पर झपटीं, रोते हुए उन्होंने रिवाल्वर वाला हाथ पकड़ लिया, भाई के कदमों की ओर झुकीं। उन्होंने रिवाल्वर हाथ से छोड़कर बहिन को रोका। बहिन ने रिवाल्वर तो उठाकर दूर फेंक दिया और मेरी तरफ झपट कर मेज को दूर फिकवा दिया। और "माँगो माफी" की डांट जो आंखें टेढ़ी करके मुझे दिलाई तो मैं शहजादी साहिबा के मृदुल हाथों से वलीअहद साहिब के कदमों में झुक गया। "मुआफ कर दीजिए" शहजादी साहिबा ने कहा "खुर्पे हैं। इसी प्रकार की अनमनी सी रोती आवाज में रज्जन खां ने भी कहा। एक झटका शहजादी साहिबा ने मुझे दिया तो मुझसे कहते बना, "मुआफ कर दीजिए"।

रज्जन खां और बांदियाँ तनिक दूर हटीं तो मैं वलीअहद के कदमों में तना हुआ था। नजर मेरी नीची थी। वलीअहद चुप थे। शहजादी साहिबा ने कुछ आरजू से मुझसे कहा "जब तक मुआफ न करें पैर मत छोड़ना।" यहाँ पैर पकड़ने में क्या शामत थी। मैंने इशारा पाते ही पैर पकड़ लिए और वली अहद बहादुर बोले "मुआफ किया।"

"ऐसे नहीं" जल्दी से शहजादी साहिबा बोलीं "मत उठना" मजबूर होकर वली अहद बहादुर ने मेरा हाथ पकड़ कर मुझे उठाया। मैं उठकर खड़ा हुआ। मैंने वली अहद बहादुर को देखा।

वली अहद साहिब बहुत ही स्तम्भित से हैरान होकर शहजादी साहिबा से कहने लगे "मुझे क्या पड़ी जब तुम खुश हो अपनी इस हालत पर तो मुझे क्या। मैं तो समझता था .....।" .....।"

"मैं अपनी किस्मत पर बहुत प्रसन्न हूँ।" शहजादी साहिबा ने कहा।

वलीअहद बहादुर कुछ कड़क कर बोले, "बेवकूफ कहीं की, पहिले क्यों नहीं बतलाया।" मेरी ओर देख कर कुछ मुस्करा कर सोफे पर बैठ गए। और फिर इन्होंने कुछ बड़बड़ाते हुए कहा "बे-समझ कहीं की। उमर भर के लिए मेरा मुंह काला कराया होता। पगली नम्बर एक की।"

रज्जन खां ने वली अहद की बलाएँ लेते हुए और सदके होते हुए कहा "सदके मैं हुजूर के.....उसे पगली आप क्यों कह रहे हैं.....आपको खुद समझ जाना चाहिए था कि वह यह कैसे कहती कि मुझे मेरे खुर्पा पसन्द है।"

वली अहद ने एक कहकहा लगाया और मुझे भी हंसी आगई। उधर जो शहजादी साहिबा को हंसी आई तो शर्म की परियों ने उसका मुँह दूसरी तरफ को मोड़ दिया। वली अहद ने मुझे बैठाया आर अनुराग मयी दृष्टि से मुझे देखना प्रारम्भ किया। वे मुझे बिल्कुल ही पसन्द नहीं थे। इस तरह से देख रहे थे कि जी में तो यही आया कि कह दूँ कि क्या कुत्ते की तरह सूँघ रहे हो। अब मेरी तबियत घबराने लगी। और जिसका मुझे डर था वही हुआ। याने उन्होंने मुझ से ओंधे-सीधे प्रश्न करने आरम्भ कर दिए। वे बोले—

"तुम लंकरान महान' की औलाद से हो.....मगर.....?

मैंने कहा, "मगर वगर क्या ?"

शहजादी ने इस प्रकार से मुझे घूरा.....। और अधिक परे-शान होकर इस प्रकार से मुआफी की इच्छा प्रकट की कि वह एक निःशब्द मूर्ति सी बन गई।.....मेरी बदतहजीबी पर उनकी यह

हालत होगई (जी हां यह मेरी बदतहजीबी ही तो थी) कि·····।इस बात को उसके भाई ने भी अनुभव कर लिया और समझ गए कि मुझे तहजीव से बोलना चाहिए था। परन्तु बात यह है कि जिस व्यक्ति को चपत मार कर और चपत खाकर गाली गलौज के साथ टर्राने की आदत पड़ी हो भला वह कैसे सुधर सकता है, वह तो मज-बूर है। अपनी बदतहजीबी के लिए फिर भी मैंने इस बात को रफा दफा करने के लिए हाथ जोड़ कर वलीअहदजी से इस प्रकार कहा।

"भाई साहिब, हुजूर, मुआफ कीजिएगा·····मुझसे कोई अप-राध हुआ हो·····।"

वलीअहद के मुँह पर जो इससे पूर्व अप्रसन्नता की लहरें आईं वे इससे दूर हो गईं। परन्तु वे अपना पैंतरा न बदल सके और कहने लगे "क्या सचमुच तुम अमरूद चुराकर बेचा करते थे ?"

मैंने तेज होकर कहा, "यहाँ तो कोतवाल नम्बर एक का झूठा व बदमाश है। मुझसे इसकी पुरानी दुश्मनी है। न जाने इसने मेरे विषय में कितनी झूँठी बातें प्रसिद्ध कर रखी हैं।"

वे बोले, "फिर भी किस कारण से कोतवाल साहब आप के दुश्मन हो गए ?"

मैंने कहा, "अजी यह पुलिस वाले बदमाश तो होते ही हैं।"

एक दम से वलीअहद बहादुर फट पड़े। कहने लगे "यह 'अजी' क्या बला है ?"

बोखला कर मैंने कहा, "हुजूर"

वलीअहद बहादुर फिर सहमत होकर बोले, "फिर भी तंक-रान में तुम करते क्या थे ?"

"रहते थे" मैंने सादगी में कहा।

"रहते थे !" वली अहद बहादुर ने प्रश्न को दोहराया।

"जी हाँ !" मैंने कहा "रहता तो था ही।"

रज्जन खां इस अवसर पर आड़े आड़े आगईं। बोलीं "साहिब

आलम ! गुस्ताखी के लिए क्षमा चाहती हूँ। पहले चाहे कुछ भी करते रहे हैं, अब तो हैं....आपके ही सेवक।"

वलीअहद बहादुर को यह सुनकर अंगड़ाई आई। शहजादी साहिबा को भी मुँह मटोर कर जम्भाई लेनी पड़ी। और मैं मजबूर होकर छत की ओर देखने लगा। इतने में वलीअहद बहादुर उठ खड़े हुए। उगली से मुझे अंगूठी उतार कर दी। एक राइफल और एक मोटर देने का वायदा किया। और आज्ञा हुई, "मेरे साथ चलो, आचार-व्यवहार को सीखो और रियासत के कामों को देखो।"

शहजादी साहिबा ने खुश होकर जल्दी-जल्दी से मुझे समझा बुझा कर भाई के साथ भेज दिया। वलीअहद बहादुर के साथ मैं इनके महल में पहुँचा। दरवाजे पर सुपरिनटैंडैंट और वही मूजी कोतवाल उपस्थित थे। उन दोनों ने बड़े आदर से हम दोनों को सलाम किया। कोतवाल साहब की शरारत देखिए कि आँख बचा कर मुझे घूँसा दिखाया। वलीअहद बहादुर ने सुपरिन्टैंडेन्ट से कहा—

"मैंने आपको इस कारण बुलाया है कि जल्दी से जल्दी उन सारे पुलिस अफसरों की सूची दीजिए जो रिश्वत लेते हैं।"

सुपरिनटैंडैन्ट साहब बोले, "हुजूर, अगर मुझे यह मालूम होता कि कौन अफसर रिश्वत लेता है तो मैं उसे नौकरी में रहने ही क्यों देता। आपसे स्वयं ही उसकी शिकायत कर चुका होता।"

वलीअहद बहादुर बोले, "तो आपको इतनी भी खबर नहीं कि कौन रिश्वत लेता है और कौन नहीं। आपको अपने विभाग के विषय में कुछ भी पता नहीं। आपको मालूम होना चाहिए था कि कौन अफसर बेईमान है और कौन ईमानदार व नेक।"

"साहिबे आलम !" सुपरिनटैंडैन्ट ने घबरा कर कहा, "अगर मुझे यह पता होता और मैं हुजूर के सामने रिपोर्ट न करता तो अपराधी होता। भला फिर मुझसे बड़ा अपराधी कौन होता ?"

वलीअहद साहब ने गुस्से से चेहरे पर बल डाल कर कहा,

"आप को नहीं मालूम तो मुझे तो मालूम है। अच्छा, अभी-अभी सारे थानों की लिस्ट तैयार करो। हम हर थाने का समय-समय पर दौरा करेंगे। एक दिन बीच करके बराबर तरीखें डालते जाइए।" इतना कहते हुए वलीअहद अपने साथ लिए मुझे महल में प्रवेश कर गए। मुझे बड़े कमरे में बैठाया तथा स्वयं और अन्दर चले गए। कुछ समय के पश्चात् वापिस आए और अन्दर चलने के लिए कहा।

मैं अन्दर गया। नवाब वली अहद साहब बहादुर की बेगम से भेंट हुई। एक सुन्दर और भोली-भाली युवती यौवन का मद पीकर शाहाना ठाठ में बैठी थी। मैंने तुरन्त उसी प्रकार से, जिस प्रकार से मुझे मेरी प्यारी शहजादी ने समझाया था, घुटने टेक कर उनको सलाम किया और आगे बढ़ कर सात अशरफियाँ उनके सामने उपस्थित की।

उनको स्वीकार होते देख मैं उल्टे पाँव वापिस आगया। वली अहद बहादुर भी साथ थे। कुछ समय पश्चात् बेगम साहिबा की ओर से मेरे लिए प्रकार-प्रकार के इनाम आए--जरी के थान, बनारसी साफा, हीरे की अंगूठी और सोलह अशरफियां नकद आदि-आदि।

इसके पश्चात् तीसरे दिन की बात है कि वलीअहद बहादुर का मुझे संदेश मिला कि कल सुबह ठीक हमारे पास आठ बजे पहुँच जाओ और किसी थाने के दौरे के लिए चलो। बला सिर पर आ पड़ी। मुझे भला इन निकम्मे कामों के लिए समय कहां! पर वली अहद का संदेश था, जाना पड़ा।

वलीअहद बहादुर अब नवाबाना ठाठ में लाजवाब टोपी पहने बरामदे में खड़े थे। हाथ में कोई कागज था और सामने ऐस. पी. साहब खड़े थे। मोटर तैयार थी। ऐस. पी. को कहा कि आज हम इस थाने का निरीक्षण करेंगे जिसकी निरीक्षण-तिथि आज से पन्द्रह दिन पश्चात् की थी। और वह थाना जिसकी तिथि आज निर्धारित है उसका निरीक्षण फिर कभी जिससे कि बिना पूर्व सूचना के वहाँ

पहुँच कर देखा जावे कि थाने वाले क्या करते हैं। वली अहद बहादुर ने मुझे, कोतवाल साहब को व दो चोबदारों को मोटर पर साथ लिया और चल दिए। रास्ते में नवाब साहब ने ऐस. पी. से कहा, "जिस थाने का दौरा करने हम आज जा रहे हैं उसका इन्चार्ज बहुत ही नेक आदमी है और उसका हैड कान्सटेबल बदमाश और मूजी है!" जवाब में ऐस. पी. ने कहा, "नहीं हुजूर! हैड कान्सटेबुल तो भला आदमी है पर थानेदार बदमाश है।" इसके साथ मुस्करा कर वलीअहद बहादुर ने कहा, "जी हाँ! आप को तो अपने विभाग के बारे में कुछ भी नहीं पता।"

थाना शहर से बीस मील दूर था। कोई दस मील जाने के पश्चात् वलीअहद जी ने मोटर को रुकवाया और सड़क पर जाते हुए गंवार को बुलवाया। वह हाथ जोड़ सामने खड़ा था। वली अहद बहादुर ने उस गांव का नाम पूछा फिर और कुछ पूछा। पश्चात् वे थाने पर आगए। पूछने लगे, "तुम्हारा थानेदार कैसा आदमी है और हैड कान्टेबल कैसा!"

देहाती ने हाथ जोड़ कर बड़ी नरम तबियत से कहा "थानेदार तो बस बड़ा मियाँ है.....देवता है लेकिन वह मुन्शी तो.....पूरा राक्षस है, जालिम हे, सरकार।"

वलीअहद बहादुर ने ऐस. पी. को सम्बोधित करते हुए कहा, "देखिए, यह क्या कहता है।" और उधर ऐस. पी. साहब की नानी मर गई।

आगे चलकर मोटर रुकवा कर एक खेत वाले से प्रश्न किया। उसने भी यही उत्तर दिया कि हैड कान्सटेबुल बड़ा नालायक है और थानेदार से सब लोग खूब खुश हैं। यहाँ तक कि उसने हैड कान्सटेबुल की बदमाशी की एक दो घटनाएँ भी सुना डालीं। फिर आगे बढ़े।

सारांश यह कि मोटर रोक कर एक खेत वाले से प्रश्न किया फिर दूसरे से किया। हर स्थान से यही उत्तर मिला। अन्त में मोटर

उस गांव में पहुँची जहां पर थाना था। मोटर को बाहर छोड़ दिया। हम सब उतर कर गांव की गलियों में होते हुए थाने में पहुँचे। एक कान्स्टेबुल थाने के फाटक पर बड़े मजे से बैठा बांसुरी बजा रहा था। दूसरे साहब इनके पास बैठे हुए सिर हिला-हिला कर अपने घुटने का तबला बजा रहे थे। अब मैं क्या वर्णन करूँ। इन दोनों ने जो हम सब को देखा तो क्या हाल हुआ। व्याकुल होकर दोनों चारपाई से गिर पड़े। फिर उठे और हाथ जोड़ कर सलाम पर सलाम करके कांपने लगे। बली अहद बहादुर ने उन्हें चुप रहने का इशारा किया और "वहीं इस तरह खड़े रहो" यह आज्ञा दी। और अन्दर दाखिल हो गए।

यह एक बहुत विस्तृत अहाता था। चारों ओर कान्स्टेबुलों की कोठरियों की कतार चली गई थी। बीचों-बीच थाने का दफ्तर था। परन्तु इस समय तो इस दफ्तर में कुछ और ही हो रहा था। दो तीन रसोइये हैड कान्स्टेबुल के लिए खाना पका रहे थे। इधर-उधर दो एक कांस्टेबुल जो खड़े थे उन्हें बली अहद साहिब ने बुला लिया।

रसोइयों के होश उड़ गए। पता चला कि लंकरान से आए हैं। हैड कान्स्टेबुल ने दावत का खाना पकाने के लिए बुलवाया है। बड़े जोर की दावत का सामान था। मुन्शीजी के बारे में पूछा तो पता चला कि सामने वाले कमरे में इतमिनान से ताश खेल रहे हैं और एक वेश्या भी वहां पर बैठी है। बली अहद बहादुर ने एक कांस्टेबुला कर कहा कि यहीं से उन्हें आवाज दो। इस कारण उसने गला फाड़ कर आवाज दी।

"मुन्शी जी.....मुन्शी जी.....ई.....ई.....।" कर्कश स्वर में बड़ी कठिनाई के साथ मुन्शी जी ने सुना और बोले "क्या है?"

बली अहद बहादुर ने सिपाही से कहा कि कहो कि कोई बुलाता है। सिपाही ने चीख कर कहा, "आप को कोई बुलाता है।"

मुन्शी जी ने कहा, "कौन है, उसे अन्दर भेज दो।" बली अहद

बहादुर ने सिपाही से कहलवाया, "वह नहीं आता, आप यहीं आइये।"

मुन्शी जी ने उत्तर दिया, "अच्छा तो तुम यहाँ आओ।" वली अहद बहादुर ने कहलवाया "वह हमें नही आने देता।"

मुन्शीजी भड़भड़ाते—गालियाँ देते, नंगे पैर वहाँ से चीखते हुए आए और निकट पहुँच कर बोले, "कौन बदमाश है।"

जैसे ही इनके मुँह से यह निकला वली अहद बहादुर ने तेजी से उनके सामने पहुँच कर कहा "अजी हुजूर, मैं बदमाश हूँ।"

हैड कान्स्टेबुल पर बिजली गिर गई। ताश खेलते-खेलते आए थे, बाजी हाथ में थी। डर के मारे ताश हाथ से गिर पड़े, चेहरा फक होगया और सीधे वली अहद बहादुर के कदमों में रोते हुए गिरे। एक विशेष प्रकार की हंसी के जलाल में वली अहद सीधे उनके कमरे की तरफ बढ़े। अन्दर जाकर देखते हैं तो हुक्का रखा हुआ है, पान-दान खुला पड़ा है और एक बी साहिबा भी तीन-चार गुण्डों के साथ बैठी हैं। बस, देखते ही सबके प्राण उड़ गए। हैड कान्स्टेबुल वली-अहद बहादुर के कदमों में झुकते थे। वली अहद बहादुर ने विश्वास दिलाया कि आपके इन सब कर्मों के साथ मुझे कोई सम्बन्ध नहीं।

यह कहकर फिर रसोईघर में आए। कीमा, चावल, मुर्गा, पुलाव और न जाने क्या-क्या बन रहे थे। एक-एक पतीली को खोल कर वली अहद बहादुर ने देखा और पूछने पर पता चला कि दावत पर तीस रुपये की लागत आई है। इसके अतिरिक्त इनकी मजदूरी अलग जो दो रुपया प्रति आदमी हुई। वली अहद बहादुर ने उनसे तनखाह के विषय में पूछा तो पता चला मुंशी की तनखाह अठारह रुपये है। इन्होंने अठारह रुपये में ही इस प्रकार की बरकत होने पर मुंशी जी को बधाई दी। खाने के विषय में कहा कि भाई ऐसे बढ़िया खाने तो हमें महलों में भी नसीब नहीं होते। इतने में थानेदार साहब आगए—टूटा हुआ जूता, उधड़े हुए से कपड़े। वली अहद साहब ने उनसे पूछा कि तुम अफसर हो और यह सब देखते हुए भी रिपोर्ट नहीं

करते। थानेदार साहिब ने हाथ जोड़ कर कहा, "हुजर को यह पता हो कि इसका भी एक कारण है।"

वली अहद बहादुर ने यह बात सुनी। पहले ऐस. पी. की ओर देखा और फिर थानेदार की ओर। थानेदार से पूछा--

"तुम क्या चाहते हो?"

थानेदार ने कहा, "मेरी गुजर यहाँ नहीं होती, केन्द्रीय थाने को बदली चाहता हूँ।"

वली अहद बहादुर ने कहा, "हमने तुम्हारी तरक्की की, हल्का इन्सपैक्टर का ग्रेड दिया और तुम्हारी नियुक्ति केन्द्र में कर दी।"

इतना कह वे मुंशी की ओर मुड़ गए। देखा और कहने लगे, "मेरे साथ चलिए।" वह रोते, हाथ जोड़ते उनके साथ हो लिया। मोटर के पास पहुँच कर वली अहद बहादुर ने मुंशी से कहा, "तशरीफ रखिए।" और हैड कान्स्टेबुल साहब को लिए वापिस हो लिए। महल में पहुँच कर हैड कांस्टेबुल साहब को हवालात में भेज दिया और ऐस. पी. को नौकरी से हटा दिया क्योंकि हैड कांस्टेबुल ऐस. पी. के मुँह चढ़ा था। इसीलिये दिन दहाड़े लूट-मार करता रहता था। थानेदार चूँ भी नहीं कर सकता था।

मैं छुट्टी पाकर अपने महल पहुँचा। शहजादी ने सारी कहानी पड़ी दिलचस्पी से सुनी। वली अहद बहादुर के पास पुलिस-विभाग था। वे बहुत महनत से सारा काम करते थे।

इसी प्रकार से न-जाने कितने बदमाश अफसरों को जेल की हवा खिलवाई। मैं बहुत खुश था और सोचता था कि पुलिस वाले इसी योग्य हैं। परन्तु उस कोतवाल से वली अहद बहादुर भी खुश थे। कुछ तो उसके काम के कारण और कुछ इस कारण से कि कोतवाल की जहांपनाह तक पहुँच थी। परन्तु वास्तविक रूप से कोतवाल और ऐस. पी. में परस्पर दुश्मनी थी। ऐस. पी. के निकाले जाते ही कोतवाल साहब ऐस. पी. बना दिए गए।

कब्बे हकनी

..."कब्बे हकनी की कहानी सुनाती हूँ।" रज्जन खाँ ने कहा। "ध्यान से सुनिए और देखिए कि यहाँ पर क्या-क्या होता है। खुदा जिसको चाहता है इज्जत देता है और जिसको चाहता है ज़िल्लत।"

सबसे पहले आप मलका जमानी का हाल सुनिए। शाही शान, दबदबा, खानदानी उच्चता और पद के विचार से जो दर्जा इन्हें प्राप्त था उसका अनुमान इसी से हो सकता है कि वह एक नवाब की बेटी, एक नवाब की बहिन और एक नवाब की बेगम थीं। जहांपनाह का पहला निकाह इन्हीं से हुआ था और आखिर वक्त तक इनका पल्ला इसी कारण भारी रहा कि भाई की याने नवाब साहिब की सहायता और छत्रछाया इन्हें प्राप्त थी। परन्तु भाग्य ने संतान इन्हें नहीं दी थी। रूप, यौवन और उच्च वंश सभी कुछ इनको प्राप्त था। परन्तु संतान न होने के कारण रंगीन महल बेगम की पूछताछ और मान अधिक बढ़ रहा था। रंगीन महल बेगम जहांपनाह के चचा की बेटी थी, लंकरान महान् के वंश का चमकता हुआ सितारा। बड़ी चमक-दमक के साथ और बड़ी शान के साथ यह दीप जला...लेकिन आह...बहुत जल्दी ही... देखते ही देखते बुझ गया।...और अब एक चमक है...जो उनकी भी आंखों में बुझ रही है।

रंगीन महल ने अपनी रंगीन जवानी से जहांपनाह की जवानी और उनके ताज और सिंहासन को रंगीन बना दिया था। पंद्रह-सोलह वर्ष की बात है जब कि जहाँपनाह को खबर न थी और वे मल्का जमानी के प्रेम और प्रणय से भरे गीत गा रहे थे कि रंगीन महल की जवान मुहब्बत का तेज भाला आकर लगा। वह सचमुच अपने शाही खानदान का हीरा थीं। बहुत शीघ्र ही बेगम बन गई। अपने सौन्दर्य और लावण्य के कारण, रूप-जलाल के कारण, अपनी रंगीन मोहकता के कारण रंगीन मन की उपाधि प्राप्त की। साल भर भी शादी को न हुआ था कि इनको अल्ला ताला ने हीरे जैसा एक बेटा दिया। लंकरान के वंश को स्थाई रखने के लिए खुदा ने बहुत बड़ी महरबानी की थी। ऐसी खूबसूरत थी वह रंगीन महल कि बड़ी बेगम मलका जमानी पर भी उनका असर था।

रंगीन महल को खुदा ने आकर्षक सौन्दर्य और मदभरी मस्ती के साथ बदकिस्मती से भारी जिद भी दी थी जिसमें उच्च वंश का गर्व और वली अहद मरहूम की मां होने का अभिमान भी शामिल था।

दिलरस बानो के महल में दाखिल होने के पश्चात् वहां का रंग-ढंग बदल गया था।

महल में जहांपनाह की मुहब्बत एक त्रिकोण के रूप में घूम रही थी। एक तरफ बड़ी मलका थीं। दूसरी दो तरफ दिलरस बानो और रंगीन महल। रंगीन महल अपनी सुन्दर मस्ती और एक ऐसे पुत्र की मां होने के कारण, जिसमें कि तख्तो ताज को सँभालने के सभी गुण दृष्टिगोचर हो रहे थे, अपना एक विशेष स्थान रखती थी और उनकी जवानी की माया जहांपनाह को अपने जाल में फंसाए हुए थी। दूसरी ओर दिलरस बानो की उठती हुई जवानी, जिसमें हुस्न की भारी गर्मी थी, अपनी चकाचौंध के साथ जहांपनाह को अन्धा कर चुकी थी और वे उस पर बुरी तरह से मोहित थे।

लोग दोनों को देखते और सिर हिला कर कहते कि एक रोज

ये दोनों टकरायेंगी तो क्या होगा ? वास्तव में यह एक प्रश्न बना हुआ था ।

दिलरस बानो की बढ़ती हुई माया ने मलका जमानी और रङ्गीन महल की स्वाभाविक ईर्षा को दूर कर दिया । दोनों देख रही थीं कि दिलरस बानो अपने तीरों को फेंक-फेंक कर धीरे-धीरे मुहब्बत के उस स्तर पर पहुँच रही है जिस पर वे दोनों किसी न किसी समय थीं ।

जो कुछ दिलरस बानो को नसीब हो रहा था वह किसी दूसरे को नसीब नहीं था । वे देख रही थीं कि दिलरस बानो शाही पद का कोई औजार नहीं रखती और फिर भी वह सब बन्धनों से दूर है जो उन पर लगे थे । वह शाही तरीके और परम्पराएँ अपनी मर्जी के अनुसार ढाल रही है । दोनों अपने अधिकारों पर विचार कर रही थीं और होशियार थीं कि दिलरस बानो की तरफ से उन पर कोई आफत न आए ।

दिन बीते, महीने गुजरे, साल बीतने आए । इस दौरान में एक अवसर पर नहीं परन्तु बीसियों अवसरों पर उसने सब बेगमों को नीचा दिखाया । उसी का पल्ला हर जगह भारी दिखाई देता था । परिणाम यह हुआ कि उलझनें पैदा होती गईं व बढ़ती गईं । अब आन्तरिक षडयन्त्रों और गुप्त तनातनी के जाल टूट गए । खुल्लम-खुल्ला दिलरस बानो से दोनों बेगमों का विरोध तेज होने लगा । दोनों तरफ से ऐसे बीज बोए जाने लगे जिनके वृक्ष आगे जाकर जहर के फल दें । मलका जमानी और रंगीन महल दोनों ने अपनी पूरी कोशिश के साथ अपने विरोध की चिन्ता शुरू की । हर दरबार में दोनों को अपमान का सामना करना पड़ता । हर अवसर पर, हर दावत में, हर जलसे में देखतीं कि हमारा कोई न कोई कीमती जेवर और दर्जा हमसे छीन कर, सैकड़ों दासियों और नौकरों के

सामने, दिलरस बानो को दिया जाता है । नौबत यहाँ तक पहुँची कि हर शाही मौके पर दाहिना आसन भी मलका जमानी से छिनकर दिलरस बानो को दिया जाता। अब उनके दाहिने हाथ पर बैठने को रंगीन बेगम ने इंकार कर दिया। यह ईद के दरबार का अवसर था। मलका जमानी तो सिर के दर्द का बहाना करके उपस्थित न हुई। परन्तु रंगीन महल ने अपने उस दर्जे पर बैठने से इंकार कर दिया। और मलका जमानी की अनुपस्थिति में जहाँपनाह से हाथ का स्पर्श माँगा और त्यौरी पर बल डालकर दिलरस बानो बेगम से कहा, "अपनी जगह से उठो और मेरे लिए जगह खाली करो।"

स्पष्ट है कि यह दिलरस बानो को नहीं भाया जिसका यह अर्थ हुआ कि स्वयं जहाँपनाह को अच्छा नहीं लगा। जहाँपनाह ने पहले तो जुबान से कुछ न कहा। परन्तु जब बात बढ़ी तो उन्होंने रंगीन महल को हुक्म दिया कि बैठ जाओ। रंगीन महल का अत्यधिक अनादर हुआ और वह आपे से बाहिर हो गईं। उन्होंने बैठने से इंकार कर दिया और तेजी में आकर दरबार छोड़कर बाहर चली गईं। दिलरस बानो ने मजाक के लहजे में, आग लगाते हुए कहा— "वह नहीं आवेंगी, आपके काबू की नहीं हैं!" इतना कहना था कि आग पर पैट्रोल छिड़क गया। "पकड़ लाओ" जहाँपनाह ने ख्वाजाओं की ओर देखा। "पकड़ लाओ" दुबारा गरज कर उन्होंने कहा,— चार ख्वाजा हुक्म को बजाने के लिए दौड़ पड़े। रंगीन महल सीधी मलका जमानी के पास गई। चोबदारों ने वहाँ पहुँचकर हुक्म जहाँपनाही सुनाया। याने नोटिस मिल गया कि चलती हो अन्यथा सचमुच पकड़ कर ले जावेंगे।

लाचार होकर रङ्गीन महल को वापिस आना पड़ा। जहाँपनाह जलाल की तस्वीर बने हुए थे। रङ्गीन महल उनको देख कर सहम गईं। डरकर बेचारी ने अपना सिर जहाँपनाह के कदमों में रख दिया। जहांपनाह ने कहा, "मुआफ किया हमने"। इतना

कह कर रंगीन महल का सिर ऊँचा करके और दिलरस बानो की ओर संकेत करके कहा, "इनसे भी मुआफी माँगो।"

जहांपनाह का यह कहना था कि रंगमहल के दिल पर बर्छी लगी। एकदम से आंसू निकल पड़े और इंकार कर दिया। एक बार फिर जहांपनाह के कदमों में अपना सिर रख दिया। दरबार तो पहली ही गर्ज पर खाली हो चुका था। सिवाय दासियों और नौकरों के कोई न था।

इस इंकार पर जहांपनाह का गुस्सा बढ़ता चला गया। हर तकरार पर रंगीन महल का सिर जहांपनाह के कदमों में था। यहाँ तक कि जहांपनाह ने इस जिद की पुतली को पैरों से ठुकरा दिया और हुकम दिया कि दिलरस बानो से मुआफी मांगो। लेकिन वहां तो इंकार था। ठोकरों के साथ सिर भी झुकता रहा और जहांपनाह का गुस्सा और भी बढ़ता गया। जहांपनाह ने दो दासियों को हुकम दिया कि रंगीन महल का सिर जबरदस्ती दिलरस बानो के कदमों में रख दो। हुकम की देर थी, दो दासियां आगे बढ़ीं और बड़े आदर के साथ पूरा जोर लगाकर रंगीन महल को उस ओर झुकाना चाहा तो रंगीन महल ने जोर लगा कर छुड़ा लिया।

सारांश यह कि इस वैमनस्य, जिद और बहस ने जब अधिक विस्तार पाया तो दिलरस बानो ने फिर जहाँपनाह से कह दिया "इन की जिद आपके बस की नहीं।"

बस यह कहना था कि और भी आग बबूला होगए। स्वयं खड़े हो गए और इस प्रकार गालियाँ देनी प्रारम्भ कीं कि एक अजीब प्रभाव के साथ रंगीन महल के माथे पर बल पड़ गए। एक गुस्ताखाना नजर से उन्होंने जहांपनाह की ओर देखा। अपनी आँखें अपने दोनों हाथों से बन्द करके सिर झुका दिया। याने बहरी पत्थर बन गई। जहांपनाह की हजार धमकियों का उत्तर एक खामोशी थी। क्षण भर में जहाँपनाह ने कहा कि मैं तीन बार कहूँगा अगर फिर

भी न सुना तो बस खैर नहीं। रुक-रुक कर उन्होंने तीन बार कहा, "मुआफी मांगो, मुआफी मांगो।" रंगीन महल का बुरा समय आ चुका था। उन्होंने एक न सुनी। तीसरी आवाज के पश्चात् ही जहां-पनाह के मुंह से मनहूस हुक्म निकला, "बुलाओ कोतवाल को" याने दरबार के कोतवाल को जिसका अन्य कर्त्तव्यों के साथ यह भी कर्तव्य था कि कभी-कभी बेगमों और दूसरी विवाहिताओं, स्वीकृत वांदियों और कनीजों इत्यादि को मारे पीटें।

"इसको यहीं मारो" जहाँपनाह ने कहा और कोतवाल ने कोड़े से रंगीन महल की खबर लेनी शुरू की। दो ख्वाजाओं ने जहां-पनाह के हुकम से रंगीन महल की चोटी पर हाथ डाला। जखमी शेरनी के समान रंगीन महल तड़प कर उठी और क्रोध और जोश से पागल होकर ख्वाजाओं को मारने की कोशिश करने लगी और चीख कर कहा, "मार भी डालिए मगर इस चुड़ैल से" दिलरस बानो की ओर हाथ उठा कर कहा, "मुआफी नहीं मागूँगी।"

मगर कहाँ कोमल प्रकार से पली एक बेगम और कहाँ यह तीन निर्दय ख्वाजा। पटक-पटक कर ढेर कर डाला। वह बेहोश होगई। जहांपनाह ने हुकम दिया, "इसे ले जाओ और हवालात में रखो। जब होश आये तो कह देना कि या तो मुआफी मांगे वरना सिर मूँढ़ कर कब्बे हकनी बना दिया जावेगा।" वहां दो-तीन घण्टे के पश्चात् होश आया तो जहांपनाह का हुकम सुना दिया गया कि या तो मुआफी मांगो या कब्बे हकनी बनो। सबने बहुत कुछ सम-झाया मगर वहाँ तो जिद ही एक थी। परिणाम यह हुआ कि सचमुच रंगीन महल का सिर मूँड़ दिया गया। और सचमुच वह बाग में 'कब्बे हकनी' की उपाधि के साथ पहुँचा दी गई।

× × ×

रंगीन महल...मौत के किनारे पर...खुदा की पनाह...! रंगीन महल जो इस दुनियाँ का एक रंगीन बुलबुला था और दिल के

तारों की मुहब्बत पर तैर रहा था.....एक हल्कोरे के साथ वह बुझ गया। लंकरान के शानदार महल के जगमगाते हुए कमरों में मुहब्बत के सुरीले गीतों से सारा वायुमण्डल झूम रहा था।.....कमरा प्यार की परियों की मीठी-मीठी सांस से सुगन्धित हो चुका था। खूबसूरत और चुलबुली कनीजों का जमघट संगीत के जमाव के साथ गूँज रहा था। पर ये प्रणय भरे गीत नहीं थे वरन् संगीत के पर्दों से शोले निकल रहे थे। इस रंगीन दुनियाँ में मलका रंगीन महल एक खुश-नुमा तारे के समान झमकती, मुसकराती, चांदनी में नहाती, इतराती, इठलाती, चमक में दमक के साथ, हुंकार में जहरीली नागिन-सी इस तरह बलखाती आई कि सबने अपनी आंखों से देखा कि इस जहरीली नागिन ने लंकरान के सम्राट् को डस लिया। मगर उमर भर वह समय नहीं भूलूंगी। कहाँ वह दुनियाँ थी और कहां यह सिर मूंड कर सचमुच हकनी की उपाधि देकर कुत्ते की तरह जंजीर से बाग में बंधवा दी गई।"

× × ×

रज्जन खाँ ने इतना कहा कि उनके सीने से एक दर्दनाक आह निकली। एक आँसू टप्प से गिरा, मैंने देखा। परन्तु बाकी वे पी गई। बिना कहे-सुने उठकर चल दीं। जहांपनाह के हुक्म से वह शाही नियम मुझे सिखाती थीं और अलग में पढ़ाती थीं। शायद मेरे लिए यह उत्तम शिक्षा थी।

दूसरा रहस्य

हकीम साहिब

रज्जन खाँ ने कहा कि दूसरा रहस्य पहले रहस्य से अधिक डरावना है। लंकरान सम्राट् के वंश में यह घटना सबसे अधिक निर्दयतापूर्ण और बर्बर होगी। ऐसी घटना कभी किसी के खानदान में सुनने के लिए भी न आवे।

रंगीन महल का जो हाल हुआ वह ऐसा है जिस को आत्मा नहीं मानती, वह बहुत आश्चर्यजनक था। जरा ध्यान दें कि कौन-सी रंगीन महल.....लंकरान सम्राट् की मलका और वली अहद की माँ जिसे अपने महल से निकाल कर ऐश और वैभव से दूर करके सिर मुंड़वा कर कुत्तों के समान बाग में बंधवा दिया गया। इसका सबसे पहिला परिणाम यह हुआ कि मलका जमानी बीमार पड़ गई, उनका चहरा फक होगया।

महलों के बाहर झोपड़ों में रहने वालियाँ जब शाही बेगमों को देखती हैं—हीरे और जवाहरातों से लदी हुई और बाहर से देखती हैं इनके ठाट-बाट को तो उन्हें इनसे ईर्षा होती है। कारण यह कि इनको नहीं पता कि महलों की रहने वालियाँ, धन और हीरों में खेलने वालियाँ, ठण्डी सांसें भरती हैं, तमन्ना करती हैं कि काश हम भी किसी मजदूर के घर पैदा हुई होतीं,

किसी गरीब मजदूर से शादी हुई होती जो सच्ची मुहब्बत करता तब जीवन का मजा पता चलता। अपनी मर्जी के बिना, जबरन किसी नवाब की लौंडी बनकर महलों में घुटना और सड़सड़ कर मरना इन बेगमों के भाग्य में लिखा होता है। जमीन इनके लिए दुःखदाई और आसमान दूर होता है। यह इनकी हालत होती है। निर्दयी इन पर बर्बरतापूर्ण व्यवहार करता है, इनको भेड़ों और बकरियों से भी बुरा समझता है, जरा-सी बात के लिए इनको जलील करके हमेशा के लिए इनको निकाल देता है। वे न किसी से फर्याद कर सकती हैं और न कोई इनकी सुन सकता है। दुनियाँ के सारे कानून सामने होते हैं; परन्तु ये किसी कानून से फायदा नहीं उठा सकतीं।

मैं कहाँ से कहाँ निकल गई, सारांश यह कि रंगीन महल की हालत ऐसी हो चुकी थी जो वर्णन नहीं की जा सकती। जहाँ-पनाह को स्वयं उनकी दुर्गति स्वीकार नहीं थी। इस कारण मुझे सिखा-पढ़ा कर जहाँपनाह ने भेजा कि उसे इस बात पर राजी कर लो कि वह दिलरश बानो से मुआफी मांग ले।

मैं बाग में पहुँची, खुदा की पनाह...एक मैली-सी कुर्ती पहने, सिर मुँड़ा हुआ...रंगीन महल बेगम की यह हालत देखी। मेरे रोंगटे खड़े हो गए। मैंने सलाम किया और फिर जहाँपनाह का संदेश सुनाया। रंगीन महल ने अपनी खानदानी जिद पर अड़े रहने का इरादा जाहिर किया। वह बोलीं, "मैं अपनी किस्मत पर बलिहारी हूँ। जो कुछ होना था वह तो हो चुका। मैं बिल्कुल इस चुड़ैल से मुआफी नहीं मागूँगी।" मैंने उनको बहुत समझाया मगर वहां तो एक ही जिद थी। "यह सब कुछ क्षणिक है" मुस्करा कर रंगीन महल ने कहा, "यह मुसीबत भी क्षणिक है...खुदा वह दिन जल्द लावेगा जब मैं इसका बदला लूँगी।"

यह कह कर उन्होंने अपने बेटे वलीअहद की उमर का अनुमान

लगाया और पागलों की तरह बातें करने लगी। कुछ होश में आकर बोली, "जिस दिन मेरा बेटा गद्दीपर बैठेगा, सारे दुख दूर हो जावेंगे। और उसी दिन सबसे अपने ज़ुल्मों का बदला लूँगी।"

मैंने इस मुसीबत की मारी की ओर ध्यान से देखा। आशा भी क्या बड़ी चीज है। उस पर सारा संसार टिका हुआ है। रंगीन महल भी रंगीन स्वप्न देख रही थी। मैं उनको हर प्रकार से समझा कर रह गई। वह टस से मस न हुईं। कहने लगीं, "इस दिल में यह दिन वैसे भी आना था...मैं पहले ही यह समझती थी...अब बिल्कुल मेरा डर दूर हो गया। अगर इस बला से छूटूँगी तो मेरी जान की खैर नहीं।" इसके पश्चात् इसी हालत में अपना गिल्ला भारी बतलाया। यह बदकिस्मत इसी भ्रम में गिरफ्तार थीं कि मैं वली अहद की मां हूँ इस कारण खुद ही मुझे छोड़ेंगे। मैंने अच्छी प्रकार से समझाया कि आपका यह विचार गलत है। मगर इनकी समझ के बाहर की यह बात थी। समझ में नहीं आया—हार कर झक मार कर मैं चली आई। और जहांपनाह से कह दिया कि उनका दिमाग खराब हो गया है और वह हैं रहम के काबिल। इधर तो माँ का यह हाल था उधर बेटे का हाल सुनिए। ग्यारह वर्ष की उमर ही क्या होती है। माँ की मुसीबत और जिल्लत का हाल सुना तो जो मुँह में आया बकने लगे। जैसा सुना वैसा ही कहना प्रारम्भ कर दिया। उधर चीख-चीख कर और पुकार २ कर हर आने-जाने वाले वाले को कब्बे हकनी यही कहतीं कि जब मेरा बेटा गद्दी पर बैठेगा तो एक-एक से बदला लेगा। बेटे ने जब यह सुना तो स्वयं भी उसने यही कहना शुरू किया। परिणाम यह हुआ कि धीरे-धीरे बात जहाँपनाह तक पहुँची कि वली अहद इस तरह से कहते हैं।

अब जहाँपनाह की दिनचर्या सुन लीजिए। इनका अब यह नियम बन चुका था कि रोज बाग में जाते और रंगीन महल के घावों पर नमक छिड़कते।

जब कभी भी गए और पूछा, "बोल कव्वे हकनी, क्या हाल है ?"

वह अल्लाह की बंदी जान-बूझकर हँसकर कहती, "बस उस वक्त का इन्तजार है जब मेरा बेटा गद्दी पर बैठे।"

इसे सुनकर जहांपनाह निरुत्तर हो जाते और झुंझलाते। इस पर वह खुशी का गीत गाती। मुग्राफी का जो जहाँपनाह संकेत करते तो कहती कि जिस तरह इस दिलरस बानो ने मुझे कव्वा हकनी बनवाया है, उसी प्रकार से मैं भी इसको कव्वा हकनी बनवाऊँगी।

यह मनहूस शब्द सुनकर जहांपनाह धक् से रह जाते। हमेशा हार कर गुस्से से उस गरीब को पीटने लगते। मगर मार का असर उलटा पड़ता और वह रोने के स्थान पर हँसती और यही कहती कि यह सब कुछ क्षणिक और अस्थाई है।

कब्बे हकनी के पास से जब जहाँपनाह जाते तो सूरत हारी हुई और अत्यधिक रंजीदा होती। बड़ी देर तक गुम-सुम रहते, एकांत में पड़े सोचते रहते। तात्पर्य यह कि दिल पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता। मगर खानदानी जिद थी, फिर जाते थे। हर बार सख्तियाँ बढ़ती जाती थी। हुआ यह कि दासियों ने प्रयत्न किया कि कव्वे हकनी से वे मिलना बन्द कर दें। जहांपनाह ने जाना कम भी कर दिया, परन्तु जब कभी मिलते तो परिणाम वही होता। धीरे धीरे उन पर बर्बरता बढ़ती गई। उनके मुँह पर लौंडियों और बाँदियों ने थूका। निकम्मे से निकम्मा उनको खाने को दिया। मगर वे भी अपनी जिद की पक्की थीं। एक कदम भी न उन्हें हटना था और न हटीं। दिन बीतते गए और इन पर मारें और सख्तियाँ बढ़ती गईं। दुनियाँ भर की यातनाएँ उनको पहुँचाई गईं। एक दिन दोनों ओर से तेज जुबान चलने लगी और वह चरमावस्था को पहुँच गई। जहाँपनाह ने सब कुछ कहा। परन्तु जो उन्होंने कहा वह इतना सख्त था कि जहाँपनाह भी सन्नाटे में आगए। उन्होंने

अत्यधिक मनहूस लहजे में और बहुत ही सख्त होकर जहाँपनाह से कहा, "जिस दिन मेरा बेटा गद्दी पर बैठेगा, तुम्हारी लाश को जूतों से पिटवाऊँगी। तुम्हारी जितनी प्रेमिकाएँ हैं उन सब को अपने गुलामों की बांदियां बनवाऊँगी।"

इस आक्रमण को सुनकर जहाँपनाह का चेहरा जर्द पड़ गया। एकदम से सन्नाटे में आगए और हुक्म दिया कि इसको जूतों से इतना मारो कि बेहोश हो जावे। और खुद चिन्तातुर सूरत बनाए चले आए।

बांदियों ने इस गरीब बेगम को सचमुच जूतों से मार-मार कर लहू-लुहान कर दिया और अधमरा छोड़ दिया। इस असाधारण घटना की सूचना किसी ने वलीअहद को भी दे दी। कहा जाता है कि उन्होंने भी यही बात कही।

तीसरे दिन का वर्णन है कि शाम के समय जहांपनाह अत्यन्त चिन्तातुर थे। मुझे बुलाया गया। मैंने पहुँचते ही कहा, "मेरे सहन-शाह आपको क्या हुआ? अब आपके दुश्मनों को किस बात की चिन्ता है? इस लौंडी को बेवक्त किस प्रकार से हुजूर ने याद किया।"

मुझे बैठने का हुक्म मिला। मैं दोनों हाथों से पैरों को पकड़ कर बोसे दे-देकर दबाने लगी। सारे कमरे में सन्नाटा था, मुझे उन्होंने अत्यधिक मनहूस बात कही कि कब्बे हकनी को कत्ल करवा दिया जावे। इसके अतिरिक्त मैं क्या कहती, "ठीक है, उनकी मुश्किलों को आसान करने के लिए कत्ल ही कर देना चाहिए।"

यह सुनकर वे एकदम चौंक पड़े और बोले, "उसकी मुश्किलें आसान हो जावेंगी और यही मैं नहीं चाहता। मैं तो उसको सुखा-सुखा कर और जला-जला कर मारूँगा। बुरी तरह इसकी जान लूंगा। बिल्कुल उसकी मुश्किलें आसान नहीं की जावेंगी।"

फिर एकदम से उछल पड़े और ताली बजाई। चोबदार

हाजिर हुआ। हुकम दिया गया कि सिवल सर्जन को अभी उपस्थित करो।

इतना कह कर आँखें बन्द कर लीं और फिर चिन्ता में डूब गए। कमरे में बिल्कुल सन्नाटा था। और मैं बराबर पैर दबाये जा रही थी। यकायक उन्होंने आंखें खोलीं और कराह कर उठ खड़े हुए। मैं भी खड़ी हुई। एक आह उनके सीने से निकली और दोनों हाथों को अपनी कमर पर रख कर सिर झुका कर टहलने लगे। इसी तरह टहलते रहे। चोबदार ने आकर सूचना दी कि सिविल सर्जन आगए। उन्होंने उपस्थित किए जाने का हुकम दिया।

सिविल सर्जन आए तो मुझे और उन्हें हुकम दिया कि कमरे के सारे दरवाजे बन्द करदो।

खुदा खैर करे, मैंने दिल में कहा। यह क्या मामला है। काँपती हुई मैं उठी। उधर सिविल सर्जन साहब भी बढ़े और एक एक करके सब दर्वाजे बन्द कर दिए। जब सब दरवाजे बन्द कर दिये गए तो सिविल सर्जन साहब खड़े होगए। टहलते-टहलते रुककर जहांपनाह ने कहा—

"तुम सम्राट् के नमक ख्वार हो?"

सिविल सर्जन साहब ने जमीन पर झुक कर घुटने टेकते हुए कहा, "नमक ख्वार की जान उपस्थित है।"

"बहुत ठीक" जहाँपनाह ने कहा। "हमें आपको एक सेवा बतलानी है। मगर याद रहे कि यह रहस्य तुम्हारे सीने से बाहर निकला तो ऐसी सजा दूंगा कि अगर ज़ालिम भी तुम्हारी हालत को देखे तो रो पड़े।"

मैंने देखा कि सिविल सर्जन साहब काँप रहे थे। बिल्कुल जर्द होकर धरती पर हाथ रख कर उन्होंने कहा, "जहाँपनाह का रहस्य इसी सीने में ही रहेगा और.....और कब्र तक साथ जावेगा।"

जहाँपनाह ने फिर कहा, "ठीक है" और फिर कुछ रुककर गला साफ करके कहा "यह सेवा सौंपी जाती हैं कि वली अहद का कल ही इलाज प्रारम्भ कर दो। इसको पेट की खराबी है। इस कारण कल ही इसका इलाज शुरू कर दो। और हफ्ता भर के अन्दर अन्दर बिना किसी तकलीफ के बहुत ही आराम के साथ किसी जहर के साथ इसका खातमा करदो।"

खुदा की पनाह ! ये डरावने शब्द सुनकर मैं चौंक नहीं पड़ी। यही भला हुआ। सिविल सर्जन साहिब का चहरा मिट्टी के समान पीला पड़ गया और ऐसा प्रतीत हुआ जैसे इन पर बिजली गिरी हो।

सिविल सर्जन साहिब ने दौड़कर अपने आप को जहाँपनाह के कदमों में गिरा दिया। हाथ जोड़कर साफा अपने गले में डाल कर बोले "मेरा खून मेरी गर्दन पर। इस गर्दन को अभी किसी जल्लाद को सौंप देने का हुकुम दे देवें। हुकम न मानने की यही सजा है। मैं हुकम न मानने वाला हूँ। मुझे जल्दी बड़ी से बड़ी सजा का हुकम दिया जावे। यही मेरी अपील है।"

जहांपनाह ने संजीदगी से कहा "मतलब ?"

सिविल सर्जन ने कहा, "हुकम न मानने की सब से बड़ी सजा है और वह है 'मौत'।"

"आखिर क्यों ?" जहांपनाह ने पूछा।

सिविल सर्जन साहब ने कहा, "मेरे लिए इस हुकम का मानना असम्भव है। मैं और मेरा खानदान अपने स्वामी और उसके उत्तराधिकारियों की रक्षा में जान देना जानते हैं। मैं इस सेवा को बिल्कुल नहीं कर सकता और खुदा करे इस हुकम को न मानने की सजा में मैं कतल कर दिया जाऊँ।"

"यह हिम्मत !" जहांपनाह ने गर्ज कर व अ निकाल कर कहा, "हुकम न मानने की सजा जानते हो।"

"जहांपनाह" ठीक प्रकार से लेकिन बड़ी हिम्मत के साथ कहा।

"कुछ डर ?" जहाँपनाह ने पूछा।

"अल्लाह का डर है।"

"बादशाह कोई चीज नहीं !"

"फिर भी अल्लाह.....जहाँपनाह !"

"और फिर हुकम न मानना.....तुम्हारी इतनी हिम्मत ! जानते हो कि क्या सजा दूंगा ?"

"जानता हूं।" सिविल सर्जन साहब ने फिर हिम्मत बाँधकर कहा।

"मगर मानोगे नहीं।"

सिविल सर्जन साहब बिल्कुल चुप रहे इस बार।

"गुस्ताख, बदतहजीब.....गद्दार, नकम हराम..." गरज कर जहांपनाह ने कहा, ऐसे कि सिविल सर्जन साहिब मारे डर के कांपने लगे।

"कोई है" जहाँपनाह ने ताली बजाकर कहा—"कोई है ?"

दरवाजा बन्द था और कोई वहाँ नहीं था। इस कारण लपक कर मैं सामने आई। जहांपनाह ने कहा, "बुलाओ।" मैंने फुर्ती से बढ़कर दरवाजा खोला। चार चोबदार 'हाजिर, हाजिर' करते दौड़े। जहांपनाह ने सिविल सर्जन साहिब की तरफ इशारा करते हुए कहा, "गला घोंट दो अभी इसका.....।" यह कह कर बराबर वाले कमरे की ओर उंगली उठाई। एक चोबदार ने तेजी से कमरे में जाने को दरवाजा खोला। तीन चोबदार सिविल सर्जन की ओर झपटे। सिविल सर्जन साहब अपनी जगह से हिले नहीं, मगर इतना जुबान से निकला, "मेरी लाश।"

जहांपनाह ने जवाब में इतना कहा, "गला घोंटकर छत पर से

नीचे फेंक दो और लाश को इसके घर पहुँचवा दो। और देखो, दो घंटे के अन्दर ही अन्दर दफन हो जावे।"

सिविल सर्जन साहब बड़ी मरदानगी और बहादुरी से चोबदारों के साथ मौत का सामना करने लगे। कमरे में दाखिल ही हुए थे कि जहांपनाह ने कहा, "खबरदार! गर्दन पर या किसी और जगह पर कोई निशान न आवे।" चोबदार ने उत्तर में कहा, "जहांपनाह! निशान कहीं पर भी नहीं आवेगा।" साथ ही सिविल सर्जन साहब के गिराये जाने का भयातुर शब्द सुनाई पड़ा। जहांपनाह ने मुझसे कहा, "कम से-कम एक बार पूछ लेना। शायद मान जावे।"

यह सुनकर मैं तेजी से लपकी। चोबदार सिविल सर्जन को दाबे चारों खाने चित्त लिटाए हुए थे। एक जालिम एक बहुत ही मुलायम तकिए से उनका मुंह दाब कर सांस रोक रहा था। मैं तड़प कर पहुंची। मैंने जल्दी से जहांपनाह का हुकम सुनाया। तकिया सिविल सर्जन के मुंह पर से हटाया गया। बड़े जोर से उन्होंने सांस लिया। मैंने पूछा "कहिए! क्या राय है?"

सिविल सर्जन साहिब ने बहुत ही परेशानी में कहा, "मैं ठीक रास्ते पर हूँ। मुझसे जहांपनाह के हुकम का पालन बिल्कुल नहीं होगा। जल्दी करो खुदा के वास्ते.....जल्दी...जल्दी।"

इसके पश्चात् तकिए से अच्छी प्रकार से दाब कर चोबदार उनके ऊपर चिपट कर बैठ गया था। मैंने देखा कि सिविल सर्जन साहब हिले तक नहीं; परन्तु जल्दी ही उनका सीना थरथराया...सांस घुटने लगा। बदन फिर थर्राने लगा। ऐसा मालूम होता था कि दुख को यह पीते जा रहे हैं। देखिए तो, यह दृश्य कितना दर्दनाक और भयातुर था! याद आते ही रौंगटे खड़े हो जाते हैं। सिविल सर्जन साहब एक कौमी आदमी थे। तकलीफ से मुर्गे के समान फड़-फड़ाना शुरू किया।...ऐसा कि चारों आदमियों के काबू से निकल-जाते। इन के ऊपर दबाव बढ़ता गया। परन्तु अनजाने में उन्होंने

ऐसा जोर मारा कि तकिया उनके मुँह से हट गया और वह घुटी हुई भयातुर आवाज निकली कि मेरे बाल खड़े हो गए। मगर चोबदारों ने बड़ी निर्दयता के साथ उनको रगड़ डाला। यह नजारा बहुत बुरा था। मैं सब कुछ भूल कर डाक्टर साहब को मौत के पंजे में जकड़ा हुआ छोड़कर ऊपर आगई।

× × ×

रज्जन खाँ की यह कहानी अभी यहीं तक पहुँची थी कि शहजादी साहिबा दो-तीन कनीजों के साथ हँसती और कुछ बातें करती हुई ऊपर आ गईं। उनकी चाल-ढाल और चेहरे से ऐसा आभास हुआ कि कोई असाधारण घटना घटी है।

बहुत जल्दी ही बात पता चल गई। शहजादी साहिबा के हाथ में वही चमकदार बड़ा-सा हीरा था जो मैंने शादी की रात को उनके जूते पर से उखाड़ लिया था। और खानपोश का बड़ा-सा मोती भी था। बात वस्तुतः यूँ थी कि जैसा पाठकों को पता है ये दोनों वस्तुऐं इस खाकसार ने उस दिन उड़ा ली थीं और कई कारणों से इस घटना को शहजादी साहिबा से गुप्त रखा था। ये दोनों चीजें मेरी जान के लिए एक बला बन चुकी थीं। कुछ समझ में ही नहीं आता था कि महल के किस कोने में इनको छुपाऊँ। बेचने जा नहीं सकता था और छुपाने की कोई जगह न थी। जगह-जगह देखता फिरता। एक बार पुड़िया बांध कर एक संदूक के नीचे रख दी। दूसरे दिन जो बली अहद बहादुर वहां आए तो संदूक दूसरी ओर रखा था। चुप का चुप रह गया। वस्तुतः इस चोरी के कारण जिस रोज यह हुई थी उसी दिन महल में खलबली मच गई थी। पश्चात् बहुत पूछताछ होती रही। मगर कुछ पता नहीं चला था।

अब यह वस्तुएँ एक सुनार के यहाँ से मिली थीं। उसे पकड़ा गया। उसने एक आदमी का नाम बताया कि उसने दी हैं। वह पकड़ा गया। उसने हमारे यहां की एक कनीज का नाम बताया। सुपरिंटेंडेन्ट साहिब दोनों वस्तुओं को साथ लेकर जहाँपनाह के पास

पहुँचे। उस कनीज का नाम लिया गया। जहाँपनाह ने हुक्म दिया कि इस की छानबीन हमारे यहाँ की जावे। वे यहाँ आए थे और मुझे इस की सूचना मिल चुकी थी। कनीज को भी शहजादी साहिबा ने आड़े हाथों लिया तो उसने कहा मुझे संदूक के नीचे से मिली थीं। अब वह पकड़ी गई। उसने दो अपराध किए थे। एक तो चोरी का और दूसरे उसे बेचने का। कनीज बाहर सुपरिटेन्डेंट साहब को उत्तर दे रही थी।

अब स्पष्ट है कि इस मुआयने से मैं कितना बेचैन था। मुझे डर था कि कहीं असली मुआमला न खुल जावे। और बिना बात की बदनामी हो। शहजादी साहिबा मारे गुस्से के आग बबूला हो रही थीं। और मामले को रफा-दफा करने के स्थान पर कनीज को पूरी पूरी सजा दिलवाने पर अड़ी हुई थीं। उनका ख्याल था कि कनीज झूँठी थी और संदूक से मिलने की बात इसने वैसे ही गढ़ी है।

मैं इसी उधेड़-बुन में था और एस० पी० के पास जाने ही वाला था कि पता चला कि तीन-चार कनीजों के बयान को सुनकर वे इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि वह ठीक कहती है। चोरी किसी और ने की और संदूक के नीचे पुड़िया बांध कर रख दी। हाल पता करने मैं बाहर गया। एस० पी० साहब याने उन्हीं भूतपूर्व कोतवाल साहिब ने मुझे फौजी सलाम किया। मुझे भी हंसी आगई। मेरा हाल पूछा। मैंने बैठने को कहा। वे बैठ गए। मैंने किस्सा छेड़ने की नियत से कहा, "कहिए, क्या बात है?"

"असली चोर का पता चल गया।" कोतवाल साहिब ने मुस्कराकर कहा।

मैं कुछ घबराया। वे फिर बोले "जब आप शहजादी के पास पहले दिन आये थे तो अपराधिनी एक दिन अपने घर जाकर अपने दोस्त से मिलकर दूसरे दिन आई थी। और यह पहले ही साबित है कि यहाँ आने के पश्चात् उसने वह हीरा अपने दोस्त को दिया।

इस कारण जब वह आई तो उसके पास यह हीरा नहीं था। पर अभी मैंने जो दूसरी कनीजो से बातें कीं तो पता चला किसी दूसरी कनीज़ के पास भी यह हीरा नहीं था। जब आप यहां पधारे हैं तो उस समय काफ़ी मौका था। मगर हीरा उनके पास होता तो वह घर पहुँच चुका होता।

"फिर कौन लाया ?" मैंने कुछ हैरान-सा होकर कहा।

कोतवाल साहिब मुस्करा कर बोले, "सिवाय हुज़ूर के इस कला का प्रदर्शन कौन कर सकता है ! और किसी की हिम्मत नहीं और आपने शायद शादी वाले दिन अपने हाथ की सफाई दिखलाई। इसमें बहस की अब कोई गुंजाइश नहीं।"

मैंने कहना चाहा, "मगर...।"

वे बोले "मुझसे अधिक हुज़ूर वाला को कौन पहचानता है ? छोड़िए, मैं अब न कोतवाल हूँ और न यह कोतवाली।"

मुझे भी हंसी आई और मैं समझ गया कि अब आगे जिद करनी बेमतलब है। और चुपके से कहा कि इस विषय में किसी पर सख्ती न हो। वे मुस्कराते हुए और सिर हिलाते हुए चले गए। मैं अन्दर जा आया तो देखता हूँ कि गरीब मारी जा रही है। और शहजादी साहिबा आग बबूला हो रही हैं। मैं शहजादी साहिबा को एक अलग कमरे में ले गया और हँसकर इस बात को कह सुनाया।

वे घबराकर बोलीं, "तुमने ?"

मैंने कहा "हाँ, हमने।"

"क्यों ?"

मैंने कहा, "चार चाँटे की मार पड़ी थी हमारे ऊपर। हमने सोचा कि यही ठीक है, ले उड़ेंगे अगर अवसर मिल गया तो...।"

शहजादी साहिबा खिसियानी होकर रह गईं। लगीं कहने—"तुम बड़े वैसे आदमी हो।"

मैंने कहा, "हम जैसे भी हैं, यह स्पष्ट है। अच्छा हो इस ग़रीब को छोड़ दो।"

अब चली चोर की बीबी बेगुनाह चोर को मुआफी देने। मैं भी साथ चला। वफादार कनीजें चोरी करने वाले को बुरा-भला कह रही थीं और कोस-कोस कर अपनी इस बेगुनाही को सिद्ध करने के लिए कह रही थीं।

एक बोली "कीड़े ही पड़ेंगे उसकी कबर में जिसने यह चोरी की।" दूसरी बोली, "जिसने यह चोरी की अल्लाह उसकी बुरी गत बनाए।" तीसरी बोली "मारे जूतों के उसका मुँह तोड़ दिया जावेगा।" एक और छबीली बोली "हैजा समेटे उसे।"

आखिर कहाँ तक वह सहन करती चली जाती मेरी शहजादी। डपट कर बोली—

"चुप मरदूद कहीं की! बके जारही हैं! खबरदार जो कोई बोली तो!"

एकदम सन्नाटा होगया। शहजादी साहिबा ने कनीज़ को मुआफ कर दिया। उसको समझाया कि असली चोर कोई भी हो तूने भी तो चोरी की है। वह मान गई। फिर उसके यार के बारे में पूछा। उसने कहा कि यार-वार कुछ नहीं, वह तो उसका सही मंगेतर है। निकाह की स्वीकृति के लिए जहाँपनाह के पास उसकी अर्जी भी पहुँची हुई है उसकी अम्मी की ओर से...

सारांश यह कि मामला रफा-दफा हो गया।

तीसरा रहस्य

रज्जन खां ने किस्सा जहाँ से छोड़ा था, वहीं से प्रारम्भ कर दिया—कहाँ तो मैं इनको मौत के पंजे में छोड़ कर आई थी पर थोड़ी देर बाद देखते हैं कि मैं हॉल से वापिस जो आई तो वह भले-चगे खड़े हुए हैं । जहांपनाह इन्हें विदा कर रहे थे । उनका जीवन अभी बाकी था । बिल्कुल मौके पर जहांपनाह वहाँ पहुँचे और हुक्म दिया कि छोड़ दो । कुछ भी हुआ जहांपनाह डाक्टर साहिब से प्रसन्न थे । उनको तरक्की देकर विदा किया । चोबदार को हुक्म दिया कि हकीम साहिब को बुलाओ ।

हकीम साहब बहुत दिनों से न बुलाए गए थे । इन की तनखाह भी कम कर दी गई थी । बहुत दिनों से इनके लिए दरबार बन्द था । सरकारी हुक्म पाते ही आए । जहांपनाह ने उसी प्रकार से दरवाजे बन्द करवाए और उसी प्रकार से कहा कि वली अहद को खत्म कर दो । हकीम साहब ने पहले तो घबराहट जाहिर की परन्तु जब देखा कि जहाँपनाह गुस्सा हो रहे हैं तो बोले—

"मुझे हुजूर के हुक्म बजाने में कोई रुकावट नहीं । परन्तु यह मालूम होना चाहिए कि हुजूर वाला ने अच्छी प्रकार से आगा पीछा सोच लिया है या नहीं ।"

हकीम साहब इतना ही कह पाए थे कि जहांपनाह उन पर टूट पड़े "बदतहजीब, गुस्ताख...।"

हकीम साहब बौखला कर घुटनों के बल गिरे और तुरन्त राजी हो गए। शायद वे इस बात के इन्तजार में ही थे कि कोई ऐसी सेवा उनको सौंपी जावे जिससे कि वे जहाँपनाह की नजरों में चढ़ सकें। उनको इनाम देकर विदा किया गया। उनके जाते ही एक बटन दबाया गया और दिलरस बानो को सूचना पहुँची। वह तीर के समान भागी हुई आई और हवा हो गई। जहांपनाह ने जल्दी ही अपने आपको दिलरस बानो के इश्क में भुला दिया। उसे अपने बाजुओं में किया और भूल गए कि अभी-अभी क्या हुकम देकर चुके हैं। एक बाल से बारीक आवाज अंग्रेजी गीत के साथ कमरे में गूँज उठी। वे भूल चुके थे कि कल क्या होने वाला है।

वली अहद की कोई अधिक उमर नहीं थी। फिर भी नमक ख्वारों और हमदर्दों ने खतरे की सूचना उन्हें दे दी थी। और वे सब जानते थे कि क्या हो रहा है। और शायद इन लोगों ने इस बच्चे को ऐसा समझा दिया कि उसको भी पता चल गया। भागने का प्रयत्न किया तो भागने नहीं दिया गया। और फिर भाग्य की बात देखो। तबियत कुछ खराब हो गई और बराबर बुखार आना प्रारम्भ हुआ। वे जानते थे कि सिविल सर्जन उनको बचा लेंगे इस कारण उनका ही इलाज किया गया। सदा सिविल सर्जन साहब ही इलाज करते थे। समझ में नहीं आता कि इतनी सी छोटी उमर के बच्चे को यह समझ और अकल कहां से आ गई। डाक्टर साहब को पकड़े रहते थे कि मेरे पास से मत जाओ। मगर यह सब बेकार था, तीसरे ही दिन हकीम साहिब का इलाज शुरू हो गया।

मुसीबत तो तब आई जब हकीम सहाब की दवाई देखते ही उसने चिल्ला कर कहा, "इसे मत पिलाओ। यह जहर है।" शोर मचाना प्रारम्भ किया। परन्तु बच्चे को तो जबरदस्ती भी दबा

पिलाते हैं। इस कारण कुछ बेहोशी की और दूसरी प्रकार की दवाइयाँ पिलाई गईं। जहांपनाह देखने तक न आए। इन दवाइयों का असर यह हुआ कि वली अहद नींद की दुनियाँ में ही होकर रह गए। मगर जब कभी भी होश आता तो डरावनी शकल बना कर चारों ओर देखते। सिविल सर्जन को बुलाते और कभी अर्ध चेतनावस्था में 'जहर! जहर!' की चीखें लगाते।

अन्त में वह दिन भी आगया, हलाहल-जहर तैयार किया गया। और सितम पर सितम यह हुआ कि अन्तिम बार जहाँपनाह फिर कब्बे हकनी के पास गए—इस विचार से कि शायद वह मुआफी मांग लेवे। और शायद इस कारण भी कि और गुस्सा आजाए और जो कुछ करना हो उसे पक्के रूप से कर दिया जावे।

दुर्भाग्यवश यह अन्तिम प्रयत्न बहुत ही असफल रहा। वह बातें हुईं जो पहले कभी भी न हुई थीं। इस प्रकार से कब्बे हकनी ने दाँत पीस २ कर जहाँपनाह को डराया कि तुम्हारी लाशकी दुर्गत बनाऊँगी। दिलरस बानो के विषय में भी इसी प्रकार की बातें कहीं। जहांपनाह गुस्से में तो थे ही। लौंडियों से पिटता छोड़कर अंगूठी लाए जो कब्बे हकनी को शादी के अवसर पर निशानी के रूप में दी गई थी और मुहब्बत और प्यार की अनेकों कसमें खाई थीं। और कहा, "देख इस मुहब्बत के हीरे की निशानी से उस नमुराद मुहब्बत के फल को खत्म कर दूँगा।" रंगीन महल गरीब इस धोके में थी कि वली अहद फिर वली अहद ही है। उसको तनिक भी चिन्ता नहीं थी कि जो कुछ कहा जा रहा था वह ठीक भी हो सकता था।

इस अंगूठी का सचमुच हीरा निकाला गया। इसे तैयार किया गया। पहले तो उस लालची हकीम ने जो हलाहल तैयार किया था वही जान लेने के लिए काफी था। परन्तु बदला भी तो कोई चीज है। जहाँपनाह ने खुद अपने हाथ से पीसा हुआ हीरा शर्बत में मिला कर

अपने दिल के एक टुकड़े को पिलाकर दिखाया जो आज तक न कभी किसी बाप ने किया होगा और न करेगा।

जहर पिलाने को तो पिला आए। मगर जब कमरे में दाखिल हुए तो चहरा सफेद था। बदन में एक कंपकंपी लगी हुई थी। कराह कर बैठ गए। जैसे सचमुच कमर टूट गई हो। आंखों से जबरन आँसू निकल पड़े। जल्दी से आँसू पोंछते हुए कहा, "दुशाला उठा दो।" कांपते कराहते करवटें बदलते सो गए। जब उठे तो वली अहद गुजर चुके थे।

कुछ अजीब ही हाल था। यह खबर सुनकर तन में उनके फिर चुस्ती आ गई। दौड़े हुए कब्बे हकनी के पास पहुँचे और हँस हँस कर उसको मुबारिकबाद दिया और छेड़ना प्रारम्भ किया। प्रकृति के खेल भी कितने निराले हैं। कब्बे हकनी ने बिल्कुल विश्वास नहीं किया। और दुआएँ देनी प्रारम्भ कीं कि खुदा उसको हजार वर्ष सलामत रखे। खुदा उसको लंकरान की गद्दी पर शीघ्र बैठाए। मतलब यह था कि जहाँपनाह नाराज हों। परन्तु नतीजा कुछ और ही निकला। एकदम से दिल फूट गया और दहाड़ें मारते हुए और रोते हुए गालियाँ देते हुए लौंडियों से कहा, "मारो इसके जूते।" जूतों की मार के साथ ही इस शहजादी को अपने जवान बेटे की लाश देखनी पड़ी। एक हाय का नारा मारकर पछाड़ खा कर ऐसी गिरी कि फिर सांस नहीं लिया।

माँ और बेटे दोनों आगे पीछे समाप्त हो गए। जबकी यह कथा है तब जहांपनाह की कोई सन्तान नहीं थी। हुकम हुआ कि पूरा शोक किया जावे। खुद जहाँपनाह से लेकर एक-एक ने अपने प्यारे वली अहद का शोक मनाया। उस गरीब की हड्डी भी अब नहीं मिली होगी लेकिन तबीयत का वह इतना नर्म था। लोगों का अब तक विचार है कि वह उत्तम बादशाह होता। मगर तकदीर का लिखा पूरा होता है। ताज और सिंहासन तो हमारे वली अहद को

लिखा था। फिर अल्लाह ने उनको भी ऐसा बनाया कि चिराग लेकर भी ढूँढ़ो तो ऐसा कहीं न मिले। तबियत में एक रत्ती भर जिद तो है। क्यों न हो बेटे किसके हैं!

अब आपने इस खौफनाक राज़ को जान लिया है। वैसे लंकरान में कौन नहीं जानता कि वली अहद मरहूम बाप की जिद और गुस्से की बलि पर चढ़े थे। जहाँपनाह के खानदान के अजीब इतिहास को जानने के लिए इससे बढ़कर कोई दूसरा रहस्य नहीं।

इनक़लाब

कहने को तो मैं खुर्पा था। परन्तु मैं जिलट के ब्लेड के समान हो रहा था। आप स्वयं अनुमान कीजिए। कहीं खुर्पे भी अंग्रेजी बोलना सीख सकते हैं? या यूँ कहिए कि क्या खुर्पे भी अँग्रेजी वातावरण में उन्हीं जैसा व्यवहार कर सकते हैं। क्या वे उनके फैशन को उसी स्वाभाविक ढंग से अपना सकते हैं? यह बहुत मुश्किल बात है। क्या आप मान सकते हैं कि इन लोगों की बीवियों और लड़कियों के साथ नाच नाच सकते हैं। बिल्कुल नहीं। बस! मैं कहना चाहूँगा कि अब मैं बिल्कुल खुर्पा नहीं रहा था। बल्कि मेरा व्यवहार और सभ्यता इस प्रकार की बन चुकी थी कि मैं लंकरान के शाही खानदान में पानी और शक्कर के समान मिल गया था। मेरी यह अवस्था डण्डे के जोर पर ही हुई थी। वैसे भी तो देखिए कि लगभग एक दर्जन उस्ताद मुझे पढ़ाने के लिए लगाए जा चुके थे। वे मेरी जान सदा खाते रहते और सिर पर सवार रहते। और अगर मेरी प्यारी शहजादी का प्रेम मुझे प्राप्त न होता तो मैं भी कब का वहाँ से भाग गया होता। ये मूजी उस्ताद सब मेरे पीछे ही पड़े रहते। एक था जो मुझे मादरी जबान सिखाता था। एक ऐसे थे जो अंग्रेजी पढ़ाते और खूब

बजे रहते। जैसे वे घोटकर उसे मुझे पिलाना चाहते हों। इनके अतिरिक्त उर्दू-फारसी को पढ़ाने वाले अलग थे। फिर ये लोग जहांपनाह को उलटी-सीधी शिकायतें लगाया करते थे। और कई बार तो इन मसखरों ने जहाँपनाह का कान इतना भरा कि मैं तो पिटते-पिटते बचा था। फिर आप ही अनुमान कीजिए कि ऐसी दशा में मैं भला खुर्पा कैसे रह सकता था। यह मेरे जीवन में एक इन्कलाब था, एक क्रांति थी जिसने मुझे खूब बदल दिया। और साथ यह इस में प्रेम की सुनहरी डोर भी लगी थी। मैं असाधारण रूप से आराम तलब हो गया था। बाहर की दुनियाँ अब मेरे लिए नरक बन चुकी थी। वही राजमहल मुझे प्रिय था। चाहता था कि शहजादी के शृङ्गार का सामान ही तैयार करता रहूँ और अपना मनोरंजन भी करता रहूँ।

इधर मेरी तो यह हालत थी कि मैं बिल्कुल नकारा हो चुका था। उधर मेरे लिए एक बला तैयार हो चुकी थी। जहाँपनाह और वली अहद मुझे फौज का जनरल बनाना चाहते थे। पहले तो मैं समझता था कि जनरल बनना बहुत आसान है। बना दिया जायेगा और हम बन जायेंगे। परन्तु अनुभव से पता चला कि जनरली से अधिक कठिन और कोई काम नहीं। इस जनरली के पीछे मेरी जान आफत में पड़ गई। आप भला ध्यान दीजिए। हमें ऐसी जनरली कैसे पसन्द आ सकती है? चाहे नींद पूरी होवे चाहे न होवे, आधी रात हो या दिन.....सारा प्रबन्ध करना और सेना को उल्टा-सीधा अभ्यास कराना कितना मुश्किल है? हम तो कभी से इसका पीछा छोड़ चुके थे। अगर कहीं पिटने का खटका होता तो हम पिट भी लेते; परन्तु यह सब नहीं हो सकता और शाहजादी साहिबा को भी हम कैसे मुँह दिखलाते। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि मजनू को भी यह जनरली पेश की जाती और उसे करनी पड़ती तो लोगों

के सामने यह किस्सा ही न आता। एक-दो महीने में ही लैला के इश्क को छोड़ कर ऐसा भागते कि कुछ भी दिखाई न देता। वह तो हमीं थे जो अड़े हुए थे। मुझे लंकरान की सेना में लैफ्टीनैंट का पद दिया गया। और लैफ्टीनैंटी से जर्नेली को प्राप्त करने के लिए अभी बहुत-सी सीढ़ियाँ चढ़ना बाकी था। यह काम कोई आसान नहीं था। उधर जहांपनाह ने मेरे उस्तादों को इतनी कठिन हिदायतें दीं कि सारी जर्नेली मुझे घोट कर पिला दी जावे। वाह! यह भी अजीब मुसीबत थी। उस अंग्रेज ने मेरी जान को बहुत ही आफत में डाल दिया। बहुत ही सख्तियाँ करता। फौजी सबक पढ़ाता। अगर सबक याद न होता तो उल्टी-सीधी सुनाता...एक दिन मैंने भी चार चपत लगा दिए उसके। फिर एक दिन राइफल में कारतूस रख कर उसको दिखलाए तो अटैंशन हो गया। मैंने उसे कह दिया कि अगर कोई उल्टी-सीधी जाकर लगाई और हमारे रंग में भंग डाला या हमारे साथ सख्ती की तो ईसामसीह के पास भेज दिए जाओगे। दबने को तो वह दब गया, पर मेरी रिपोर्ट जहांपनाह के पास जा कर की और इस्तीफा दे दिया। बात बढ़ती चली गई। और जब जहांपनाह को असली बात का पता चला तो उन्होंने अपना डण्डा सँभाला... मैं बाल-बाल बचा (पिटाई नहीं हुई)। परन्तु जहांपनाह के दिल में एक बात घर कर गई। वह यह कि मैं यह सबकुछ अपनी प्यारी शाहजादी के कारण ही करना नहीं चाहता। शाहजादी के कारण ही मैं आराम पसन्द हो गया हूँ। उन्होंने अन्दाजा लगाया कि मैं तबतक ठीक नहीं होऊँगा, जबतक शाहजादी को मुझसे अलग नहीं किया जाता।

अब किस्मत कहिए या कुछ और। इस विषय में एक और घटना घटी। मेरी नालायकी के चर्चे दिन-रात होते ही थे। लोग यह भी जानते थे कि अपनी बेगम याने प्यारी शाहजादी से मुझे कितना लगाव है, मुहब्बत है। इसके पश्चात् लोगों ने जहाँपनाह को जाकर

समझा दिया कि मेरी मालायकी शाहजादी की मुहब्बत के ही कारण है। साधारण जनता को तरह-तरह की बातें बनाने का मौका भी मिल गया। इसका परिणाम कुछ और ही निकला।

ये विषय अभी इसी प्रकार चल ही रहे थे कि वली अहद बहादुर ने मेरा फौजी इम्तिहान लिया जिसमें,बुरी तरह से मैं असफल रहा। परिणाम यह कि वे मुझसे बहुत नाराज हुए। मेरी शिकायत जहांपनाह से करदी। तीसरे ही दिन वली अहद साहिब ने मुझे अपने महल में बुलाया। मुझे वहाँ उन्होंने बुरी तरह डांटा ही नहीं, परन्तु इशारों में यह भी कह दिया कि शाहजादी साहिबा को अलग महल में रखने का भी प्रस्ताव है। चलते-चलते मुझसे यह भी कह दिया कि शाहजादी साहिबा का शौहर रहने के मैं लायक नहीं। मैंने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। इतना अनुमान लगाया कि यह बात तो केवल शाहजादी ही बतला सकती है। यह भी विचार में आया कि ऐसी बातें तो कई बार सुसराल वाले बिना लड़की को बतलाए किया ही करते हैं। परिणाम यह हुआ कि हूँ-हाँ कर के कोई रात के ग्यारह बजे अपने महल में लौट आया। बाहर के एक सोफे पर सिगरेट सुलगा कर तकिया लगाके बैठगया। कपड़े उतारने वाली सेविका आई तो मैंने उस के ऐसी लात मारी कि बाल-बाल बची। "चली जाओ।" मैंने उसे डाँट कर कहा और वह हक्की-बक्की हो कर अन्दर भागी। मैं इसी ध्यान और चिन्ता में था कि न जाने वली अहद ने जहांपनाह से मेरी क्या शिकायत की होगी। और न जाने वहाँ से अब क्या हुक्म दिया जाएगा। मैं इसी बेखबरी में डूबा हुआ था कि पीछे से किसी ने मेरे सिर पर एक चपत मारी। उसके चटाके से हाल गूँज उठा। मैं उछल पड़ा कि यह मुसीबत मेरे ऊपर किधर से आई है। क्या देखता हूँ, पुराना यार कुमराउद्दीन है..... वही कुमराउद्दीन जिसके साथ मैंने शाही बाग को खसूटा था। मैं तो बचगया और इसको एक लम्बी कैद भुगतनी पड़ी। जरा ध्यान

दीजिए, यह किस्मत नहीं तो क्या थी। उस बाग के खसूटने के बदले कुमराउद्दीन को जेल मिली और मुझे शाही दामादी।

यह तो बड़ा भारी हमला था। इस जगह पर मैंने उसे बुरा-भला कहने और डांटने के स्थान पर कुछ न कहा और उस गँवार लंगोटिया यार से गँवारों की तरह ही मिला। याने सोफा फांद कर एक के बदले दो घूँसे लगाए और फिर बात की। गाली देकर पूछा कि तू किधर से टपक पड़ा। उसने और भी मोटी गाली देकर अपना हाल बताया। वह यह कि कैद भुगत कर इसी हफ्ते जेल से छूटा हूँ। बुरी हालत थी। उन लोगों ने जिन्दगी बरबाद कर दी थी। इस कारण इस समय भी भूखा था। मैंने अपना हाल सुनाया। उसके लिए खाना मँगवाया। एक जोड़ा कपड़े का दिया और अपना विशेष सलाहकार बनाने का वचन दिया। बड़ी देर तक बातें होती रही। इन्हीं बातों के दौरान उसने एक ऐसी बात कही कि मैं और भी परेशान होगया। बतलाया कि शहर में यह खबर गर्म है कि शाहजादी को मुझसे अलग करके तलाक़ दिलवाया जावेगा।

इस निकम्मी खबर ने किस तरह से जनसाधारण में घर किया, इसका उत्तर कुमराउद्दीन तो नहीं दे सका। परन्तु मेरा ध्यान वली-अहद बहादुर की ओर गया। उन्होंने कहा था कि स्थाई शौहर रहने के मैं योग्य नहीं हूँ जब कि मैं उसका शौहर ही था। स्पष्ट है, कुमरा-उद्दीन से यह खबर सुनकर मैं किस भ्रम में पड़ गया होऊँगा। कुमरा-उद्दीन तो चला गया परन्तु मुझे यह न पता चल सका कि वह कैसे आया था, कहाँ छुपा रहा और किस रास्ते से चला गया। उसके जाने के पश्चात् मेरा दिल बहुत घबराया और सारा हाल मैंने शाहजादी को बतला दिया। यह सब सुनकर उनके सुन्दर मुखड़े पर भी परेशानी की बदलियाँ छा गईं। मेरी नालायकी के चर्चे आजकल दरबार में बहुत होते थे। तरह-तरह की बातें महल से उठती थीं। परन्तु इस प्रकार की बातें महलों से उठनी और फैलनी कोई अजीब

बात नहीं। मैं अच्छी तरह से जानता था कि जिस प्रकार से मित्रों में मुझे इज्जत मिली, उसी प्रकार से वह मेरे पास से जा भी सकती है। शाही दामादों की खातिर भी बहुत होती है और जब गति बनती है तो वह भी खूब बनती है। क्या मेरी गति बनाई जाएगी ? क्या शाहजादी.....मेरी प्यारी शाहजादी मुझसे छीन ली जावेगी ?..... यह प्रश्न मुझे परेशान कर रहे थे। मैं सारी रात इसी उधेड़-बुन में न सोया था। रात को मैंने स्वप्न देखा कि वली अहद बहादुर मुझसे शाहजादी को छीनने आरहे हैं। स्वप्न में ही पूरे जोर से मैंने उनकी नाक पर एक घूसा मारा कि मेरी आँख खुल गई। मैं देख रहा था कि मेरा हाथ उस कोच के पाये पर जोर से थमा हुआ था, जिस पर कि मैंने सारा जोर दे मारा था।

सुबह हुई तो मैं निरन्तर चिन्तातुर था। शाहजादी... मेरी प्यारी शाहजादी भी मुर्झाई हुई थी। मैंने एकान्त में लेजाकर शाहजादी साहिबा का हाथ पकड़ा और आँखों में आँखें डाल कर अपने भ्रम को उन पर प्रकट किया। अपने सारे हाल का वर्णन किया और उसकी मुहब्बत का प्रमाण मांगा। शाहजादी साहिबा की अवस्था असाधारण हो चुकी थी। उन्होंने अपनी पाक मुहब्बत का हर प्रकार से यकीन दिला दिया। मौत को ही बतलाया कि वही हम दोनों को दूर कर सकेगी। साथ रहने की बहुत-सी कसमें खाईं। अपने प्यार के विषय में हमने बहुत से वायदे किए। शाहजादी साहिबा ने कहा कि अगर खुदा न करे ऐसी बात सामने आजाती है तो वे शाही ऐश और आराम को छोड़ देंगी! मेरे साथ बाहर चल कर... लंकरान से दूर चल कर मुहब्बत करेंगी। दोनों मेहनत-मजदूरी करके जीवन को बितायेंगे। मेरे लिए यह प्रमाण आवश्यकता से अधिक था। इस कारण उस समय मेरा दिल हल्का हो गया। मुझे ऐसा पता चला कि लंकरान की शाही हमारी मुहब्बत को तोड़ नहीं सकेगी। याने मैं लंकरान के डण्डे का अब गुलाम नहीं रहा। वही

डण्डा जिसका हर भाग मेरे उपर असर कर चुका था—जिससे मैं बहुत डरता था।

यह विचार अभी आ ही रहे थे कि एक दासी ने आकर सूचना दी कि शाही दरबार से एक चोबदार आया है और जहांपनाह ने मुझे बुलवाया है। बस, जी, क्या बतलाया जाय कि सारे का सारा हौसला और विश्वास जाता रहा। मैं ऐसा घबराया कि चारों ओर मुझे डण्डे ही डण्डे दिखलाई पड़े। सारांश यह कि शाहजादी को रोता छोड़ कर जहांपनाह की सेवा में पहुँचा। गया तो यह सोचकर था कि न मालूम क्या मुसीबत आएगी। परन्तु जहांपनाह बहुत ही नर्मी से पेश आए। बजाय नाराज होने के समझाते हुए मुझे हुक्म दिया कि एक हफ्ता भर के अन्दर फौजी ट्रेनिंग के लिए मुझे पूना भेजा जाएगा। शाहजादी साहिबा का जहां जी चाहे रहें। चाहे यहाँ रहें अथवा अपने महल में। मेरे जाने के विषय में आवश्यक आज्ञापत्र जारी कर दिए गए हैं। एक पत्र पूना के एक फौजी अफसर को लिखा गया और एक पत्र परिचय के लिए मुझे भी दिया गया।

पूना जाने की मैं तय्यारियाँ कर ही रहा था कि रज्जन खां ने मुझे एकान्त में पकड़ लिया। रात के कोई दस बजे होंगे। कहने लगी, "आप परदेश जा रहे हैं, दरबार का रंग आपको अधिक पता नहीं। इसी से मैं चाहती हूँ कि लंकरान के एक-दो रहस्यों से आपको आगाह करदूँ, जिससे कि आपकी आंखें खुल जावें और पता चल जावे कि शाही दामाद को किस प्रकार से रहना चाहिए। इस कारण बैठ कर सुनिए।"

शाहजादी साहिबा से मैंने कहलवा दिया और वे जानती ही थीं कि रज्जनखां किस प्रकार की बातें करेगी। और मैं रज्जनखां से लंकरान के रहस्य सुनने के लिए बैठ गया। जो कुछ भी रज्जनखां ने बतलाया, वह आप आगे दूसरे भाग में पढ़ें।

: २ :

चौथा रहस्य

रज्जन खाँ ने अपनी कहानी के सिलसिले को इस प्रकार शुरू किया—

मलका जमानी को मरे अभी आठ ही दिन हुए हैं; परन्तु मैं इस कथा को प्रारम्भ से शुरू करूँगी।

मैं पहले कह चुकी हूँ कि कफतरां वाली बेगम याने मलका जमानी को जो दर्जा प्राप्त होना चाहिए था और प्राप्त था भी, वह किसी दूसरी बेगम को प्राप्त नहीं हुआ था। रंगीन महल बेगम की तबाही के पश्चात् दिलरसबानो ने मलका जमानी की ओर ध्यान दिया। और बहुत जल्दी ही इनको भी हटा दिया। मलका जमानी यह जानती थीं कि रंगीन महल के समान वे बेबस नहीं हैं, फिर भी रंगीन महल का जो कुछ हुआ.....उस कब्बे हकनी का हाल वे देख चुकी थीं, इस कारण मन ही मन डरती थीं। अगर उनका कभी अपमान भी हुआ तो हँसी-खुशी उसको टालती रहीं। उनको डर यह था कि अगर जहाँपनाह नाराज हो गये तो रंगीन महल के समान गति बनाने के स्थान पर उन्हें जहर दिलवा देंगे। मजबूरन इनको अपमान सहना पड़ता। दिलरस बानो को हमेशा के लिए इन्हें अपनी जगह देनी पड़ी और जहाँपनाह से

आगे चलकर कहना पड़ा कि अगर आप हुक्म देंगे तो कोई भी हो उसको सलाम करूँगी। इस कारण इनको यह सब कुछ करना पड़ा। इन्होंने तो यह बात अपने ऊपर ले ली। परन्तु इनके भाई याने नवाब कफतरा ने जब यह सुना तो आग-बबूला हो उठे। बहिन को लेने आगए। मगर जहाँपनाह ने भेजने से इन्कार कर दिया। तू-तू मैं-मैं काफी हुई। मामला बहुत बढ़ जाता अगर मलका जमानी स्वयं ही जहाँपनाह की तरफदारी करके भाई से खफा न हुई होतीं। इन्होंने खुल्लम-खुल्ला भाई से कह दिया कि वे बिना बादशाह सलामत की मर्जी के नहीं जायेंगी और जो उनका अपमान हुआ है वह उन्हें स्वीकार है क्योंकि उन्होंने अपने शौहर की आज्ञा का हर स्थान पर पालन किया है। भाई अपना-सा मुँह लेकर बहिन से नाराज होकर चला गया।

इतना सबकुछ होगया फिर भी यह दिलरस बानो की ही शरारत थी कि जहाँपनाह नाराज के नाराज ही रहे। जहाँपनाह से कहा कि इसने भाई को लिख कर सहायता के लिए बुलाया था। वास्तव में उस बेचारी ने बिल्कुल नहीं लिखा था।

मलका जमानी की हालत दिलरस बानो ने काबिले रहम बना दी। एक तरफ तो भाई की नाराजगी और दूसरी तरफ अपमान ही अपमान। परिणाम यह कि वे लंकरान से तंग आगईं और इस चिन्ता में रहने लगीं कि किसी प्रकार अपने भाई नवाब कफतरा के पास पहुँच जाँय। संयोग से बहाना भी हाथ आगया। पूर्व इसके कि कहानी को मैं और आगे बढ़ाऊँ। यह जरूरी है कि बड़ी साली और बहनोई साहब से भी आपका परिचय करादूँ।

जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूँ कि मलका जमानी के कोई सन्तान नहीं थी। परन्तु इन्होंने आपकी बड़ी साली साहिबा को अपनी बेटी बनाया। वास्तविक बेटी से भी अधिक इनसे मुहब्बत थी।

साजजादी कहकर वह उन्हें पुकारतीं और मैं भी इस किस्से में इसी नाम से उनका जिक्र करूँगी। साजजादी साहिबा जब जवान हुई तो इनकी शादी शहर के प्रसिद्ध और लब्धप्रतिष्ठ रईस आबनूस खाँ के भतीजे याने मुख्तसर खाँ के लड़के से करदी। मलका जमानी ने दामाद को बेटे के समान मुहब्बत से रखा। जहाँपनाह के वे पहले दामाद थे। इस कारण इनकी भारी इज्जत थी। जहाँपनाह ने इनको 'नवाब दौला' की उपाधि दी। स्वर्गीय नवाब दौला विचित्र सी विशेषताओं वाले आदमी थे। बहुत ही सौम्य, खूबसूरत और जवान थे—ऐसे कि देखने वाले देखते ही रह जावें। तबियत में बड़ी नर्मी थी और अपनी बीवी के ऐसे मजनू थे कि उसी की मुहब्बत में तबाह हो गए। इस संक्षिप्त परिचय के पश्चात् मैं फिर अपनी कहानी को शुरू करती हूँ।

खुदा की करनी ऐसी हुई कि साजजादी साहिबा बीमार पड़ गईं। मलका जमानी के हाथ एक बहाना आया कि उसके इलाज के लिए बम्बई जाऊँगी। मलका जमानी इस ताक में थीं कि जिस प्रकार भी हो सके बेटी और दामाद को लेकर अपने भाई के पास पहुँच जाँय। परन्तु इनकी नस तो जहाँपनाह के हाथ में दबी हुई थी। वह यह कि अपने घर से जो लगभग एक करोड़ का जेबर यह लाई थीं, उसे जहाँपनाह ने अपने अधिकार में रख छोड़ा था। इस कारण जहाँपनाह से जो बम्बई जाने की आज्ञा माँगी तो खुशी-खुशी इन्हें आज्ञा मिल गई। मलका जमानी बम्बई पहुँचीं और गुप्त ढङ्ग से अपने भाई के पास सन्देश भेजा। स्पष्ट है कि वे भाई से लड़ी जरूर थीं परन्तु दिल से मिली हुई थीं और इस फिक्र में थीं कि किसी तरह गहने हाथ में आ जावें तो भाई के पास चल दूँ। बम्बई पहुँच कर इलाज के बहाने ही नीलगिरि पर चली गई और मजे से रहने लगीं।

दिलरस बानो को यह कैसे सहन होता कि मलका जमानी

अपमान से बची रहे—लंकरान से बाहर नीलगिरि पर मजे करे। उसकी देखभाल के लिए जासूस भेजे गए। दिलरस बानो के इशारों से उनके जासूसों ने एक नया शोशा छोड़ा। वह यह कि जहाँपनाह के दिल में यह कमीना ख्याल डाल दिया कि मलका जमानी दामाद पर आशिक हो गई हैं। इस कारण वहाँ शाही हुक्म भेजा गया कि बेटी और दामाद को छोड़कर लंकरान वापिस आ जाओ। मजबूरन मलका जमानी को वापिस आना पड़ा। परन्तु लंकरान में आकर इन्होंने वह पाँसा फेंका कि जहाँपनाह और दिलरस बानो दोनों को उल्लू बना दिया। हर अपमान जो दिलरस बानो ने इनका किया, इन्होंने सहन ही नहीं किया। वरन् उसे खुशी-खुशी स्वीकार किया और जहाँपनाह से कहा कि मैं अपना जेबर खुशी से दिलरस बानो को भेंट करना चाहती हूँ। स्वयं फकीरी लेकर महल के कोने में सात्विक जीवन बिताना चाहती हूँ। स्पष्ट है कि जहाँपनाह इन बातों से कितने खुश हुए होंगे। जहाँपनाह को मलका जमानी ने इस प्रकार से पूरा उल्लू बना दिया।

कुछ दिन इसी प्रकार से गुजरे। एक दिन इनके भाई नवाब कफतरा के लड़कों के किसी संस्कार पर जहाँपनाह और मलका जमानी के नाम एक बुलावा आया। क्योंकि इनके सम्बन्ध पहिले ही वैमनस्यपूर्ण हो चुके थे इस कारण कोई उत्तर न दिया गया। अब अवसर था कि मलका जमानी चाल चलें। एक दिन अनायास ही जहाँपनाह के सामने उपस्थित हुईं और रोते हुए यह इच्छा प्रकट की कि भतीजों को देख आऊँ। जहाँपनाह ने आज्ञा दे दी। परन्तु, पश्चात् जब जहाँपनाह को पता चला कि इस संस्कार में नवाब कफतरा के यहाँ बड़े-बड़े रियासतों के शासक अपनी बेगमों के साथ आएँगे तो स्वयं ही यह ख्याल आया कि अगर मेरी बड़ी बेगम बिना जेबरात के जाएगी तो बहुत बेइज्जती होगी। इस कारण स्वयं ही जहाँपनाह ने कहा कि ऐसे अवसर पर बिना गहनों के जाना ठीक नहीं।

परिणाम यह हुआ कि मलका जमानी जिद कर रही थीं कि मैं किसी प्रकार के गहने नहीं ले जाऊँगी और जहाँपनाह हुक्म दे रहे थे कि तुमको ले जाने पड़ेंगे। फैसला यह हुआ कि गहने ले जाए जाँय।

कथा को संक्षिप्त करती हूँ—मलका जमानी ने भाई के यहाँ जाने की तैयारी की। साथ दूसरी कनीजों और बाँदियों के मुझे भी रखा गया। जहाँपनाह ने एकान्त में लेजाकर अच्छी प्रकार से मेरे कर्त्तव्य बतलाए। यूँ कहिए कि मलका जमानी के साथ मुझे निगरानी करने के लिए जासूस बना कर भेजा गया।

हम लोगों ने कुशलतापूर्वक वहाँ से प्रस्थान किया। बम्बई पहुँच कर स्पेशल गाड़ी के लिए एक दिन प्रतीक्षा की। दूसरे दिन हमारी स्पेशल गाड़ी बम्बई से कफतरा की ओर चलदी। परन्तु मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब एक स्टेशन पर हमारी स्पेशल रुकी। साजजादी साहिबा और उनके शौहर नवाब दौला अपने नौकरों सहित स्पेशल में घुस आए। नवाब दौला और मलका जमानी में जो बातें हुईं उनसे पता चला कि जहाँपनाह ने कफतरा जाने से इनको मना किया था और इस आज्ञा के होते हुए भी वे हमारे साथ चल रहे थे।

मलका जमानी की बातों से भी पता चल रहा था कि वह स्वयं अब विद्रोह पर उतारू हो चुकी हैं। वह इस बात को अब छुपाना भी नहीं चाहती थीं। जब चार बजे के लगभग स्पेशल एक बड़े स्टेशन पर रुकी तो उन्होंने मुझे बुलाया और कहा, "तुम यहाँ से वापिस चली जाओ और मेरी तरफ से जहाँपनाह को जाकर कहो कि तुमने जो मेरे ऊपर जुलम किए हैं वह ऐसे नहीं कि जिनको मैं भूल सकूँ। अब मैं तुम और तुम्हारे लंकरान दोनों पर लानत भेजती हूँ।" मैंने यह ठीक नहीं समझा कि वापिस लौट जाऊँ। इस कारण मैंने यह कहकर साथ जाने की प्रार्थना की कि अगर मैं जहाँपनाह के हुक्म के अनुसार आपके साथ न गई तो मेरी शामत बुला दी जावेगी। अतः

मुझे साथ चलने की आज्ञा दो जावे। बेगम साहिबा तो कभी आज्ञा न देतीं क्योंकि वे जानती थीं कि मैं जहाँपनाह की गुप्तचर हूँ। लेकिन साजजादी साहिबा ने मुझे यह कहकर रोक लिया कि शायद कफतरा पहुँचने के पश्चात् और कोई आवश्यक बात न कहनी हो। बेगम साहिबा लंकरान से बहुत ही जली हुई थीं, कहने लगीं, "हमारा लंकरान में क्या रखा है? वहां हम अब कभी भी नहीं जावेंगी।"

संक्षेप में, हमारी यात्रा जारी रही और दूसरे ही दिन हमारी स्पेशल कफतरा पहुँची। सरकारी अधिकारी हमारे स्वागत के लिए खड़े थे। हम लोगों को बड़े आराम से उतरवा कर ठाठ के साथ महल की ओर रवाना किया गया।

कफतरा

कफतरा के शानदार महल मानो सूरज बने हुए थे। बाहर आतिशबाजी छूट रही थी। शाही बैंड बधाई के नगमे अलाप रहा था। मलका जमानी के लिए एक पूरा का पूरा महल तैयार था। साजजादी साहिबा और नवाब दौला के लिए एक अलग महल में एक हिस्सा तैयार था। जब हम सब लोग महल में पहुँचे तो अन्दर और बाहर खूब धूम-धाम और चहल-पहल थी। बहुत जल्दी ही मलका जमानी और साजजादी साहिबा शाही जशन में भाग लेने के लिए चल पड़ीं। स्वयं तो इन्होंने सादा कपड़े ही पहने, परन्तु बेटी के ठाठ देखने योग्य थे। क्यों न हों, लंकरान के सम्राट की साजजादी साहिबा अपने सारे सौन्दर्य और यौवन के सरोवर के साथ कफतरा के शासक के जशन में भाग लेने के लिए जारही थीं। साजजादी साहिबा के रूप और यौवन का उन्माद देखने के लायक था। बहुत ही कीमती शाही लिबास पहना था जिसकी कीमत ही आंकनी मुश्किल थी। मलका जमानी के और अपने, कुल मिलाकर डेढ़ करोड़ के जेवरों में सिर से पैर तक डूबी निराली चमक-दमक के साथ अपने हुस्न और अदा-भरी चितवन से लंकरानी दबदबा और वैभव संपन्नता के

साथ जनाना महल के जशन में शरीक होने को चलीं।

कमरे से कमरा, सहन से सहन, और दरवाजे पर दरवाजे पार करते हुए हम सैकड़ों भूल-भलैयों में से जनाना महल में पहुँचे जहाँ जशन हो रहा था।

हमारे सामने दरबार का आलीशान हाल था जिसके दरवाजों और खिड़कियों से राग और नगमों की लपटें निकल रही थीं। हमारा याने लंकरान का जलूस महल के प्लेटफार्म की पहली सीढ़ी पर पहुँचा ही था कि कमरे से मानो सितारों का एक जमघट आगया। हमारे स्वागत के लिए उन्होंने बड़ी-बड़ी बलायें लीं। बेगम साहिबा कफतरा अपनी बड़ी ननद याने मलका जमानी बेगम के स्वागत के लिए आगे बढ़ीं। कफतरा की बेगम को मैंने पहिली बार देखा। हुस्न और जवानी की एक चमचमाती हुई तस्वीर थीं। परंतु चितवन पर आवभगत, स्वागत-सत्कार की सफेदी थी जो बदकिस्मत बेगमों की खास निशानी है। याने सारे संसार की और खुशियों के होते हुए भी अपनी अनिवर्चनीय वेदना को नहीं छुपा सकती थीं जिससे एक भाग्यवान बेगम वंचित नहीं रहती।

मलका जमानी बेगम अपनी नौजवान भावज से बच्चों की तरह लिपट कर मिलीं। और उन्होंने अपने आँसुओं से बेगम कफतरा का कंधा तर कर दिया। बेगम कफतरा ने बड़े मान और शान के साथ अपने अभिमानी महमानों को लेकर हॉल में अच्छी जगह स्थान दिया। अनेकों सुगन्धियों से हॉल महक रहा था। रोशनी ने दिन का सा समाँ बांध दिया था। रौशनदार यंत्रों की चमक-दमक से कमरा जगमगा रहा था, मानो इस आलीशान महल में परियों का नाच हो रहा हो। सूरज हकनी और मोर पंखनी की हरी शाखें हाथों में लिए और जरी की टोपियाँ पहने, सुनहले और रुपहले भड़कीले कपड़े पहने चुल-बुली और सुन्दर खवासियाँ प्यानो के सुरों तथा दिलरुबा के नगमों की आवाजों का बल खा-खा कर साथ दे रही थीं। उनके पैरों का नपा-

तुला धमाका, प्यानो की आवाज का झन्नाटा, रसभरे सुरीले गीत, कमरे की चमक-दमक में इनकी मतवाली गर्दनों का अदा के साथ हिलना तथा राग व रंग की चारों ओर वर्षा—ऐसी वस्तुएँ थीं कि प्रतीत हो रहा था मानो यह सब एक सुन्दर मनमोहक स्वप्न है।

हमें आए अभी थोड़ा ही समय हुआ था कि एक घोषणा आकाश में गूंजती सुनाई दी कि सरकार आलीजाह पधार रहे हैं। यह सूचना सुनते ही मेरी नजर साजजादी साहिबा पर पड़ी। साथ ही मलका जमानी ने भी साजजादी साहिबा की तरफ देखा। महमानों में बाहिर की बेगमें उठ-उठकर खड़ी होगई। साजजादी साहिबा ने पर्दे में जाने वाली एक बेगम पर नजर डाली और उठने ही को थी कि मलका जमानी की आँखों ने मनाही का संदेश दिया। साजजादी साहिबा के चेहरे पर कुछ हैरानी और परेशानी छा गई। परन्तु उनको इस शशोपंज से निकालने की कफतरा बेगम ने कोशिश की। फूल के समान मुसकरा कर वह साजजादी साहिबा की ओर बढ़ीं। और एक अजीब साहरान प्यार से उन्होंने कहा, "क्या आपने सुना नहीं कि सरकार पधार रहे हैं।"

स्पष्ट है कि इसका क्या अर्थ था? यही कि नवाब साहब कफतरा पधार रहे हैं। अतः साजजादी साहिबा भी पर्दे में चली जावें। साजजादी मतलब समझ गई। वे खुद पर्दे में जाना चाहती थीं; परन्तु मलका जमानी का विचार था कि कहीं वह बुरा न मान जावे। पूर्व इसके कि शाहजादी साहिबा कुछ बोलें मलका जमानी बीच में बोल उठीं, "लो और सुनो बेटी! मामू से पर्दा कैसा?"

इतना ही कह पाई थीं कि नवाब साहिब स्वयं ही आ पहुँचे। मलका जमानी झपट कर भाई से मिलने के लिए बेकरार हो उठीं। उठते-उठते साजजादी साहिबा का भी हाथ खींच लिया। जल्दी से आगे बढ़ीं और फिर कुछ घबरा कर पलटीं। साजजादी साहिबा के कान में कुछ कहा। इतने में नवाब साहब आ ही गए। साज और

नगमें खामोश हो गए। नवाब साहब एक अचकन पहने और एक हीरे की कलंगी लगाए हुए थे। चौड़ा-उभरा सीना, कद लम्बा और चेहरे से तेज बरसता हुआ। इस समय उनका चेहरा खुशी के मारे जगमगा उठा। बहिन को देखते ही जज़्बात के कारण उनके चेहरे पर झपकी-सी आई। उन्होंने कुछ अजीब ही कांपती-सी आवाज में बहिन को सलाम किया—"आया सलाम।"

सलाम के उत्तर में मलका जमानी मानो बेहोश होकर गिरीं। और भाई को प्यार के मारे चिपटा लिया। मलका जमानी बेगम स्वयं बेकाबू होगई और छोटे भाई से मिलकर बहुत ही रोईं। भाई और बहिन की उमर में इतना अन्तर था कि माँ और बेटे मालूम होते थे क्योंकि मलका जमानी सदमों और अपमानों के कारण बूढ़ी हो गई थीं। भाई और बहिन जब अलग हुए तो साजजादी साहिबा पर इनकी नजरें पड़ीं, मानो गढ़ कर रह गई। साजजादी साहिबा ने सलाम किया परन्तु नवाब साहब तो सुध-बुध भूल चुके थे। उनके आश्चर्यजनक वेश, रूप और यौवन का आकर्षक उन्माद और साथ-साथ अनोखा शरमीलापन---बस यह प्रतीत हो रहा था कि गुलाब की पंखड़ी है जो धूप की गर्मी से शर्माती जारही है। मलका जमानी ने साजजादी को निकट बुलाया। साजजादी साहिबा आगे बढ़ीं। निकट आकर उन्होंने भेंट उपस्थित की जो नवाब साहिब ने प्रसन्नता से स्वीकार की। फिर मलका जमानी ने साजजादी साहिबा के विषय में अपने भाई को बतलाना प्रारम्भ किया। इसी समय मेरी नजर कफतरा बेगम पर पड़ी, उनका चेहरा सफेद था। घबराहट और चिन्ता की मलिन रेखा उनके चेहरे पर आ चुकी थी। वे अपने पति की ओर देख रही थीं। कभी-कभी साजजादी साहिबा की ओर भी देख लेती थीं। परन्तु जल्दी ही यह हालत बदल गई क्योंकि नवाब साहब ने नाच के लिए इशारा कर दिया था। मानो राग-रागनियाँ जाग उठीं। कमरे में एक प्रकार से तड़प-सी जाग उठी। अपनी पूरी आन-बान

और शान शौकत के साथ राग और रङ्ग का समा जम गया। साज के तारों का दिलरुबा सुनाई दिया। नाचने वाली तितलियों को साज के साथ अपने अफसानों को छेड़ने का अवसर मिल गया। शीघ्र ही जशन अपने पूर्ण यौवन पर आगया।

नवाब कफतरा बातें भी करते जाते और धीरे-धीरे साजजादी साहिबा की ओर भी देखते जाते। यकायक वे बड़ी शान के साथ उनके निकट आगए। मलका जमानी ने जल्दी ही उन्हें महफिल से उठा लिया और उनको साथ लेकर,महफिल को उसी रङ्ग में छोड़कर कमरे के बाहर चली गई। नियमानुसार यदि किसी अवसर पर सेवा की आवश्यकता पड़े तो कर दूँगी इस विचार से मैं भी साथ चल दी। परंतु मैं रही कुछ दूरी पर ही। मलका जमानी ने मुझे हाथ से इशारा किया और मैं खड़ी रही। मलका जमानी बेगम नवाब साहिब के साथ बातें करती हुई महलों के दूसरे भाग में पहुँची। पीछे से किसी ने मेरा हाथ पकड़ा। जब मुड़ कर देखा तो एक गुस्ताख़ सी छोकरी को सामने खड़ा पाया। वह अधेड़ उमर की थी। बोली, "हमारी बेगम साहिबा के लिए कहाँ से यह जहरीली पुड़िया ले आई हो ?"

मैं इसका मतलब समझ गई। वह जहरीली पुड़िया साजजादी साहिबा को कह रही थी। मुझे बहुत गुस्सा आया और मैंने जल कर कहा—

"सबर है तुम्हारी जान को...तुम न मामा को मामा समझो और न भानजी को भानजी, वाह !" अधेड़ उमर की एक दूसरी बोली "बहिन, तुम सच कहती हो। मगर तुम्हें यहाँ का हाल नहीं मालूम। खुदा खैरियत से रखे मामा और भानजी को, मगर हम लोग क्या करें। जो देखते हैं, कहना पड़ता है। परन्तु खुदा न करे...हमारा कुछ और मतलब नहीं...यह तो बकती है।"

इतनी ही बातें हो पाई थीं कि उन दोनों को किसी ने आवाज दी और वे एकदम से चली गई। अब मैं अकेली खड़ी थी। बादशाहों का नियम है कि नौकरों को जाने की छुट्टी भी दे देते हैं और पश्चात् बुला भी लेते हैं। इस कारण हमारा यह नियम है कि मना करने पर भी हम उपस्थित ही रहते हैं। और सच पूछिए मैं तो वैसे भी गुप्तचर ठहरी। इस कारण हर भेद को प्राप्त करना मेरा कर्तव्य था। मैं उसी ओर चली जिधर मलका जमानी और उनके भाई गए थे।

निर्दयी नवाब

मैं बेधड़क उस ओर चलती गई जिस ओर मलका जमानी बेगम और उनके भाई गए थे। रास्ते में कमरे के बाद कमरे आते गए। मेरी समझ में न आया कि अब किधर जाऊँ। किसी से पता करना भी मैं ठीक नहीं समझती थी। वैसे भी वहाँ कोई न था। जशन के कारण सभी इसमें भाग लेने के लिए गए। मगर कोई-कोई तेजी से गुजरने वालियाँ इस ओर आ-जा रही थीं। मेरे दाहिने हाथ की ओर सुन्दर बरामदा था, जिसमें कमरों की कतार चली गई थी। सामने एक गैलरी थी। मैंने सोचा कि हमारी मलका किधर गई होंगी। इतने में एक कनीज चाँदी की तश्तरी लिए सामने के कमरे में से निकली। मुझे देख कर कुछ न बोली। परन्तु मैं समझ गई कि वह हमारी मलका के पास से आ रही है। जैसे ही वह गई, मैंने दरवाजे से कान लगाए और जान लिया कि मलका जमानी और कफतरा साहब बातें कर रहे हैं। पर इतनी दूर से इस प्रकार बातें सुनना मुश्किल था। मुझे जीने की खोज थी। वह भी मिल गया। मैं उसपर चढ़ गई। तेजी से दबे पाँव मैं खिड़की के पास पहुँची। मैंने एक आँख से अन्दर झांका।

मलका जमानी एक सोफे पर बैठी थीं। सामने भाई एक नीली-सी कुर्सी पर बैठे थे। दाहिने हाथ को नवाब साहब की छोटी बहिन बैठी थीं। इनका वर्णन मैं अब करूँगी। पतला नाजुक बदन अत्यन्त सुन्दर...कुछ गुस्से वाली थीं। ऐसा प्रतीत होता था, कफतरा का जलाल एक चीनी की मूर्ति में बंधकर आगया है। कोई बीस-इक्कीस वर्ष की उमर रही होगी मगर शादी नहीं हुई थी और न होने की उम्मीद थी। यात्रा और पर्यटन की बहुत शौकीन थीं; इस प्रकार से यात्रा करतीं कि लोगों को पता भी न चलता कि कौन हैं। अधिकतर कलकत्ता में ही रहती थीं। वहाँ नवाब साहब की बहुत शानदार कोठी है।

मलका जमानी बेगम दाहिने हाथ को झटक-झटक कर कह रही थीं। छोटी बहिन अपनी सुन्दर आँखें निकाले सुन रही थी। उसके मुंह पर कुछ गुस्से की झुर्रियाँ थीं। नवाब साहब चुपचाप सुन रहे थे। मलका जमानी कह रही थीं—

"बिल्कुल-बिल्कुल नहीं...यह असम्भव था...मगर मैं क्या करती? बिल्कुल लाचार थी, एक निर्दयी के हाथ में थी। तुमने देखा और सुन लिया कि कफतरा के खानदान का किस प्रकार से अपमान हुआ। कफतरा के नवाब की बेटी,—कफतरा के नवाब की सगी बहिन और लंकरान के नवाब की विवाहिता बड़ी बेगम स्वयं लंकरान के हाथों इस प्रकार से अपमानित हो। कफतरा के शाही खानदान की लड़की खवासियों की धमकियाँ कैसे सुन सकती है। मगर मुझे सुननी पड़ीं। गिरी हुई और बाजारू औरतों के आगे कफतरा की शाहजादी को कफतरा के शाही खानदान के मान के लिए झुकना पड़ा। उनकी जूतियाँ खानी पड़ीं; और वे सब अपमान मुझे सहने पड़े कफतरा के नवाब, अपने भाई के होते हुए। तुम मेरे भाई हो, कफतरा के शाही खानदान का आसरा हो। खुदा तुम्हें कफतरा की गद्दी पर हजारों वर्ष रखे। मगर इसके साथ-साथ मुझे यह भी

बतलाओ कि क्या कफतरा की इज्जत के भी तुम रक्षक हो या नहीं। तुम्हारे होते हुए अगर कफतरा के नाम पर बट्टा लगे और यहाँ की शाहजादियों को अपमानित किया जाये तो इसके उत्तरदायी तुम हो। या तो अभिमानी लकरान से बदला लो या कफतरा के शाही खानदान का सरताज कहलाना छोड़ दो।

छोटी शाहजादी का सुन्दर चेहरा गुस्से से तमतमा उठा। कफतरा के शाही खानदान का जलाल सिमट कर उसी के मुख पर आगया था। भाई की ओर उसने बड़ी बहिन के साथ अपनी सहमति का सकेत किया। उन खूबसूरत होटों में कुछ हलचल होने ही वाली थी कि नवाब साहब ने कुछ परेशान हो कर कहा—

"तुम सच कहती हो, मगर मेरी मजबूरियों को नहीं देखतीं। यह वह समय नहीं कि कफतरा की सेना लंकरान में खन बहादे और न वह जमाना ही है कि इसके लिए हम लंकरान को ललकारें। अब तुम्हीं बताओ कि मैं क्या करूँ ?"

छोटी शाहजादी मारे गुस्से के दमक उठी—"क्या करूँ ? करना क्या है, लकरान से बदला लीजिए, वरना...।"

नवाब साहब ने अपनी जोशीली बहिन की ओर देखा और मुस्करा दिए। धमकाते हुए कहा, "अच्छा बताओ कोई तरकीब जिससे लंकारान से बदला लिया जावे। लंकरान जाकर पाजी को मार डालूँ ? इसके लिए भी तैयार हूँ। मगर फिर वहाँ से जिन्दा आना कठिन है। तुम कहो तो मैं अभी जाने के लिए तैयार हूँ।"

शाहजादी बोली, "क्या लंकारान के बाहर बदला लेने का कोई अवसर नहीं मिल सकता ?"

इसी समय दरवाजे पर किसी ने खट-खट की। एक दासी आई जिसने मलका जमानी को दूर ले जाकर साजजादी साहिब का कोई सन्देश दिया। मलका जमानी पाँच मिनट के लिए बाहर गई। छोटी

शाहजादी ने कहा, "जिस प्रकार से लंकरान वालों ने कफतरा का अपमान किया उसी प्रकार से कफतरा वाले भी कर सकते हैं।"

नवाब साहब ने अपनी बहिन की ओर देखा और आँखों में आँखें डाल कर कहा, "क्या मतलब ?" शाहजादी ने कमरे के दरवाजे की ओर देखा। मलका जमानी आगई थीं। "जिस प्रकार से कफतरा की शाहजादी, उसी तरह से लंकरान की शाहजादी...।"

शाहजादी रुक गई क्योंकि मलका जमानी आ चुकी थीं। उन्होंने दोनों की ओर देखा और बैठ गईं। और कुछ रुककर कहा—"भैया, सिवाए तेरे अब मेरा वली कौन है...अगर जी चाहे तो बाप-दादों के मान के लिए कुछ कर नहीं सकोगे तो जैसा पहले सबर किया वैसे अब कर लूँगी।"

शाहजादी चमक कर बोली, "आपा जान ! खुदा, भाई को सलामत रखे। एक भाई हैं। अगर हमारे ऊपर जुलम होंगे तो ये बदला न लेंगे तो और कौन लेगा ? मैं तो इनके मुँह पर कहती हूँ कि अगर इन्होंने लंकरान से बदला न लिया तो मैं इनका मुँह न देखूँगी, भाई कहना छोड़ दूँगी। आप भी इनसे यही कह दीजिए।"

इतना कह कर उस तेज तबियत शाहजादी ने भाई को बहुत कुछ कहा और एक लैक्चर झाड़ दिया। बड़ी बहिन ने भी कुपित होकर कह दिया कि अगर बदला न लिया तो कभी मुँह न देखूँगी। याने दोनों बहिनें भाई पर बरस पड़ीं। भाई चुपचाप सुनता रहा। और जब बहिनों ने चुप होकर भाई से जवाब माँगा तो बारी-बारी से भाई ने दोनों बहिनों की ओर देखा। आँखों में आँखें डालकर कहा, "अगर मेरे दम में दम रहा तो लंकरान से बदला जरूर लूँगा।"

भाई की ये बातें सुनकर छोटी बहिन ने उसके गले में बाहें डाल दीं और सिर को एक बोसा दिया। बड़ी बहिन उठकर भाई

से लिपट गई। खूब दिल की भडास निकाली और इधर मैं काँप कर खिड़की के पास गिरी। एक दृष्टि मैंने आसमान पर डाली। एक तारा गिरा और रोशनी की एक लकीर बनाता हुआ आसमान में से गुजर गया। मैं देख कर सहम गई। ऐसा सितारा एक बार पहले भी गिरा था जब रङ्गीन महल की बरबादी हुई थी। मैं घबरा गई....अब क्या होने वाला है! उतर कर नीचे पहुँची, महल तक चली गई। जशन बराबर चल रहा था। वही परियों का नाच हो रहा था। साजजादी साहिबा रंग-रलियों की रौनक देख रही थीं और कफतरा बेगम के साथ हँस-हँस कर बातें कर रही थीं।

मेरी सलाह

मुझे क्या करना चाहिए ? मैं गहरे सोच में थी। जिन लोगों के साथ मैं आई थी, वे खूब जानते थे कि मैं जहाँपनाह की एक जासूस हूँ। मेरी उपस्थिति इनको बिल्कुल नहीं भाती थी। परन्तु, शायद इस कारण मैं अभी तक निकाली नहीं गई थी कि लंकरान के विषय में जो बातें होती हैं और घटनाएँ घटती हैं उनको मैं देखलूँ और लंकरान जाकर जहाँपनाह को बतलाऊँ जिससे वे अंगारों पर लोटें। स्पष्ट है कि ऐसी हालत में मेरी सलाह को वे कहाँ तक स्वीकार कर सकते थे। मलका जमानी व साजजादी साहिबा मुझे गुप्तचर समझती थीं। हालांकि खुदा साक्षी है, मैं अपने नमक की सच्ची थी। मगर मेरी पोजीशन कफतरा में बहुत निकम्मी बनी हुई थी।

हम लोगों को आए तीसरा ही दिन हुआ था कि पता चला कि साजजादी साहिबा को सात हजार रुपए वार्षिक की जागीर दी जाने वाली है। क्योंकि अब परिस्थियाँ ऐसी थीं कि शाहजादी साहिबा के लौट कर जाने की कोई आशा नहीं थी।

बहुत ही सोच-विचार कर मैंने निश्चय कर लिया कि जिस प्रकार से हो सके मैं अपना कर्तव्य पालन करूँ और अपनी शाहजादी को बचाऊँ। मैंने नवाब दौला से यह बात करना उचित समझा। मैं उनके पास पहुँची। मैं खुद जानती थी कि मेरी जान खतरे में पड़ रही है और खुदा जाने मुझे क्या सजा मिलेगी। मैंने निश्चय कर लिया चाहे कुछ भी हो दौला साहब से अवश्य कहूँगी। इस कारण मैं इनके पास महल के बाहर पहुँची। जब मैं उनके पास पहुँची तो वे अभी-अभी शाहजादी साहब के लिए जागीर की घोषणा सुनकर आए थे। इस कारण वे खुश थे। पर मुझे देख कर प्रसन्न न हुए। मैंने आगे बढ़कर प्रार्थना की कि एकान्त में कुछ बातें करना चाहती हूँ। साफा उतारते हुए उन्होंने अपनी तेज़ आँखों से मेरे दिल की गहराइयों को मापना चाहा। अपने चौड़े, चिकने बाजुओं को हिला कर झूम कर कहा, "अच्छा।"

कमरे में सन्नाटा था। एक नौकर कुछ रखकर चला गया। सोफे पर लेटते हुए इन्होंने अपने शरीर को कसा, ढीला किया और फिर बैठ गए—"क्या कहना चाहती हो।"

मेरी समझ में नहीं आता था कि क्या कहूँ और क्या न कहूँ! परन्तु मैं इनसे कहना अवश्य चाहती थी "मैं कहना यह चाहती हूँ कि खुदा आपको बड़ी उमर दे। आप जितनी जल्दी हो सके साज-जादी के साथ कफतरा से निकल पड़ें।"

शायद इस प्रकार की सलाह वे सुनने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थे। उन्होंने भरकर मेरी ओर बड़े ध्यान से देखा और घूर कर कहा—"क्या मतलब?"

मैंने जो कहा था उसे डरते-डरते फिर दोहराया। वे बोले, "अच्छा है कि तुम अपनी सलाह रहने दो। जिस काम के लिए तुम हमारे साथ आई हो हम खूब जानते हैं। अच्छी प्रकार समझ लो, अगर तुमने लंकरान के तरीके यहाँ चलाए तो खैर नहीं। क्या तुम

यह चाहती हो कि दुनियां में कहीं भी हम दो घड़ी चैन से न रहने पाएं।"

मैंने कहा, "मेरे हुजूर, यह आप क्या कह रहे हैं? मुझे स्वयं पता है कि आप जानते हैं कि मैं आपसे खुश नहीं। मैं क्या करूं... यह भी मुझे पता है कि मेरे कर्तव्य क्या हैं परन्तु दया के लिए कहना मानिए और जिस प्रकार से हो सके कफतरा से निकल भागिए। वरना याद रखिए पानी सिर से गुजर जाएगा। मैं अपनी जान को खतरे में डालकर कहती हूँ कि आपको कसम है लकरान के मान और शान की.....जल्दी से जल्दी कफतरा से चले जाइए वरना...वरना... वरना।"

"वरना क्या होगा?" सोफे पर बैठे हुए नवाब दौना ने तड़प कर कहा।"

"मेरे मुँह में खाक जाए...लकरान का मान और शान खतरे में है।"

नवाब दौना यह सुनकर कहने लगे, "अब अधिक बातें मुझसे मत करो। तुम चाहती हो, हमारा कहीं भी ठिकाना न रहे। याद रखो नाक-चोटी कटवा कर लकरान भिजवा दी जाओगी। आई वहां पर बड़ी फूट डालने वाली...चल दूर हट यहां से।"

अन्तिम वाक्य सुनकर मैं उबल पड़ी और मैंने तेज होकर कहा कि खुदा के वास्ते माफ कीजिए। मैं आपको सब कुछ बताए देती हूँ। यह कह कर मैंने वह सब कुछ बतला दिया जो कुछ बात छोटी शाहजादी, मलका जमानी और नवाब कफतरा के मध्य हुई थीं।

"मैंने आपसे सब कुछ कह दिया और जान खतरे में डाल दी। अब आप ध्यान से सुन लीजिए कि लकरान की इज्जत खतरे में है ...अब आप जानें, आपका काम जाने...!"

मेरा इतना कहना था कि गुस्से के मारे नवाब साहब का चेहरा लाल होगया। आँखों से चिनगारियां निकलने लगीं। अत्यधिक क्रोध में आकर खूनी आँखों से उन्होंने मेरी ओर देखा।

"अफवाह ! मक्कार ! झूँठी कहीं की...ठहर तो जरा...।"

इतना कहकर इन्होंने आवाज दी, "कोई है ?"

"हाजिर ! हाजिर !" कहते हुए दो चोबदार आ गए। नवाब साहब के हुक्म के अनुसार उन्होंने मुझे चोटी से पकड़ कर बाहर निकाला। दो-चार लातें मारीं...मैं मार खाकर सीधी महल की ओर चली गई।

× × ×

मैं मार खाकर सीधी अन्दर जो पहुँची तो क्या देखती हूँ। साजजादी साहिबा शाहजादी के साथ चौसर खेल रही हैं। चौसर क्या हो रही थी, ऊधम मच रहा था। हँसी-खुशी और शोर-शराबे का अखाड़ा बना हुआ था। मैंने साजजादी साहिबा और शाहजादी साहिबा को ध्यान से देखा। इस समय कोई नहीं कह सकता था कि इन दोनों के मध्य कोई भी वैमनस्य है। शाहजादी साहिबा ने साजजादी साहिबा को दीवाना कर दिया था। यह धोखेबाजी देखकर जी तो यही चाहा कि शाहजादी का गला घोंट दूँ। परन्तु मजबूर थी, लाचार थी। समझ में नहीं आया कि क्या करूँ, क्या न करूँ। मैं कुछ दूर आकर लेट गई और चिन्ता ही चिन्ता में सो गई।

कोई घण्टा भर ही सोई होऊँगी कि एक खवास ने आकर जगा दिया और सूचना दी कि तुम्हारी मलका तुम्हें बुलाती हैं। कोई बात न थी। मैं ताड़ गई कि कुछ दाल में काला अवश्य है। मैंने दो-चार सवाल किए तो उसने हूँ-हाँ करके टाल दिया। मैं उसके साथ चली। मलका जमानी के कमरे में चलने के स्थान पर उसने बड़े महल की ओर जाने का इशारा किया। मैं चलते-चलते रुक गई। रुक कर उसकी ओर देखा तो उसने सिर नीचा कर लिया।

संक्षेप में आप सुनिये कि बड़े महल में मैं जैसे ही पहुँची तो धक् से रह गई। नवाब साहब कफतरा, मलका जमानी बेगम, साजजादी साहिबा और शाहजादी साहिबा बैठी थीं। प्रवेश करते ही इधर

तो मैंने सलाम किया और उधर साजजादी साहिबा नवाब साहब से बोलीं—

"मामा साहब, इस मक्कार को उचित सजा मिलनी चाहिए।"

मेरे सलाम का उत्तर भला क्या मिलता ! एकदम से चार-पांच खवाइसें संकेत पाते ही लिपट गईं। नवाब साहब ने कहा—"इसकी नाक और चोटी काट कर पारसल बनाकर लंकरान भेज दो और इसे जूते मार कर महल से निकाल दो।"

मेरी चोटी काट दी गई और नाक कटने ही वाली थी कि नवाब साहब ने चिल्ला कर कहा—"छोड़ दो...छोड़ दो, हवालात में बन्द कर दो।"

खवासियों ने लेजाकर मुझे जनानी हवालात में बन्द कर दिया जहाँ मैं ग्यारह बजे तक पड़ी रही। रात के ग्यारह बजे होंगे कि शाहजादी साहिबा आईं, मेरा हाथ पकड़ कर बाहर ले गईं और कहा, "चलो सरकार बुलाते हैं।"

सरकार एक आलीशान कमरे में कीमती कपड़े पहने बड़ी शान के साथ आसीन थे। मुझे देखते ही मेरे सलाम के उत्तर में हँस पड़े और बोले, "आओ रज्जन खां ! तुम्हारी चोटी तो पारसल कराके मैंने लंकरान भेज दी और सोच रहा हूँ कि तुम्हारी नाक भी भेजूँ या नहीं।"

मैंने हिम्मत करके कहा—"सरकार, नाक तो नमक हरामों की काटी जाती है, वैसे आप मालिक हैं।"

शहजादी साहिबा बोलीं, "अगर तुम सच-सच बता दोगी तो छोड़ दी जाओगी। नहीं तो सचमुच तुम्हारी नाक काट ली जावेगी।"

इसके पश्चात् नवाब साहब ने मुझसे पता किया कि मैंने नवाब दौला को क्या कहा था। मैंने सारी बातें सच-सच बता दीं और मान लिया कि मैंने चुपके से बातें सुनली थीं कि आप दोनों लंकरान से बदला लेना चाहते हैं। नवाब साहब मान गए और कहने

लगे, "अब तुम्हारी जान भी कुशल से है और नाक भी। मैं तुम्हें बहुत अच्छी प्रकार से जानता हूँ और तुम्हारी क़दर करता हूँ। ऐसा नौकर और गुप्तचर लंकरान को मिलना कठिन है। अब शर्त यह है कि तुम समझदार हो और अकलमन्द भी। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे स्वामी से मैं बदला लूँ। क्या ही अच्छा होगा कि तुम्हारे स्वामी को आँखों देखी ये बातें पता चलें। मगर इतना ध्यान रहे कि अपनी मलका को अवश्य उत्तेजित करना। इसीलिए मैं तुमको कल सुबह छोड़ दूँगा। कल सुबह तक और तुम हवालात में रहोगी। मगर याद रखना, अपनी मलका को उत्तेजित करने के स्थान पर कोई और हरकत की तो जिन्दा गड़वा दूँगा।"

इतना कह कर मुझे जाने की आज्ञा दी। कमरे से प्रथक होते ही मुझे दो खवासियों ने सम्भाल लिया और हवालात में बन्द कर दिया।

निर्दयी कफतरा

रात के लगभग दो बजे तक मुझे हवालात में नींद नहीं आई। मैं परेशान थी। मस्तिष्क में बहुत से विचारों की बाढ़-सी आ रही थी। जब नींद आई तो स्वप्नों में भी यही हालत रही। मैं इस आशा में थी कि मुझे वचन के अनुसार छोड़ दिया जावेगा, परन्तु दोपहर को खाना भी मुझे हवालात में ही खाना पड़ा और छोड़ने की कोई सूचना नहीं मिली। शाम के चार बजे के लगभग शाहजादी साहिबा आईं। उनका चेहरा खुशी से तमतमा रहा था। फूल के समान खिली हुई थीं वे। हवालात का दरवाजा खुलवा कर उन्होंने मुझसे बहुत प्रसन्न होकर कहा—"भाग जाओ, अब बिल्कुल देर मत करो।" इतना कह कर वे वहाँ से हवा हो गईं।

इधर मैं सीधी महल में जाने के स्थान पर बाहर निकली। बाहर आकर मुझे पता चला कि एक बजे के लगभग नवाब दौला को महल से बाहर बुलवा कर एक लिखित नोटिस दिया गया कि बारह घण्टे के अन्दर-अन्दर रियासत कफतरा की सीमा से बाहर निकल जाएँ। एक मोटर उनके लिए उपस्थित थी और दूसरी मोटर पर गारद थी। बिना कोई कारण बतलाए हुए हुक्म के पालन के लिए कहा गया और इनको रियासत

से बाहर निकाल दिया गया। इस घटना से सारे महल में खलबली मच गई। मैंने चाहा कि साजजादी साहिबा और मलका जमानी के पास अन्दर जाऊँ तो पता चला कि महल के चारों ओर पुलिस और सेना है। परन्तु मुझे रोकने वाला कौन था? प्रलय आ रही थी। मैं जल्दी से बढ़ती हुई अन्दर पहुंची। मलका जमानी अपने कमरे में बैठी थीं। मैं हैरान थी कि परेशान होने के स्थान पर मलका जमानी बड़ी खुश और ठीक प्रकार से थीं। मेरे आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही। अब दूसरी तरफ की बात सुनिए.....साजजादी साहिबा महल के जिस भाग में थीं, उसका रास्ता बन्द था और पहरा कड़ा था। न कोई उधर से आ सकता था और न कोई जा सकता था। यही उनके गुस्सा होने के लिए काफी था। वे नवाब साहब को कई बार बुला चुकी थीं; लेकिन वे आ नहीं रहे थे। दूसरे वे मुझ पर भी बहुत गुस्सा थीं। परन्तु, मुझे देखते ही उनको कुछ धैर्य-सा बंध गया। मैंने डर कर उनके कदमों में सिर रख दिया और रोकर कहा, "शहनशाह बेगम लंकरान का बुरा समय आ गया है।" इतना ही कहा था कि बेगम साहिबा ने संकेत किया और कमरे में एकान्त हो गया। बेगम साहिबा की यह हालत थी कि उनकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। मैंने बेगम साहिबा को शाहजादी और नवाब साहब के षडयन्त्र की सूचना दी। वह प्रसङ्ग भी बतलाया कि हवालात से मुझे बुलाया गया। उन पर ग़म का एक पहाड़ टूट पड़ा, परन्तु फिर भी सँभल कर उन्होंने कहा—

"मेरा भाई ऐसा नहीं हो सकता। तुम अभी नवाब साहब के पास जाओ और कहो कि मैं बुलाती हूँ।"

बेगम साहिबा के हुक्म के अनुसार मैं नवाब साहब को बुलाने के लिए पहुँची। नवाब साहब चुप रहे, केवल इतना कहा कि रात को आऊँगा।

× × ×

रात के कोई ग्यारह बजे होंगे। कमरे में एक मनहूस निस्तब्धता छाई हुई थी। लंकरान की बदकिस्मत बेगम अपने सोफे पर बैठी हुई अपनी किस्मत पर रो रही थी। पति के अत्याचार से सताई हुई थी। भाई की शरण में आई थी। भाई भी रक्षक से भक्षक बन चुका था। सोफे पर बैठी भाग्य का तमाशा देख रही थी।

दस मिनट के पश्चात् कमरे के मखमली पर्दे पर थोड़ी-सी हलचल हुई। शाहजादी का नौजवान और चमकता हुआ चेहरा दिखाई दिया। एक दृष्टि उन्होंने अपनी चिन्ताग्रस्त आपा पर डाली। फिर कुछ समय के लिए ओझल हो गई। पाँच मिनट के पश्चात् नवाब साहब कमरे में प्रविष्ट हो गये। वे एक क्षण रुके, धीरे-धीरे आगे बढ़े और बातें प्रारम्भ हो गई। मैं चुपके से बाहर चली गई। परन्तु एक उपयुक्त स्थान पर पहुँच कर सब कुछ सुनती रही। मलका जमानी ने शिकायत करते हुए नवाब साहब से कहा—

"यह क्या हो रहा है—मेरे कान क्या सुन रहे हैं और मेरी आँखें क्या देख रही हैं.....क्या यह मेरे बाप का घर नहीं है? क्या यह सब मेरे अपने ही भाई के घर में हो रहा है?"

नवाब साहब ने कहा, "जो कुछ भी हो रहा है, कफतरा के दुश्मनों से बदला लेने के लिए ही हो रहा है। वह कौन-सी अपमान की बात नहीं था जो कफतरा की शाहजादी के लिए लंकरान में नहीं की गई। तुम्हारे साथ क्या कुछ नहीं हुआ। क्या तुम मेरी बहिन... सगी बहिन नहीं हो। क्या तुम्हारा अपमान लंकरान में बाँदियों और लौंडियों ने नहीं किया? क्या यह अपमान तुम तक ही था...? क्या लंकरान के उस जानवर ने तुम्हारे मस्तक को बदमाश और आवारा औरतों के चरणों में नहीं झुकवाया? उस जानवर ने मजबूरी से यह समझा कि कफतरा का नवाब चुप होकर बैठ जावेगा। चोट खा लेगा और तुमने भी यह समझ लिया कि वह चोट खाकर बैठ जावेगा। क्या उसमें शराफत की एक चिंगारी भी नहीं है? वह समय जा

चुका है कि कफतरा के शाही खून से लकरान की गलियाँ लाल होतीं। कफतरा की तलवारों की टंकार जब लंकरान के महलों में गूंजती, वह समय तो गया। अब जो भी कुछ इसका बदला लेने के लिए बाकी है, वही किया जावेगा। इसलिए खुदा को धन्यवाद देता हूँ और प्यारी बहिन के सामने अपने दायित्व को पूरा करता हूँ।"

मलका जमानी ने कहा—"न मालूम इस बकवास से तुम्हारा क्या मतलब है कि लंकरान से बदला लेने के लिए अपनी बहिन का मुँह काला करोगे, अपनी बहिन को जलील करोगे। या अपनी भांजी की इज्जत पर आक्रमण करोगे ?"

पूर्व इसके कि नवाब साहब उत्तर देते, शाहजादी साहिबा बीच में आ टपकीं। बेगम साहिबा के अन्तिम वाक्य के उत्तर में बोलीं, "आपाजान, आपको न जाने क्या हो गया है ? हमारी भांजी ! खुदा न करे, लंकरान वालों से हमारी भांजी हो। हमारे खानदान और हमारी बहिन को अपमानित करने वाले बदमाश की लड़की हमारी भांजी नहीं हो सकती। हम तो इससे अपनी बहिन का दिल खोल कर बदला लेंगे।"

"खुदा का गजब है। खुदा से कुछ डरो। मेरी अपनी बेटी की चोटी और नाक काट कर बदला लोगे ? मैं यहाँ पर उपस्थित हूँ। मेरे जीते जी किसी की मजाल नहीं कि तुम मेरी बेटी को कुछ कहो। इसके स्थान पर मैं स्वयं मौजूद हूँ ! लेलो बदला मुझसे।"

नवाबसाहब और शाहजादी साहिबा ने मिलकर एक आवाज़ में कहा, "न मालूम आप लोगों को क्या होगया है।"

मलका जमानी बोली, "मुझे क्या होगया है ! यह कहो कि तुम दोनों को क्या होगया है। खुदा ने वह दिन दिखाया कि लंकरान से विद्रोह किया और अब सगे भी दुश्मन बन गए। एक नवाबकी बेटी, नवाब की बहिन, एक नवाब की पत्नी किसी को न बनाए। वाह! अल्ला

मुझे तू किसी मजदूर गरीब के घर पैदा करता। ऐसी बादशाही पर लानत भेजती हूँ। खुदा के लिए, तुम दोनों मेरे भाई और बहिन हो, मेरे ऊपर रहम करो। मुझे अपने बाप की राजधानी से अपनी बेटी को लेकर निकल जाने दो। मैं अपनी बेटी के साथ जैसे भी हो गुजर कर लूंगी।"

इतना ही कह पाई थीं कि बेगम साहिबा की आँखें भर आईं, दिल भर आया और मुँह छुपा कर खामोशी से रोने लगीं। नवाब-साहिब ने शाहजादी की ओर देखा। शाहजादी ने चल देने का इशारा किया। दोनों चलने को ही थे कि बेगम साहिबा चौंक कर बोलीं, "ठहरो तो।"

दोनों ठहर गए। बेगम साहिबा ने अपनी आँखें पोंछ कर गला साफ करके कहा, "तुम्हारा मतलब क्या है—क्या सचमुच मेरी बेटी की नाक और चोटी काट लोगे?" नवाब साहब कुछ कहने ही वाले थे कि शाहजादी साहिबा बोली, "फिर वही बेटी-बेटी कहे जा रही हो। आप सुन लीजिये, वह आपकी बेटी नहीं है और न हम उसकी नाक-चोटी काटेंगे। हम तो बदला लेंगे। जैसे कतरा की शाहजादी लंकरान में अपमानित हुई, वैसे ही उसका अपमान यहाँ किया जायेगा और इसकी खबर लकरान भेजेंगे। और अभी-अभी तो हम इसको लौंडी बनायेंगे, सेवा का काम लेंगे, बाँदियों में रखेंगे।"

अन्तिम शब्दों को सुन कर बेगम साहिबा के मुँह से एक चीख निकली। नवाब साहब और शाहजादी साहिबा पीठ मोड़ कर चले ही थे कि बेगम साहिबा ने झपट कर भाई को पकड़ लिया। "खुदा न करे...ऐसा नाटक मैंने कभी नहीं देखा था।" बेगम साहिबा ने रो-रोकर...दहाड़-दहाड़ कर भाई की खुशामद की। शाहजादी साहिबा बेगम साहिबा से झगड़ने लगीं। कुछ थोड़ी-सी तनावपूर्ण

बातें हुई। नवाब साहब और शाहजादी साहिबा अपना निश्चय बता-कर चले गए।

बदकिस्मत मलका ने आह भरी, अपने माथे पर हाथ रखा, बेबस होकर बैठ गई और मुर्झाकर गिर पड़ी।

रात का सन्नाटा था। कफतरा के आलीशान महल के जग-मगाते कमरे में कफतरा की बड़ी शाहजादी भाई और बहिन से चोट खाकर घायल और अधमरी हालत मे पड़ी थी। रेशम के कालीन, शाही लिबास और कफतरा का विशाल भवन इस बदकिस्मत शाहजादी के लिए बेकार था। मैं पास खड़ी थी। और सचमुच कहती हूँ—लंकरान की इस बदकिस्मत शाहजादी पर आठ-आठ आँसू रो रही थी।

कफतरा का हौलनाक बदला

बेगम साहिबा को जब होश आया तो मैंने उनको उनके विश्रामासन पर पहुँचाया। कोई पंद्रह मिनट इन की फिर गशी की हालत रही। ऐसा प्रतीत होता था कि वे बरसों की बीमार हैं। मरी हुई आवाज में उन्होंने मुझसे कहा—

"कमबख्त यहाँ क्या कर रही है? जिस राह में चोटी कटवाई है उसी राह में नाक भी कटवा दे। जल्दी जा।"

मैं स्वयं मानो चौंक-सी पड़ी। अबतक साजजादी साहिबा की ओर से मैं बेखबर थी। अन्दर से जो रास्ता उस महल में जाता था वहाँ पर कड़ा पहरा था। न कोई आ सकता था और न कोई जा सकता था। शाही महलों में दिन-रात एक-सी चहल-पहल रहती है। बाहर निकल कर साजजादी साहिबा की ड्योढ़ी पर पहुँची तो सिपाहियों ने मुझे रोक लिया। दरवाजा बिल्कुल बन्द था। वहाँ पर तो ऐसी सख्ती थी कि अन्दर से भी कोई बाहर नहीं आ सकता था। मानो हर प्रकार से आवागन बन्द था। शाही आज्ञा के बिना कुछ भी नहीं हो सकता

था। मैं सोच रही थी कि शाही आज्ञा कितनी कठिन है। नवाब कफतरा तो अपने स्वप्न-स्थान पर चले गए होंगे। रात के तीन बज चुके थे। मैं इसी पशोपेश में थी कि नवाब साहब की भेजी हुई खवास मेरी खोज करती हुई आ निकली। संक्षेप में समझो कि मैं नवाब साहब के पास पहुँच गई। वे स्वप्न-स्थान में बैठे थे। एक अद्भुत-सा महल था। अनेकों प्रकार के प्रकाश इस महल में थे। रेशम के परदे लगे थे, जिनमें से धीमी रोशनी बहुत सुहावनी प्रतीत हो रही था। ऐसा प्रतीत होता था कि रङ्गदार चाँदनी छा रही हो। चारों ओर रेशमी कालीन बिछे थे। सारे-का-सारा कमरा हरे रङ्ग से आच्छादित था। परदों की भूल-भुलैयों में नवाब साहब का स्वप्न-स्थान लगा था। वे तकिया लगाए धुआँ छोड़ रहे थे। धुआँ बलखाता हुआ छत की ओर उठ रहा था।

जैसे ही मैं पहुँची और सलाम किया, वे बोले, "इधर आओ।" मैं सुन्दर पर्दे के पास पहुँच कर घुटनों के बल झुक गई और बड़े मान के साथ पर्दों को चीरकर उस स्थान के पास पहुँच गई। मेरी ओर देखकर नवाब साहब कुछ मुस्कराए। मैं चुप रही तो धीरे-से बोले—

"जलालते आब आकाए लंकरान की साजजादी साहिबा पर मा बदौलत ने कृपा फरमाई है—वह यह है कि मा बदौलत ने इन्हें अपनी खास दासियों में सम्मिलित कर लिया है और इनको इस सेवा पर लगाया है कि आज रात को स्वप्न-स्थान शाही में पैर दबाने की सेवा करें। मेरे विचार में यह लंकरान की शाहजादी और उसके उच्च खानदान के लिए गर्व का विषय होगा। तुम लंकरान की गुप्तचर और नमकख्वार हो। अच्छा है कि मा बदौलत को धन्यवाद दो और जल्दी-से-जल्दी अपने स्वामी की पुत्री को सेवा में हाजिर करो।"

यह भयातुर फैसला सुनकर मेरे तन-बदन में सन्नाटा छा गया। आत्मा तड़पती हुई प्रतीत हुई। समझने में नहीं आया, क्या कहूँ—क्या न कहूँ। परन्तु जिस तरह भी हो सका मैंने कहा, "रहम! ऐ मेरे

शहनशाह ! अपने बल और वैभव की तरफ देखिये और एक कमजोर और लाचार चींटी पर रहम कीजिए । एक अत्यन्त पवित्र, विवाहिता और इज्जत वाली गरीब शाहजादी जो अपने बाप की सख्तियों से तंग आकर आपके साए में पनाह खोजती है, उसे अपने आनंद और सुख से रहित न करो । ऐसी पतिव्रता, ऐसी नेकदिल और ऐसी पारसा शाहजादी की मिट्टी खराब होगी तो उसका पति तड़प-तड़प कर मर जावेगा और वह स्वयं भी मर जावेगी । खुदा के वास्ते उस पर रहम कीजिए । ऐसी नेकदिल शाहजादियाँ बहुत कम होती हैं । कुछ नहीं तो इसकी ईमानदारी का ही विचार कर लो और रहम कर दो ।"

मेरे इस छोटे-से भाषण का परिणाम यह निकला कि नवाब साहब ने जरा तेज आवाज में कहा, "गुस्ताख ! तेरी यह मजाल कि मुझे उपदेश देती है । मैं तुझे हुक्म देता हूँ कि दस मिनट के अन्दर अपनी आकाजादी को मेरे कदमों में उपस्थित कर । वरना याद रख, जिन्दा दफन करवा दूँगा ।"

इतना कहकर नवाब साहब ने तकिए के नीचे एक बटन को दबाकर घंटी बजाई । 'हाजिर, हाजिर' कहते हुए चार ख्वाजा स्वप्न-स्थान पर उपस्थित हुए । नवाब साहब ने मुझे जाने का संकेत किया और ये गूंजी मुझे पकड़ कर ले चले । स्वप्न-स्थान से मिला हुआ एक कमरा था । वहाँ ले जाकर उन्होंने एक दरवाजा खोला, बटन दबाया और बिजली की रोशनी में नीचे कुछ सीढ़ियाँ दृष्टिगोचर हुईं ।

सीढ़ियाँ उतर कर एक अत्यन्त रहस्यमयी सुरंग का रास्ता था । उसमें रोशनी हो रही थी । यह रास्ता उस महल में निकला था जहाँ शाहजादी साहिबा थीं । रास्ता बीत जाने पर और सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ीं । एक दरवाजा आया, जिसको खोलकर ख्वाजाओं ने कहा—"जाओ ! और हुक्म का पालन करो । हम यहाँ खड़े हैं ।" यह रास्ता एक खाली कमरे में खुलता था । कमरे दर कमरा होती

हुई मैं शाहजादी साहिबा के कमरे में पहुँची। ठीक कहती हूँ कि मैं बहुत ही घबराई हुई थी। सब खवासियों ने मुझे घेर लिया। सबकी सब बेखबर थीं कि बाहर क्या हो रहा है। मैंने कुछ भी उत्तर नहीं दिया और पता किया कि शाहजादी साहिबा कहाँ हैं। पता चला कि वे नमाज पढ़ रही हैं। मैं खवासियों को झटक कर सीधी शाहजादी साहिबा के कमरे में पहुँची। नमाज पर बैठीं वजीफा पढ़ रही थीं। इस प्रकार मुझे देखकर चौंक पड़ीं। कुछ सँभल कर, लेकिन कुछ भोलेपन से उन्होंने मुझसे कहा—

"खैर तो है! क्या मामला है? खुदा न करे, क्या सचमुच मामा साहब हम से नाराज हो गए हैं। हमें क्यों कैद दिया है? नवाब दौला साहब कहाँ हैं और बालदा साहिब कहाँ हैं? खुदा के वास्ते मुझे सब हाल बताओ।"

मैंने ये शब्द सुने और अल्लाह का नाम लिया। इससे भी अधिक तड़पन क्या हो सकती है? किस भोलेपन से अपने घातक को शाहजादी साहिबा मामा कह रही थीं। बिल्कुल उसी प्रकार से जिस प्रकार से अन्तिम समय तक कुर्बानी का बकरा अपने मालिक का हाथ चाटता रहता है—वही हाथ जो बहुत जल्दी ही छुरी से गरीब का गला काट देता है। मैं क्या उत्तर देती, मैंने अपना सिर शाहजादी साहिबा के कदमों में रख दिया। रो-रो कर मैंने कहा—

"ऐ, मेरी प्यारी शाहजादी...तबाही और जिल्लत का सामना है। लंकरान के शाही खानदान की इज्जत का सूर्य अब छुप रहा है। खुदा के वास्ते मौत की तैयारी करो।"

शाहजादी, जिसके चेहरे पर भोलेपन की सरिता हिलोरें मार रही थीं और तेज प्रकाश से चेहरा चमकता था, मेरे भयातुर शब्द सुनकर घबरा गईं। जल्दी-जल्दी में मैंने सारी कहानी सुना दी। सिर खोलकर दिखलाया कि मैंने आपको बचाने के लिए चोटी कटवाई, मगर अफसोस आपने मुझे दुश्मन समझा। मुझे आए दस,

नहीं, बीस मिनट हो चुके थे।...और मैं जानती थी कि कफतरा का गुस्सा बल खा रहा होगा। शाहजादी साहिबा को मैं खतरे से आगाह कर रही थी कि एक खवास घबराई हुई आई कि ख्वाजाओं का एक दल महल में घुस आया है। यह कहते ही ख्वाजा सराओं के पैरों की गुस्ताख और बदतहजीब आवाजें कमरे में आईं। "वे आगए" परेशानी और बेबसी की दुनियाँ में मेरी जुबान से निकला। शाहजादी साहिबा ने अपना भोला और खूबसूरत चेहरा उठाकर एक अपराधी की तरह इधर-उधर देखा। बड़ी हिम्मत के साथ कुरान शरीफ की आयत पढ़ी और कहा कि मुसीबत के समय खुदा से नमाज और इबादत से सहायता चाहूँ। यह कहकर उन्होंने नमाज शुरू की। लंकरान का शाही दबदबा और जलाल मैंने इस इबादत में देखा। ख्वाजा बड़बड़ाते हुए कमरे में घुस आए। न जाने किस कारण, वे खड़े रहे। "शाहजादी साहिबा" उन्होंने कहा। शाहजादी साहिबा को न सिर ऊपर उठाना था न उठाया। ख्वाजा कुछ झपके। उनमें से एक आगे बढ़ा और खबर करने नवाब साहब के पास पहुँचा। वहाँ उसे क्या आज्ञा मिली इसका अनुमान इसी से लगाया जासकता है कि आते ही सबसे पहले उसने मुझे लातें मार कर घसीटा और धक्के देता कमरे के बाहर ले गया। मुड़कर मैंने देखा तो पाया कि चार-पाँच ख्वाजा शाहजादी साहिबा को घसीट रहे हैं। इसी सुरंग के रास्ते से ले जाती हुई मैं स्वप्न-स्थान पर पहुँची। मुझे नवाब साहब के सामने ले जाकर डाल दिया गया। शाहजादी साहिबा को भी वे फूल के समान उठाकर ला रहे थे। बजाए गुस्से होने के नवाब साहब हँस दिए। शाहजादी साहिबा को भी लाकर बैठा दिया गया। शाहजादी साहिबा का चेहरा उनके कपड़ों में छुपा हुआ था। दो ख्वाजा सराओं ने झटका देकर शाहजादी साहिबा को खड़ा किया और तीसरे ने डाँटकर कहा—

"आज लंकरान की किस्मत जाग पड़ी। जहांपनाह ने तुम्हें

बन्दियों में दाखिल कर लिया है। तुम्हारी तकदीर जाग उठी। चलो, खिदमत करो।"

दो ख्वाजा सराओं ने स्वप्न-स्थान का पर्दा उठाया और दो ख्वाजा सराओं ने शाहजादी को उठाकर नवाब साहब की बायीं ओर रख दिया—उस स्टूल पर जिस पर पैर दबाने वाली लौंडियाँ बैठा करती हैं। शाहजादी साहिबा ने इसी तरह मुँह दबाये वहाँ से भागना चाहा तो नवाब साहब ने लपक कर शाहजादी साहिबा को पकड़ लिया। इनके मुँह से और साथ ही मेरे मुँह से एक चीख निकली। कुछ समझ भी न पाई थी कि ख्वाजा सराओं ने मुझे धकेल कर दरवाजे से बाहर कर दिया। स्वप्न-स्थान के दरवाजे बन्द कर दिए गए। एक घण्टी की आवाज अन्दर से आई। ख्वाजा ससरा ने अन्दर हरी रोशनी कर दी थी। रोशनी हल्की-सी थी। यह रोशनी इस बात की घोषणा कर रही थी कि नवाब साहब स्वप्न में हैं। एक मिनट भी न बीता था कि सिपाहियों और गारद ने चारों तरफ पहरा लगा दिया और सङ्गीनें तान लीं। उन ख्वाजा सराओं ने दो-तीन लातें मेरे मारीं और मुझे मेरा रास्ता बतलाया।

मैं घबराई हुई हालत में मलका जमानी के पास पहुँची। वे बड़ी बेचैनी के साथ मेरी प्रतीक्षा में थीं। मैंने पहुँच कर सिर पीटा और कहा, "हाय, लंकरान की इज्जत का बेड़ा गर्क हो गया।"

संक्षेप में, जो कुछ बीता था वह सब मैंने मलका जमानी को बतला दिया। बेगम साहिबा की हालत वैसे ही बड़ी नाजुक थी। सुनते ही एक दर्द भरी चीख उनके मुँह से निकली और फिर बेहोश हो गईं।

कफतरा का खौफनाक बदला

मलका जमानी की और मेरी रात किस प्रकार बीती इसे जाने दीजिए। मलका जमानी का किस्सा छोड़ कर मैं सीधे आगे ही चलती हूँ। सुबह नौ बजे के लगभग नवाब साहब ने मुझे फिर बुलवाया। बात को संक्षेप से कहूँगी। मैं पहुँची तो प्राइवेट सैक्रेटरी एक पत्रको लिये बैठे थे। मैंने पहुँचते ही सलाम किया। नवाब साहब ने मुझसे कहा—

"जो कुछ तुमने अपनी आंखों से देखा है और कानों से सुना है, वह अपने घमण्डी आका को जाकर बता देना। मैंने जान-बूझ कर इसीलिए तुम्हें यह तमाशा दिखाया है और तुम्हारी जान बख्श दी है वरना लंकरान का कुत्ता भी फाँसी पर लटका दिया जाता। अब तुम जाओ और यह पत्र अपने आका को दे देना और कह देना कि गौर से और ठण्डे दिल से पढ़ें। तुम्हारी यहां की सेवा के लिए सफर खर्च के अतिरिक्त पाँच सौ रुपये भी दिए जाते हैं। तुम सीधी यहाँ से स्टेशन जाओ। महल के अन्दर जाने नहीं दिया जावेगा।"

इतना कह कर प्राइवेट सैक्रेटरी से पत्र लेकर उस पर हस्ताक्षर किए। लिफाफा बन्द किया गया और

उस पर शाही मुहर लगाकर उसे थैली में बंद कर दिया गया। फिर उसके ऊपर भी फीता लपेट कर सात मुहरें लगाई गई। रुपये दे दिये गये और मुझे सीधा स्टेशन भेजा गया। संक्षेप में, मैं सैकण्ड क्लास में बैठ कर बम्बई पहुँची। मुझे लंकरान के जहाज में बिठा दिया गया। कफतरा के सिपाही वापिस चले गए।

लंकरान पहुँच कर मेरी हालत बहुत ही चिन्ताजनक थी। मुँह छिपाए रात के समय मैं महल में पहुँची। किसी से मैंने बात तक नहीं की। हाँ, यह मालूम कर लिया कि मेरी चोटी पारसल से जहांपनाह के पास पहुँच चुकी है। अब सीधी जहांपनाह की सेवा में पहुँची। पहुँचते ही सलाम करने के स्थान पर मैंने अपना सिर खोल दिया। और मुँह पीट कर दहाड़ी—चीखी "दुहाई है, आकाए लंकरान की! मैं तबाह हो गई।"

इतना कह कर और खत को आगे पटक कर काँपते हुए कहा, "शहनशाह लंकरान की इज्जत का बेड़ा कफतरा के तूफान में डूब गया। जुबान में ताकत नहीं कि वर्णन कर सकूँ।"

जहांपनाह ने खत को खोला। मैं अपनी जुबान से कुछ कहना नहीं चाहती थी। लिफाफा फाड़कर काँपते हुए हाथों से जहांपनाह ने खत निकाला। चेहरे का रंग एकदम से उड़ गया था। एक क्षण के लिए जहांपनाह के हवाश परेशानियों से न जाने कहाँ पहुँच चुके थे। खत अभी पढ़ कर समाप्त ही किया था कि प्रतीत हुआ जैसे संसार ने उन्हें कुचल कर रख दिया हो। गर्दन एकदम से झुक गई थी। खत हाथ से छूट चुका था। चेहरे पर मुरझाहट-सी छा गई थी। आकाए लंकरान की वह ज़िल्लत हुई कि वह अपनी ही आंखों में जलील था।.....गरीब से गरीब और जलील से जलील व्यक्ति भी इतना जलील नहीं होता। लंकरान का सारा गर्व चकनाचूर होगया। उसके शाही खानदान की इज्जत मिट्टी में मिल गई। आप विश्वास कीजिए पत्र का विषय यह था—

"लंकरान की तकदीर जाग उठी। माने मा बदौलत के लंकरान की बड़ी शहजादी को.....अजराह गुर्बा परवरी अपनी कनीजों में सम्मिलित कर के एक ऐसे एहसान और करम की मिसाल पेश की है जिसका मिलना सारी दुनियां में कठिन है। लकरान के खानदान के लिए यह घटना सदा गर्व का कारण बनेगी। और शाह लंकरान नसल दर-नसल यह गर्व करेंगे कि लकरान की शाहजादी को कफतरा के शाही खानदान की इस प्रकार गुलामी प्राप्त हुई। मा बदौलत ने हफ्ता भर के लिए लकरान की शाहजादी को पैर दबाने व दूसरे कामों के लिए नियुक्त किया है। शाहजादी साहिबा और इनके पिता को यह पता चलना चाहिए कि अगर शाहजादी ने सेवा अच्छी प्रकार से की तो मा बदौलत इनामोकराम देंगे। अगर वो ऐसा न कर सकीं तो शाहजादी साहिबा का दरजा तोड़ दिया जावेगा और किसी नमक ख्वार को उन्हें बतौर कनीज बख्श दिया जावेगा। कनीज के पिता को खबर कर दी जावेगी।"

—हस्ताक्षर फरमानरवाए कफतरा

स्पष्ट है कि जहांपनाह का क्या हाल हुआ होगा। पराजय और गम के कारण पसीना आ गया था। मरी हुई आवाज से मेरी ओर देखा और कहा—

"क्या यह मुमकिन है?"

मैं भला क्या जवाब देती। आँखों से आँसू बहा रही थी। और यही सब से अच्छा उत्तर भी था। मैंने शुरू से अन्त तक सब कुछ कह सुनाया। बड़ी देर तक आंखें बंद किए हुए एक बुत के समान बैठे रहे, फिर एक ठण्डी सांस ली और कमरे में टहलना प्रारम्भ किया। यह टहलना क्या था कि जिसका फन कुचला हुआ था और वह बल खा रहा था।

मगर बदकिस्मती से कफतरा के बदले का अभी यह प्रारम्भ ही था। आगे का किसी को कुछ नहीं पता था।

कफतरा के बुजदिल और बर्बर नवाब के खौफनाक बदले के

परिणाम आवश्यकता से अधिक बुरे सिद्ध हुए। सब से पहले बद-किस्मत शाहजादी के ऊपर जो अन्याय और बर्बरता का व्यवहार किया गया, उसको सुनिए। जब से दुनियाँ बनी है, हजारों जुल्म हुए हैं, हजारों जुल्म सुने हैं; परन्तु आज के पढ़े-लिखे और विज्ञान के युग में रहने वाले कफतरा ने जो जुल्म एक बेगुनाह शाहजादी पर किया इसका उदाहरण आजकल के समय में मिलना कठिन है। जरा ध्यान दीजिए कि एक बेगुनाह शाहजादी से उसका पति अलग कर दिया जाता है, बच्चे छीन कर शाही यतीमखाने में दे दिए जाते हैं। स्वयं शाहजादी की इज्जत और आबरू मिट्टी में मिला दी जाती है। यह सारे के सारे जुल्म एक झूँठे बदले के लिए ही होते हैं।

बदले की चरम सीमा

उस गरीब शहजादी पर जो अत्याचार किया गया उसका भी कुछ हाल सुन लीजिए। दो-तीन हफ्ते कफतरा के नवाब ने उनको अपनी कनीज के रूप में रखा। उनके दो बच्चे शाही महल के यतीमखाने में दे दिए गये जो वहाँ के शाही खानदान के यतीमों के साथ रखे गए। परन्तु कफतरा के जानवर नवाब ने बहुत जल्दी ही अपने ए० डी० सी० को बतौर लौंडी के सपुर्द किया। उस ए० डी० सी० से जहाँपनाह लंकरान के नाम एक पत्र लिखवाया कि आजकल शाहजादी—राजजादी साहिबा मेरी सेवा में बतौर एक लौंडी के रहती हैं। इस प्रकार उस गरीब शाहजादी को एक ए० डी० सी० के पास से दूसरे के पास और फिर तीसरे के पास भेजते रहे। संक्षेप में, यूं सुनिये कि बारी-बारी से सारे ए० डी० सी० और दूसरे मुँह चढ़े दरबारियों के पास उसे रहना पड़ा। बारी-बारी सबने जहाँपनाह को वैसे ही पत्र लिखे। जहाँपनाह की हालत का कोई ठीक अनुमान नहीं लगा सकता कि यह खबर उनके पास किस दुःख का कारण थी; परन्तु दुनियाँ दुनियाँ है। और कोई गरीब आदमी होता तो अपनी जिन्दगी को समाप्त भी कर चुका

होता। परन्तु बादशाह को खुदा जहाँ इतनी अधिक दौलत और कीर्ति देते हैं, वहाँ पत्थर का दिल भी देते हैं। कितना बड़ा दुःख था? जहाँपनाह जहाँ रातों-रात बैठे उस बेगुनाह शाहजादा की बदकिस्मती पर आँसू बहाते और सिर धुनते थे, वहाँ नाच और रङ्ग के जलसे भी होते थे।

सब कुछ तो था ही, परंतु शाहजादी की तकदीर में हर प्रकार की मुसीबत लिखी थी। जब हर प्रकार के शारीरिक और आत्मिक कष्ट शाहजादी को पहुँचाए जा चुके और फिर भी निर्दयों का दिल ठण्डा न हुआ तो शाहजादी साहिबा को नवाब साहब की छोटी बहिन ने, कलकत्ते में एक सहेली के रसोइए को दे दिया। यह सहेली कलकत्ते के एक लखपति की लड़की थी। उस रसोइए ने भी वहाँ से वैसा ही पत्र जहाँपनाह को लिखा। जब यह पत्र आया तो जहाँपनाह ने सिर पीट लिया और चीख कर कहने लगे—"कोई नमकख्वार है, जो इस नामुराद और नाशाद बेटी को समाप्त कर सके।"

वस्तुतः, जब तक शाहजादी साहिबा कफतरा में थीं, जहाँपनाह का बस नहीं चलता था। परन्तु अब जो जहाँपनाह को पता चला कि शाहजादी साहिबा कलकत्ते में आगईं तो उन्होंने निश्चय किया कि उनको समाप्त कर दिया जावे और इस सेवा पर बदकिस्मती से मुझे लगाया गया था। मेरी सहायता के लिए दो-चार और भी व्यक्ति लगा दिए गए।

पूर्व इसके कि मैं इस कहानी को और आगे बढ़ाऊँ, मलका जमानी और नवाब दौला साहिब का हाल भी सुन लीजिए। नवाब दौला जहाँपनाह की मरजी के खिलाफ नीलगिरि से साजजादी साहिबा सहित कफतरा चले गए थे। इस प्रकार खुल्लमखुल्ला विद्रोह करके मलका जमानी के साथ मिल गए। इसका परिणाम लंकरान में यह निकला कि नवाब दौला साहब के घर वालों पर बहुत सख्तियाँ हुईं। नवाब दौला के चचा आबनूस खाँ की इसमें कोई साजिश नहीं

थी। मगर जहांपनाह ने उसे बहुत ही अनूठे ढङ्ग से व्यवहार किया। शहर के बहुत-से भंगी उस घर के पास भेजे गए ताकि वे वहाँ जाकर यह गीत ढोल बजा-बजाकर गावें—

"जहांपनाह का बोलबाला और आबनूस का मुँह काला।"

रात को भंगी वहाँ पहुँचे, तभी भेष बदल कर मैं भी पहुँची। वहाँ पहुँची तो मैंने वफादारी का एक अजीब तमाशा देखा। आबनूस खां के सारे दोस्त और रिश्तेदार वहाँ पर उपस्थित थे। पान, इतर और हुक्का का दौर चल रहा था। भंगी गाते जा रहे थे—"जहाँपनाह का बोलबाला और आबनूस का मुँह काला।" आबनूस खां और इनके दोस्त हँस-हँसकर गाना सुन रहे थे और भंगियों को इनाम दे-देकर विदा कर रहे थे। रात भर इसी प्रकार का नाच होता रहा और आबनूस खां ने वफादारी का सबूत देकर अपनी जान बचाई। मैंने जब आकर जहांपनाह को हाल बतलाया तो बहुत प्रसन्न हुए। ये हैं वे तरीके जिनकी सहायता से देश के ठेकेदारों से जान बचाई जाती है। वरना आबनूस खां की इज्जत का खात्मा था।

इस घटना के साथ-ही-साथ यह आज्ञा निकल चुकी थी कि नवाब दौला विद्रोही हैं और जो उनको शरण देगा या सहायता देगा, उसको कड़ी सजा दी जावेगी। उसके सहायक अगर लंकरान की सीमा में पाए गए तो उनका खात्मा कर दिया जावेगा। मानों कफ-तरा पहुँचते ही नवाब दौला का प्रवेश लंकरान में बन्द हो चुका था। कफतरा से जब निकाले गए तो बहुत शशोपंज में पड़े। इनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें? कहाँ जावें और कहाँ न जावें? लंकरान की तो कोई चिन्ता नहीं थी परन्तु कफतरा में तो इनके बीवी और बच्चे थे। बेचारे बहुत घबरा रहे थे। इनको क्या मालूम था कि शाहजादी पर क्या गुजर रही थी। कफतरा से क्यों निकाले गए इसका भी कोई अर्थ उनकी समझ में नहीं आ रहा था। इसी प्रकार परेशान थे। बम्बई में एक दोस्त ने सलाह दी कि जो इनके

पास एक-दो लाख रुपया है उससे ये तिजारत कर। इस कारण कलकत्ते चले गए और वहाँ जाकर मोटरों का एक कारखाना खोला। मगर ध्यान तो सारा बीवी और बच्चों में रहता...बहुत ही गमगार रहते। काम भी बन्द करना पड़ा। बीवी और बच्चे रह-रह कर याद आते। करें तो क्या करें...बीवी और बच्चों की याद से तड़पते रहे और सिर पीट-पीट कर मर गए। जिन्होंने देखा—वे कहते थे कि सचमुच वे अपने घर-बार की तबाही पर सिर पटक-पटक कर मर गए।

नवाब दौला तो इस तरह से पागल होकर तीन-चार महीने में खत्म हो गए और इनकी मुश्किलें आसान हो गई। अब कुछ मलका जमानी का हाल सुनिए। इन्हें साजजादी साहिबा से सच-मुच बेटी जैसी मुहब्बत थी। सगे भाई और सगी बहिन के बर्बर व्यवहार ने इन्हें भी पागल कर दिया। इनकी उम्र ही मुसीबतों में कटी थी। सख्तियाँ झेलते-झेलते अबतक बूढ़ी हो चुकी थीं। इस सदमे ने उन्हें कब्र के गड्ढे में धकेल दिया। इनकी मुश्किल यों आसान होगई।

अब मैं फिर साजजादी साहिबा की कहानी शुरू करती हूँ। कलकत्ते में पहुँच कर जब सभी शारीरिक और आत्मिक कष्ट भोग चुकीं तो शाहजादी कफतरा ने पिटवा कर इन्हें सचमुच निकलवा दिया। जिस प्रकार किसी फकीरनी को रईसों के यहाँ से धक्के मार कर निकाल दिया जाता है। जरा ध्यान दीजिए लंकरान के शाही महलों की रौनक कलकत्ते में धक्के खारही थी।

मैं जब कलकत्ते पहुँची तो शाहजादी कफतरा की सहेली का पता तो आसानी से मिल गया। शाहजादी साहिबा का पता लगाने में राजदारों को बहुत कठिनाई आई। फिर भी सब काम गुप्तरूप से चलते रहे किसी को कानों कान पता न चला और हमने शाहजादी का पता लगा लिया। एक गरीब के घर उनकी शराफत

के कारण उनको रोटी का टुकड़ा मिल रहा था। पूरे डेढ़ वर्ष पश्चात् मैंने शाहजादी को देखा था। वह लोग जो कतल करने आए थे, अपनी आकाजादी की हालत देख कर चीख उठे। साजजादी साहिबा मुझे देख कर बेहोश होगई।

संक्षेप में सुनिए, हम लोगों को शाहजादी साहिबा की जान लेना असम्भव होगया। खुदा की भी क्या माया है, शाहजादी साहिबा को मौत भी नहीं आई।...मैं यह सुन कर हैरान भी हुई, जब उन्होंने कहा कि मैं मरना नही चाहती.....केवल अपने बच्चों की मुहब्बत ने इनको सारी जिल्लतें सहन करने के लिए जिन्दा रखा और वे जिन्दा रहना भी चाहती थीं। शायद इनके संकटों का ऐतिहासिक पक्ष भी यही था। कुछ भी हो, हम लोगों ने बजाए कत्ल करने के नवाब दौला मरहूम के मोटर-कारखाने का रुपया जो बैंकों में था और जो रुपया मोटर-कारखाने के रूप में था, शाहजादी के नाम जमा करवा दिया। ऐसा करने में आसानी भी हुई क्योंकि स्वर्गीय दौला साहिब शाहजादी को ही रुपया दिए जाने के लिए लिख गए थे। शाहजादी के हाथ में रुपया आया तो इन्होंने एक मकान किराए पर ले लिया। और हम लोगों ने कतल करने के स्थान पर इनको जीता-जागता छोड़ कर पापों की दुनियां में डूब जाने की सलाह दी और चले आए। उन्होंने प्रयत्न करके कफतरा के किसी आदमी द्वारा अपने बच्चे भी पास बुलवा लिए। कफतरा का बदला ठण्डा हो चुका था। बच्चे इनको मिल गए।

मैं कलकत्ते से वापिस आई और जहाँपनाह से यह बात बनादी कि शाहजादी साहिबा शायद मर चुकी हैं। उनका कुछ पता नहीं। जहाँपनाह इस समय दिलरसबानो की बीमारी में लगे थे। दिलरसबानो का अन्तिम समय आ चुका था। कोई महीना भर बीमारी झेल-झाल कर वे भी सदा के लिए संसार से चल दीं। जहाँपनाह को इस ग़म ने बहुत अधिक सताया। सच तो यह है कि

दिलरसबानो की मौत ने इन्हें हमेशा के लिए जोश और जवानी से रीता कर दिया। एक तो बेटी की तबाही और खानदान की बेइज्जती का रंज था, दूसरे यह सदमा! इन दोनों सदमों से ऐसे कुचले गए कि बुढ़ापा निकट आने लगा। मगर मैं सच कहती हूँ, बादशाहों का सीना शेरों जैसा होता है। जमाना बीतता गया और बीतता जा रहा है। गम ढलते गए और ढल चुके हैं। और आज आप देख लीजिए कि लंकरान का शाही महल किस प्रकार से आबाद है। मलका मुअजमा भी खुश हैं और जहाँपनाह भी खुश हैं। आज, किसी को भी पता नहीं है कि हमारे बादशाह ने कैसे-कैसे गम सहे हैं, कैसे-कैसे दुःख देखे हैं।

आपको चाहिए कि इस कथा के ऊपर ध्यान देवें। जमाने का रंग पहचानें और होशियारी से काम लेवें। जमाने के धोखे से बचें। भविष्य आदमी को वर्तमान की चिन्ताओं से दूर ले जाता है और उसकी आँखें आगे जाकर खुलती हैं। वह उसी समय प्रयत्न के लिए आगे बढ़ता है जबकि पानी सिर पर गुजर जाता है। आप दामाद हैं, यह जानलें कि यह वे वलीअहद नहीं। अगर वलीअहद ही होते तो उनका भी हाल आपने सुन लिया है। आप परदेश जा रहे हैं—आगे के लिए होशियार रहिए। मैं अपना किस्सा इस अन्तिम नसीहत पर समाप्त करती हूँ।

पूना

अब पूना की कुछ दिलचस्पियों के विषय में सुनिए। पूना में मेरी फौजी ट्रेनिंग हो रही थी। माने यह कि मैं सचमुच आदमी से लंकरान का जनरल बनाया जारहा था। आदमी से जनरल कैसे बनता है, यह मैं आपको बतलाता हूँ।

मैं कर्नल गिलर के यहाँ भेजा गया और उन्हीं के बंगले पर रहता था। और आदमी से एक जनरल इस प्रकार से बनाया जा रहा था, कर्नल साहब ने सोचलिया था कि जितनी भी अधिक शिकायतें मेरी की जावेंगीं—जहाँपनाह और वलीअहद से, उतनी ही जल्दी फौजी नुस्खे मुझे मिलते चले जावेंगे। उधर जहाँपनाह और वलीअहद ने सोच रखा था कि जितना अधिक मुझे शाहजादी साहिबा से दूर रखा जायगा, उतनी ही जल्दी मैं आदमी से जनरल बन जाऊँगा। और मिसेज मिलर जिनके मैके वाले विलायत में आलू बेचते थे, यह समझती थीं कि दो सौ रुपये माहवार खाने-पीने का लेना बिल्कुल कम है। इसको बढ़ाया जावे और दूसरे खर्चों को कम किया जावे। जबतक यह न किया जावेगा मैं आदमी से जनरल नहीं बन सकूंगा। और बदकिस्मती सबसे बड़ी

यह कि मिजेज मिलर, कर्नल साहिब की नौजवान बीवी, साजजादी साहिबा—मेरे स्कूल की जरूरी वस्तुओं का ही ध्यान न रखतीं वरन् चाहतीं यह कि मैं उन पर आशिक होने को मजबूर हो जाऊँ। इनका ख्याल था कि इस प्रकार से मैं काफी उन्नति कर लूंगा। इस कारण उन्होंने मेरे ऊपर कुछ महरबानी करनी प्रारम्भ की तो दूसरी ओर मेरी और मुसीबत लादी। यह इसी कारण था कि शाहजादी साहिबा लंकरान में यह सोचतीं कि मैं मिसेज मिलर के हुस्नसे अपने पर काबू नहीं पा रहा। वैसे मैं सारी फौजी बातें सीख चुका हूँ। उन्होंने कहा कि मैं ऐसी जनरली नहीं चाहती जिसमें मेरा शौहर ही मुझसे निकल जावे। तुम बन जाओ जनरल और मेरा सबकुछ लुट जावे।

कारण यह था कि मेरे नौकरों में जो आदमी लंकरान से आए थे उनमें शाहजादी साहिबा का भी एक खास आदमी था। वह शाहजादी साहिबा की सबसे अधिक मुँहचढ़ी ख्वास का पति था। बदकिस्मती से शाहजादी साहिबा ने किसी अखबार में एक क्लब का हमारा फोटो देख लिया जिसमें मिसेज मिलर सटकर मेरे साथ बैठी थीं। अब हाल यह कि एक नहीं दर्जनों संदेश मेरे पास भेज चुकी थीं कि सब कुछ छोड़ कर वापिस आ जाओ। मैं भी सोच रहा था कि मुझे किसी न किसी बहाने से लंकरान जाना चाहिए। मगर दस रोज की भी छुट्टी मिलना कठिन था। अब बतलाइए कि आप होते तो क्या करते। संक्षेप में यह कि कुछ ही दिन बीते थे कि पूना की फौजी ट्रेनिंग बहुत तंग करने लगी।

धीरे-धीरे हालात असहनीय होगए। एक तो शाहजादी साहिबा ने लिख दिया कि अगर मेरी जिन्दगी चाहो तो वापिस आजाओ वरन् कमसे कम मिसेज मिलर का ही साथ छोड़ दो और अपने रहने-सहने का अलग प्रबन्ध करो। अब मैंने जो कर्नल साहिब से अलग रहने को कहा तो उन्होंने जहाँपनाह और वलीअहद का लिख दिया

कि काम चोर है अलग रहना चाहता है व निगरानी से बचना चाहता है। वली अहद साहिब और जहाँपनाह को यह सूचना मिली तो उन्होंने मेरी अच्छी खबर ली। कर्नल साहब को लिख दिया कि लंकरान बिल्कुल न आने देवें और अपने पास हीं रखें। मैं इन दिलचस्प मुसीबतों में फंसा आदमी से जनरल बनाया जा रहा था। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मुझे बड़ी ही अजीब मंजिल को तै करना पड़ेगा कि परिस्थितियों ने और ही पलटा खाया।

बालकल

मेरी मुसीबतें बढ़ती चली गईं। मै मुसीबतों से लड़ाई ले रहा था कि कर्नल साहब ने मेरा फौजी इम्तहान लिया जिसमे मै बहुत ही योग्यता के साथ नाकाम रहा और फेल हो गया। इस कारण कर्नल साहब ने जहाँपनाह की सेवा में एक ऐसी चटपटी रिपोर्ट भेजी कि बस न था। इसके जवाब में जहाँपनाह ने मेरी खबर लेने के लिये डंडा पार्सल करके भेज दिया और वली अहद साहब ने तो शाहजादी साहिबा का नाम लेना भी अपराध बतलाया। परिणाम यह निकला कि बजाए जनरली की ओर उन्नति करने के छः महीने की फौजी कवायद के पश्चात् यह उन्नति हुई कि फौजी दर्जा तीन महीने के लिये तोड़ दिया गया। वली अहद ने शाहजादी साहिबा से मेरा पत्र-व्यवहार भी बन्द करवा दिया। लंकरान के डाकखाने में सारे खत जप्त कर लिये जाते। इस बन्धन से मैं हैरान था।

कुमरुद्दीन के पत्र मुझे मिलते रहे। ज्यादातर वह रुपये-पैसे के विषय में ही लिखता रहता था। कभी-कभी वह भूले-भटके दूसरी बातें भी लिख देता था। मैंने यह

सोच कर उसे पत्र लिखा कि शाहजादी साहिबा से एक काल्पनिक स्थान पर पत्र-व्यवहार का सिलसिला शुरू किया जाय। इस कारण कुमरुद्दीन को मैंने संक्षेप में हाल लिखा और उसे कहा कि वलीअहद साहब के महल की सूचनाएँ मुझे भेजता रहे। जिस दिन मैंने उसे पत्र लिखा उसी दिन का जिक्र है कि वली अहद साहब का एक सन्देश मुझे मिला जिसमें कुछ झड़पें और पुराने आक्रमण मुझ पर किये हुये थे। पुरानी बात को उन्होंने फिर दोहराया। उन्होंने लिखा था, "क्योंकि मैं बहुत नालायक हूँ, इसलिये ही उनकी बहिन का पति बना रहने के योग्य नहीं और न योग्य बनने का प्रयत्न कर रहा हूँ। और अगर यही चीज चलती रही तो शाहजादी साहिबा को मुझसे 'बालकल' छुड़ा दिया जावेगा।" इत्यादि-इत्यादि।

इस पत्र को पढ़ते ही मै उलझन में पड़ गया। मैं बहुत हैरान और परेशान था। इधर मिसेज मिलर और कर्नल साहब मुझे तङ्ग कर रहे थे। तभी मुझे कुमरुद्दीन का पत्र मिला। उसने तो साहब, मुझे, दीवाना कर दिया। उसने शहर की गप्पों और वली-अहद के बंगले का हाल लिखा था। शहर में तो यह प्रसिद्ध ही था कि शाहजादी साहिबा को मुझसे 'बालकल' छुड़ा लिया जायेगा और वली अहद के महल की यह खबर थी कि उनके महल में वही लड़का ठहरा हुआ है जिसके साथ शाहजादी की सबसे पहले सगाई की बातचीत हुई थी। यह वह खबर थी जिसको सुनकर मैं एकदम फौजी बन चुका था याने मैंने उस दिन नौकरों को खूब ठोका और पीटा। कर्नल साहब से उलझ पड़ा और इसी प्रकार की और बहुत-सी हरकतें कीं। कवायद पर भी नहीं गया। मारे गुस्से के आज्ञा भी नहीं ली। कुमरुद्दीन के पत्र को बार-बार पढ़ा। उसमें लिखा था कि शाहजादी साहिबा मुझसे 'बालकल' छुड़ाली जाएँगी। और तो सब लेख साफ था, परन्तु यह 'बालकल' के अर्थ पता नहीं चल रहे थे। इससे पहले 'बालकल' शब्द का प्रयोग वली अहद भी

कर चुके थे, परन्तु इसकी कोई व्याख्या नहीं हुई थी और अब कुमरुद्दीन के अपने पत्र में भी इस शब्द की कोई व्याख्या नहीं दी गई थी। पत्र में यही सूचना लिखी गई थी कि वह मनहूस लड़का इनके यहां मेहमान बना हुआ है। इस कारण अभाग्यवश या सौभाग्य-वश मैंने यही शब्द 'बालकल' उठाया और नवाब वली अहद साहब को लिख दिया कि इस 'बालकल' शब्द की व्याख्या करें जिससे उसको समझ कर मैं 'बालकल' ही जर्नल बन जाऊँ। और यह पत्र मैंने डाल दिया।

अभी मेरे इस 'बालकल' वाले पत्र का उत्तर नहीं आया था। वह आने ही वाला था कि लंकरान से तार मिला कि जहाँपनाह पर उसी अजीब बीमारी ने आक्रमण किया है जिससे कि वे एक बार बाल-बाल बचे हैं। इसके बारे में डाक्टर लोग यह कह चुके हैं कि अगर यह बीमारी दुबारा हो गई तो इसका इलाज कठिन होगा। इस तार ने मुझे और भी परेशान कर दिया। मैंने कर्नल साहब से जाने की आज्ञा मांगी, तो उन्होंने मुझे वली अहद साहब से आज्ञा माँगने के लिये कहा। वली अहद साहब ने तार के माध्यम से कर्नल साहब को मना कर दिया कि मेरे आने की कोई जरूरत नहीं इसी सप्ताह मेरे 'बालकल' वाले पत्र का भी उत्तर आगया। इस पत्र में वली अहद आपे से बाहर हो गये। मैं इसका उत्तर देने ही वाला था कि लंकरान से तार मिला कि जहाँपनाह स्वर्ग सिधार गये हैं।

इस सूचना को सुनकर सिर से पानी उतर गया। मैंने उसके जवाब में एक संवेदना का तार वलीअहद बहादुर को भेज दिया। और जाने की तैय्यारी कर ही रहा था कि वलीअहद बहादुर का तार आया कि मत आओ। मैंने तार का जवाब दिया कि मेरा आना आवश्यक है। तार का जवाब आया कि खबरदार, अगर तुम आये तो। इस जवाब से मैं समझ गया कि अब ये सम्राट बन गये हैं और मेरे हाथ से जोरू भी गई। मैंने जल्दी की और कर्नल साहब से

कह दिया कि मैं अवश्य जाऊँगा। उत्तर में कर्नल साहब ने फौजी वारंट के माध्यम से धमकी दी। मैं गुस्से के मारे लाल होगया और बजाय अंग्रेजी की टाँग तोड़ने के मैंने हिन्दी में कर्नल साहब से दहाड़ कर कहा, "अरे, ओ कबूतरी के बच्चे कर्नल, फौजी पुतले, हमारे सुसर साहब ढलक गये और जोरू हाथ से जा रही है और तुझे कर्नली और जर्नली सूझ रही है। देखें तो सही, हमें कौन रोकता है?"

कर्नल साहब कुछ नहीं समझे कि मैं क्यों ऐसा पागल हो गया हूँ और कोर्ट मार्शल, क्वार्टर-गार्ड की धमकियाँ देने लगे। इतने में मिसेज मिलर आई और मुझे अलग ले गई। समझा-बुझाकर कहा कि मेरे लिये भागकर जाना असम्भव है क्योंकि कर्नल साहब वारंट भेज कर मुझे बुलवालेंगे। बात मेरी समझ में भी आगई और मैंने क्षमा माँग ली और जाने का विचार छोड़ दिया। बात यह है कि दूसरे ही दिन मैं जो सैर के बहाने बंगले से निकला तो सीधा करांची जाकर ही दम लिया। बम्बई का सीधा रास्ता वारंट के डर के मारे छोड़ दिया और करांची की राह ली। लंकरान पहुँच कर जितनी भी खामोशी और गुप्तता का व्यवहार कर सकता था मैंने किया। मैं चुपके से महल में पहुँचा। मालूम हुआ कि शाहजादी साहिबा अपने सारे स्टाफ के साथ गुम हो चुकी हैं। वह शाही महल में बापके में गम मरी जारही थीं। मैंने एक नौकरानी को भेजा कि उनको मेरे आने का चुपके से पता दे दिया जाये। उसने यह सूचना दी और परिणाम यह निकला कि अपनी सारी सेविकाओं को छोड़ कर वह हवा हुई और मेरे हाथों में आकर दम लिया।

शाहजादी साहिबा के आने की सूचना जो इनके भाई को मिली तो मेरे आने का भी इनको पता चल गया। परिणाम यह कि मुझे टेलीफोन पर बुलवाया, मैं टेलीफोन पर गया। आवश्यक सलाम और बधाई के पश्चात् मैं उनसे बोला, उत्तर में वे लंकरानी जलाल के साथ मुझसे गरज कर बोले—

"तुम आगये ?"

"जी हां"

"मेरे मना करने के बावजूद भी ?"

"मैं इस कारण चला आया कि अगर न आता तो सदा के लिये मुंह काला हो जाता और दुनियां भी कहती कि स्वार्थी था जो ऐसे भी समय पर नहीं आया।"

यह सुन कर वे चुप होगये। मुझे बुलवाया गया। मैंने सलाम बजाई और वह मुझ पर दहाड़ कर बरसे। मैंने सुबह तक के लिये क्षमा माँगी।

दूसरे दिन सुबह को शोक के वस्त्र पहन कर मैं आली की सेवा में पहुँचा। कुछ अजीब ही शान थी, चार दिन में ही शोक की सादगी के स्थान पर लंकरान में शाही दबदबा और शान आ चुकी थी। आवश्यक आदर देकर मैं बैठाया गया। पास ही वे साहब भी बैठे हुये थे जिनके साथ शाहजादी साहिबा की एक बार सगाई हो चुकी थी। एक सूखा-सा छोकरा था। ऐसा कि एक घूँसा मारता तो खुदा की दादी याद आ जाती। कुछ देर मौन रहने के पश्चात् नवाब वली अहद साहब की नजर मेरी ओर आकृष्ट हुई और उन्होंने इस तरह कहा—

"तुम पूना कब जाओगे ?"

मैंने मक्कारी से प्रार्थना की कि अभी कष्ट के कारण मेरे होश ठिकाने नहीं। गम का पहाड़ मेरे ऊपर टूट पड़ा है। मेरे होश ठीक नहीं हो रहे और अगर मेरा यही हाल रहा तो मुझसे ऐसा कभी न सकेगा।

नवाब साहब ने मेरी ओर ध्यान से देखा। सम्भवतः वे मेरी मक्कारी को ताड़ गये थे; परन्तु भला वह कह क्या सकते थे ? इस

कारण चुप हो गये। मैंने आज्ञा चाही तो बड़ी नरमी के साथ मुझसे जल्दी वापिस चले जाने की प्रार्थना की। मैंने कुछ न कहा और चला आया।

लौट कर शाहजादी साहिबा को सब सुनाया। शाहजादी साहिबा ने अपनी जान और प्रेम की कसम खिला कर मुझसे यह कहलवाया कि मैं पूना कतई न जाऊँगा।

शाजज़ादी साहिबा का लौटना

अपनी कहानी को छोड़कर दो शब्द अपनी बड़ी साली के बारे में कहना चाहता हूँ। इतनी तबाही और बर-बादी के पश्चात् भी पाठकों को पता ही है कि वे कलकत्ते में रहती थीं। किसी को उनका पता न था कि वे जिन्दा हैं या मर चुकीं। परन्तु पिता की मृत्यु और भाई के सिंहासनारूढ़ होने की खबर उनके कानों तक पहुँच गई। उनसे न रहा गया और एक बधाई का तार वलीअहद बहादुर को भेज दिया। भाई के प्यार ने एकदम जोश मारा रज्जनखां को यह काम सौंपा गया कि वह जाकर इनको बच्चों सहित ले आये। यह कहना मैं भूल गया कि नये प्रबन्ध के लिये रज्जनखां हमारे यहाँ से बुलाई गई।

शाजजादी साहिबा किसी भी प्रकार से आने को तैयार न थीं। उन्होंने बहुत मना किया परन्तु भाई के प्रेम के आग्रह के सामने बहिन की कुछ न चली और जब भाई ने धमकी दी कि मैं खुद लेने आता हूँ तो बहिन को आना ही पड़ा।

कष्टों से पीड़ित और दुखियारी बहिन के आगमन और स्वागत का दृश्य बहुत ही वेदनाजनक था। बहिन की हिम्मत न पड़ती कि भाई का सामना करे। फिर भी

वह अपने पिता के महल में दाखिल होकर खुशी की भावनाओं से बेकाबू हो गई और बेहोश होकर गिर पड़ी।

भाई ने बहिन और भाञ्जों पर प्यार की ऐसी वर्षा की कि बहिन सब गमों को भूलभाल कर भाई की मेहरबानियों पर फूली न समाई। आश्चर्य है कि कफतरा में उन्होंने भाई के राज्य में बहिन की तबाही देखी थी फिर भी वह अपने भाई के राज्य में सुख खोजने को चली आई। उन्होंने यह न सोचा कि देश के एक शासक भाई से एक मजदूर भाई बहुत अच्छा होता है। कहने का मतलब यह है कि साजजादी साहिबा के आने से एक नई कहानी ही शुरू हो गई।

मैं दोपहर का खाना खाकर बैठा ही था कि साजजादी साहिबा की मोटर आकर रुकी। साजजादी साहिबा हाँफती-काँपती मेरे पास आईं और घबरा कर बोली कि गजब होगया।

मैंने परेशान होकर पूछा तो उन्होंने संकेत में सारी बात बताई कि जहाँ नवाब साहब ने उनका इतना स्वागत और आवभगत की, वहाँ एक हिमाकत भी की कि उनको सलाह दी कि वे दूसरा निकाह कर लें।

बहिन को यह बात ठीक न लगी और उन्होंने इन्कार कर दिया। इन्कार पर नवाब साहिब ने और जोर दिया—तू-तू मैं-मैं हुई और बात यहाँ तक पहुँच गई कि बहिन जूती लेकर भाई के ऊपर सवार होगई और हजार-हजार बातें सुना डालीं। परिणाम यह हुआ कि सब मेहरबानियाँ जाती रहीं। उन्हें दिन ही दिन में निकाल दिया गया और वह अपने बच्चों को लेकर बम्बई पहुँचीं और अब भी अलग वहीं रहती हैं।

इससे दूसरे दिन का वर्णन है कि मुझे फिर बुलवाया गया और पूछा गया कि मैं पूना कब जाऊँगा। मैंने साफ-साफ अर्ज की कि अब मेरा विचार पूना जाने का बिल्कुल नहीं क्योंकि मैं फौज से

बहुत दूर रहना चाहता हूँ। यह सुनकर नवाब साहब मुझ पर नाराज हुए, परन्तु चुप रहे। फिर नरमी से समझाने लगे। चुप-चाप गर्दन झुकाए मैं खड़ा रहा और कुछ न बोला। जब अच्छी तरह समझा चुके तो कहा—"कल पूना चले जाओ।" मैंने कुछ भी जवाब नहीं दिया और लौट कर सब बातें शाहजादी साहिबा को बतलाईं।

इसी दिन का वर्णन है कि मेरे दोस्त कुमरुद्दीन मुझसे मिलने आए और आकर मुझे नगर की सबसे नई गप्प सुनाई कि वहाँ यह प्रसिद्ध हो रहा है कि शाहजादी साहिबा को मुझसे छुड़वा कर इस लड़के के साथ निकाह कर दिया जावे। इस प्रस्ताव पर कभी का अमल होगया होता यदि बड़ी शाहजादी साजजादी साहिबा इस प्रस्ताव पर भाई से लड़कर बम्बई न चली गई होतीं।

मैंने शाहजादी साहिबा से बातें कीं तो उनको सोलहो आने यकीन होगया कि यह प्रस्ताव अवश्य ही किया गया होगा। उन्होंने तो यहाँ तक कह दिया कि हम लोगों को भागकर बम्बई चले चलना चाहिए। और यदि ऐसा सम्भव होता कि लंकरान और बम्बई के मध्य समुद्र न होता तो हम दोनों उसी दिन भाग गए होते।

दूसरा दिन आया और बीत भी गया परन्तु मैं पूना नहीं गया। तीसरे दिन की बात है कि मैं शाहजादी साहिबा के साथ खाना खा रहा था कि टेलीफून की घंटी बजी। शाहजादी साहिबा ने टेलीफून का चोगा उठाया और कान को लगाया। मैं भी निकट पहुँचा। टेलीफून पर स्वयं आली बोल रहे थे। वे मुझे बुलाते थे। मैंने चोगा शाहजादी साहिबा के हाथ से लिया और कहा "मैं हाजिर हूँ।"

आली हजरत ने अत्यन्त कठोर शब्दों में कहा, "तुम अभी तक पूना नहीं गए?"

मैंने दबी जुबान से कहा, "नहीं।"

गर्ज कर नवाब साहब ने पूछा, "क्यों नहीं गए ? मैंने हुकम दिया था फिर भी नहीं गए ?"

मैंने कहा "मैं पहले ही बतला चुका हूँ कि मैं नहीं जाना चाहता।"

डाँट कर उन्होंने कहा, "ऐं, नहीं जाना चाहते ?"

मैंने कहा, "जी हाँ।"

आग बबूला होकर काँपती आवाज में कहा, "तेरी हस्ती है जो न जावे, गुस्ताख ! नाजू को अभी यहाँ भेजो और अगर कुशल चाहते हो तो अभी तुम पूना को प्रस्थान करो और यदि आज्ञा का पालन न हुआ तो याद रखो सख्त सजा दूँगा।"

मैंने इस झगड़े से बचने के विचार से साफ-साफ कह दिया, मैं पूना नहीं जाना चाहता। मेरा यह कहना था कि उनके तन-बदन में आग लग गई। वे इस प्रकार के अपशब्दों पर उतर आए कि स्वयं शहजादी साहिबा को भी गुस्सा आ गया। उन्होंने टेलीफून का चोगा हाथ में उठाया और कह दिया, "तुम्हारे यहाँ नहीं आती।" मुझे भी गुस्सा आ रहा था और मैंने जल्दी ही शाहजादी साहिबा से चोगा छीन कर कहा, "मुझसे अपशब्द मत कहो और गालियाँ मत दो वरना मुझसे बुरा कोई नहीं होगा।"

मेरा यह कहना था कि नवाब साहब ने कहा, "जानते हो मैं कौन हूँ ?"

अब मैं भी जल गया। मैंने कहा, "हाँ जानता हूँ, मेरे साले हो।" इसका उत्तर मुझे क्या मिला, मैं नहीं कह सकता। बस यह पता चला कि नवाब साहब मारे गुस्से के खूब दहाड़े। मैंने घबरा-कर टेलीफून का चोगा रख दिया। शाहजादी साहिबा ने कहा, "बकने दो।" मैंने भी यही सोचा और गुस्से में आकर बाहिर वाले कमरे में आराम कुर्सी पर लेट गया। एक सिगरेट सुलगा कर बड़ी बेपरवाही के साथ धुआँ छोड़ने लगा।

अब आगे की बात सुनिए। बाहर तो मैं लेटा सिगरेट पी रहा था। अन्दर शाहजादी साहिबा भाई से टेलीफून पर लड़ाई-सी लड़ रही थीं। मेरे पास कुछ समय पश्चात् दौड़ी हुई आई और कहने लगी कि भाई साहब ने मेरी और तुम्हारी गिरफ्तारी का हुक्म दे दिया।

मैंने कहा, "कौन पकड़ने आएगा?"

यह कहकर मैं उठा। आलमारी में से मैंने नया रिवाल्वर निकाला, और उसे मेज पर रखकर शाहजादी साहिबा की ओर देखा, फिर कहा—

"मेरा और तुम्हारा गिरफ्तार होना मजाक नहीं। मैं नहीं जानता, कोई भी हो, मैं नहीं छोड़ूँगा। इतना कहकर मैंने शाहजादी के परेशान परन्तु चमकते हुए चेहरे को देखा। अपने को इस कार्य पर मुस्तैद दिखाने का प्रयत्न करते हुए कहा, "कोई मजाक थोड़े ही है! अगर थोड़ी-सी भी नरमी दिखलाई तो तुम्हारे भैया मुझसे तुम्हें छुड़ा लेंगे। इस कारण मैंने निश्चय कर लिया है कि कोई भी मुझे या तुम्हें पकड़ने आया तो मैं उसे जीता नहीं छोड़ूँगा।"

मैंने इतना ही कहा था कि शाहजादी साहिबा की

आँखों में आँसू भर आए। मैं कुछ कहने ही वाला था कि एक दासी बाहर से अन्दर आई। वह घबराई हुई थी। अन्दर आते ही उसने कहा. "कर्नल फजाअली साहब, मझले साहब और छोटे साहब मोटर से उतर कर इधर आ रहे हैं।"

यह मझले साहब और छोटे साहब दोनों मेरे साले थे, जो मुझे और शाहजादी साहिबा को गिरफ्तार करने के लिये आ रहे थे। यह खबर सुनते ही मैंने शाहजादी साहिबा को तो अन्दर जाने को कहा ताकि भाइयों का खून होते देखकर वे सहम न जाएँ। शाहजादी साहिबा अन्दर चली गई। मैं हालांकि परेशान था परन्तु मजे से आराम कुर्सी पर लेट गया और फिर सिगरेट पीने लगा कि इतने में चोबदार ने कमरे के दरवाजे पर खट-खट की। मैंने अन्दर बुलाया तो उसने कर्नल साहब का सन्देश मुझे दिया। मैंने कहा, "इनसे कह दो कि यहाँ से निकल जावें।" अभी मैंने यह कहा ही था कि मझले साहब कमरे का दरवाजा खोलकर अन्दर आ गए। उनका घुसना था कि मैंने ललकार कर कहा, "खबरदार! जो आगे बढ़े।" यह कहकर मैंने पिस्तौल उठाया। इतने में दूसरे भाई और कर्नल साहब दूसरे दरवाजे से अन्दर घुस आए। छोटे साहब पर मैंने दो फायर किए। परन्तु कर्नल साहब सीधे मेरे ऊपर झपटे। बढ़ते-बढ़ते मैंने उन पर चार फायर किए। पहला खाली गया और तीन उनके सीने के पास लगे। आखिरी फायर पर वे लड़खड़ा उठे। मैंने पिस्तौल वाला हाथ नीचा कर लिया—इस विचार से कि अब कर्नल साहब गिरते हैं। मेरा हाथ नीचे करना था कि कर्नल साहब एकदम से झपट कर मेरे ऊपर फांद पड़े। हम दोनों एक-दूसरे से गुथ गए। कर्नल बहुत ही बलशाली व्यक्ति था। परन्तु मैंने उसे उठाकर दूर फेंक दिया। मगर इस मुठभेड़ में मेरे हाथ से पिस्तौल जाता रहा।

अब मैंने देखा कि पिस्तौल कर्नल के हाथ में जा पहुँचा है। तो मैं तेजी से कूदकर अन्दर भागा। अन्दर कुछ और ही दृश्य था।

अन्दर ख्वासें रो रही थीं। अन्दर आकर मैंने सारे दरवाजे बन्द कर लिए। शाहजादी साहिबा ने सलाह दी कि महल के बाहर वाली खिड़की से कूद जाओ। और, फिर इनको भी उतार लेंगे और मोटर में बैठकर जिधर भी हो भाग जावें। मैंने ऐसा ही किया। मेरा खिड़की से कूदना था कि रसाला के सिपाहियों ने न जाने मुझे किधर से आकर घेर लिया। महल के चारों ओर घेरा डाला हुआ था। मैं गिरफ्तार हो गया। मुझे मोटर में बैठाकर, जिसके चारों ओर एक पहरा था, आगे-पीछे छोटे और मझले साहब की मोटरें थीं, महल की ओर चले।

उधर शाहजादी साहिबा को भी गिरफ्तार कर लिया गया और एक जनानी मोटर में बैठाकर ले जाया गया। मेरे हाथ मेरे ही रूमाल से बाँध दिए गए। हथकड़ियाँ पास ही पड़ी थीं। जानता था, अगर थोड़ी-सी भी हरकत की तो हथकड़ियाँ-बेड़ियाँ पहनादी जावेंगी। इस कारण मैं चुपके से बैठा रहा। मोटर शाही महल में पहुँच गई।

सिपाही मुझे नवाब साहब के पास ले गए।

कोर्ट-मार्शल

मैं नवाब साहब के सामने उपस्थित किया गया। कर्नल फजाअली साहब के सीने के घाव देखे जा रहे थे। खुदा की जान कि गोलियाँ कोट तक ही न रह गईं, परन्तु बास्कट फाड़कर काफी अन्दर घुस गई थीं जो हाथों से निकाल ली गईं। मुस्कराकर कर्नल साहब नवाब साहब से कह रहे थे, "हुजूर की मेहरबानी से विद्रोहियों की गोलियाँ आपके सेवकों के ऊपर असर नहीं करतीं।"

कर्नल साहब ने यह कहा था कि नवाब साहब मेरे ऊपर झपट पड़े। इधर उन्होंने बकना आरम्भ किया और उधर एक हाथ लम्बी जुबान खोल ली। बात इतनी बढ़ी कि गुस्से में आकर नवाब साहब ने हुक्म दिया कि मुझे खैमे से बाँध दिया जावे। फिर अपना शिकार का राइफल मँगवाया। वे मुझे सचमुच गोली से उड़ा देने की तैयारी कर रहे थे। मैं नहीं कह सकता कि कहाँ तक मुझे डाँट रहे थे। कुछ भी हो सिपाहियों ने मुझे ले जाकर खैमे से बाँध दिया। नवाब साहब राइफल में बारह कारतूस भर कर बरामदे में उतर आए। मेरी ओर बढ़ते ही थे कि क्या देखता हूँ कि महामन्त्री काँपते हुए दौड़े और घबराकर, हाँफते हुए उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—

"ऐ, मेरे शहनशाह ! यह क्या गजब करते हो...खुदा के लिए गुस्से को रोकिए।"

यह कहकर उन्होंने राइफल की नोंक पकड़ ली।

नवाब साहब ने झुंझलाकर राइफल छुड़ाते हुए कहा—"तुम राइफल को छोड़ दो, मैं इस मूजी को जिन्दा नहीं छोड़ूँगा। अभी मार डालूँगा।"

महामन्त्री ने परेशान होकर कहा, "हुजूर ! जल्दी मत कीजिए, सब्र से काम लीजिए, रहम कीजिए, किसको मार रहे हैं आप ?"

"विद्रोही को" नवाब साहब ने कहा।

"बहनोई को...बहनोई को मार रहे हैं ?"

"क्या फिजूल बकते हो" नवाब साहब ने बिगड़ कर कहा, "यह विद्रोही है, मूजी है, देशद्रोही है, मैं इसे जिन्दा नहीं छोड़ूँगा।" यह कहते हुए नवाब साहब ने राइफल का घोड़ा चढ़ा लिया। महामंत्री ने घबराकर अपना साफा सिर से उतार कर फेंक दिया और मेरे और नवाब साहब के बीच अपना सिर पीट लिया और चीख कर कहा, "गजब हो जाएगा।" आगे महामंत्री ने कहा, "जी हाँ, मेरा मुँह काला हो जावेगा और यहाँ रेजीडेंसी हो जावेगी। आप बच्चे हैं, निर्दोष को मारना बचपन नहीं तो और क्या है ?"

चौंककर नवाब साहब बोले, "निर्दोष ! तो यह निर्दोष है ?"

महामंत्री ने कहा, "निर्दोष बिल्कुल नहीं...मार डालने योग्य है। परन्तु इस प्रकार से आप कत्ल करेंगे तो विलायत तक कहने को होगा कि अभी आप बच्चे हैं, शासन नहीं कर सकते...और कम-से-कम इस साल के लिए आपको विलायत भेज दिया जावेगा और रियासत रेजीडेंट को सौंप दी जावेगी।"

नवाब साहब जरा चकराए और कहने लगे, "चाहे हुकूमत रहे, चाहे न रहे, भले ही रेजीडेंसी हो जावे, मगर मैं इस मूजी को जिन्दा नहीं छोड़ूँगा।"

महामंत्री ने कहा, "मैं कब कहता हूँ कि इस बागी को छोड़ा जावे। पर मैं तो कहता हूँ, वह तरकीब कीजिए कि सांप भी मर जावे और लाठी भी न टूटे।"

नवाब साहब ने कहा, "वह क्या ?"

महामंत्री ने कहा, "काम नियम से करना चाहिए। अपराधी को विद्रोह के दोष में गिरफ्तार किया जावे और उसे कोर्ट-मार्शल को सौंप दिया जावे और कोर्ट-मार्शल के द्वारा उसे कत्ल करवा दिया जावे। वरना अच्छी प्रकार समझ लीजिए कि मेरा मुँह काला हो जावेगा और आपका शासन अलग छिन जावेगा। इसलिए अच्छा यही है कि विद्रोही को कोर्ट-मार्शल को सौंप दिया जावे।"

नवाब साहब ने महामंत्री के प्रस्ताव को मान किया। मुझे हवालात की आज्ञा दी गई। कोर्ट मार्शल के अधिकारियों की नियुक्ति का हुक्म दे दिया गया।

कोर्ट-मार्शल तीन व्यक्तियों का बनाया गया—एक अब्दुल तवीबखाँ, दूसरे कर्नल साहब और तीसरे कोई और साहब थे। मजेदार बात यह है कि नवाब साहब ने इन तीनों को बुलवाया और कहा कि जल्दी-से-जल्दी फैसला किया जावे और इसे मौत की सजा दी जावे।

परन्तु मुझे मौत की सजा देना कोई मामूली बात तो थी नहीं। इस कारण इन तीनों ने नवाब साहब से वायदा तो कर लिया पर महामंत्री की सलाह भी ली। उन्होंने सलाह दी कि ये निर्दोष हैं—इनको मौत की सजा नहीं दी जानी चाहिए। इसके स्थान पर चौदह वर्ष की कैद की सजा दे देनी चाहिए क्योंकि बिना कारण के मौत की सजा देना एक मुसीबत को बुलाना था।

प में सुनिए, कि कोर्ट-मार्शल का कार्य शुरू हुआ...मेरे ऊपर देश-द्रोह और विद्रोह के अपराध लगाए गए। दो आदमी—कर्नल साहब और मझले साहब को कत्ल करने का अपराध भी लगाया गया। मैंने इन सब अपराधों से इंकार कर दिया। गवाहियाँ हुईं—मुझे चौदह वर्ष की सजा दी गई और मैं जेल भेज दिया गया।

मैं तो जेल चला गया मगर जिन लोगों ने मुझे जेल

भेजा था, उनको अब शामत आगई। नवाब साहब ने उनको बुलाकर पूछा कि आखिर उनके हुक्म के होते हुए भी मौत की सजा क्यों नहीं दी गई। क्या जवाब देते, सब मजबूर थे। कुछ जवाब न बन पड़ा। परिणाम यह हुआ कि कर्नल साहब और अब्दुल तवीबखाँ दोनों अपमानित किए गए और नौकरी से अलग कर दिए गए। अब्दुल तवीबखाँ ने तो लंकरान छोड़कर जान बचाई, पर कर्नल आज भी जेल में सड़ रहा है। जेल में तो मैं भी था परन्तु वहाँ मुझे कोई कष्ट नहीं था। साधारण जेल से अलग मुझे शाही जेल में रखा गया था। और चार-छः दिन बाद शाहजादी साहिबा भी मुझसे मिलने आ जाती थीं। मेरे छुड़ाए जाने के प्रयत्न होने लगे। उन्होंने शाही महल में धूमधाम मचा रखी थी। एक प्रकार से वे भी कैद ही थीं क्योंकि महल के एक भाग में अलग रहना पड़ता था। वह वहाँ मजबूत होकर आमरण व्रत रखकर महात्मा गाँधी की तरकीबों से भाई को भुका रही थीं।

रिहाई

कई महीने इसी प्रकार जेल में बीत गए। इसी बीच मेरी रिहाई के लिए सारे रिश्तेदारों ने प्रयत्न किया। नवाब ने जोर लगाया। महल में शाहजादी साहिबा ने भी खूब प्रयत्न किया। मगर कोई ढंग नहीं निकला। समय इस प्रकार से बीतता गया और नवाब बहादुर की ताज-पोशी का दिन भी आ गया।

दूर-दूर के रियासत वालों को और बड़े-बड़े अफसरों को निमन्त्रण भेजा गया। जेल में ही मुझे पता चला कि लंकरान का शहर आज दुलहिन बनने जा रहा है। सारे शहर की सड़कें नाना प्रकार से सजाई गईं। बच्चा-बच्चा अपने बादशाह की ताजपोशी की खुशी मना रहा था। महल की सजावट और खुशी का क्या कहना था—सारा महल खुशी की चहल-पहल में लगा हुआ था। बाँदियाँ सारे महल में कीमती कपड़े पहने फिर रही थीं। पर मेरी शाहजादी ने अपने भाई को तंग करने के लिए शोक का काला लिबास पहना।

तोपों की गर्ज से सारा लंकरान दहल चुका था। मुझे मालूम हुआ कि शाही सवारी दरबार में ताजपोशी के उत्सव के लिए प्रस्थान करेगी। बड़ी शान का दरबार था।

बड़े शाहाना ठाट-बाट के साथ सरकार अपना जलवा दिखला रहे थे। बहुत-सी छोटी-छोटी रसमें की जा चुकी थीं। ताज पहनाने का समय आया। ताज पहनाने वाला खानदान का सबसे बड़ा आदमी होता है। जब वह समय आया तो लंकरान के एक बूढ़े ने—काँपते हुए हाथों से ताज को अपने हाथ में लिया। बड़ी इज्जत के साथ दुआएँ देता हुआ प्लेटफार्म पर चढ़ा। सारे दरबार का हाल 'बधाई', 'बधाई' के स्वर से गूँज उठा। उस देव तुल्य-व्यक्ति ने ताज आगे बढ़ाया। वह लंकरान की रौनक के ऊपर ताज पहनाने ही वाले थे कि एक क्षण के लिए रुक गए। बड़े-बड़े आशीर्वाद देने लगे। एक बहुत ऊँची आवाज में सारे लंकरान वालों तथा नवाब साहब को सम्बोधित करके कहने लगे। एकदम से निस्तब्धता छा गई। इस देव-तुल्य व्यक्ति की आवाज काँपते हुए होठों से, जोर और असर के साथ इस प्रकार गूँजी—

"जहाँपनाह सलामत ! यह एक खुशी का अवसर है। खुदा ने जो आज खुशी का समय दिखाया है उसका उदाहरण नहीं मिल सकता। प्रजा से लेकर बादशाह तक का बच्चा-बच्चा प्रसन्न है। क्यों न हो, आज लंकरान के बादशाह की ताजपोशी का अवसर है। यह शाही ताज आपके मस्तिष्क पर रख कर मैं इस खुशी को बढ़ाने वाला हूँ। परन्तु साथ-साथ इस खुशी के अवसर पर अपने आका, शहनशाहों के शहनशाह से एक भीख माँगता हूँ—ऐ, मेरे शहनशाह आली ! यह खुशी का अवसर है। मैं आप का सेवक हूँ यद्यपि रिश्ते में दादा के समान हूँ। मैं अपनी आँखों के तारे से भीख माँगता हूँ। दरबारियो ! अपने बादशाह से इस बुड्ढे की सिफारिश करो। मैं एक भीख माँगता हूँ, सिफारश करो कि इस खुशी के अवसर पर जो भीख माँगू वह मुझे मिल जावे।"

दरबारियों ने एक जुबान होकर सिफारिश की और नवाब साहब ने उस देव-तुल्य व्यक्ति से कहा, "माँगो, क्या माँगते हो ?"

बुजुर्ग ने कहा, "जुबान बँधाई से पहिले यह कह दीजिए कि जो माँगूगा, मिलेगा। मैं कोई बड़ी चीज नहीं मांगता। अपने लेने की और बादशाहों के देने की चीज माँगता हूँ। कोई रुपए की वस्तु नहीं, कोई हजार की वस्तु नहीं। बहुत छोटी-सी चीज है, अगर कोई बड़ी चीज हो तब भी इस खुशी के अवसर पर आपका इन्कार नही होगा। इस कारण मुझे वचन दिया जावे।"

एकदम से चारों ओर के दरबारियों ने सिफारिश की। नवाब साहब को कहना पड़ा—"अगर देने की कोई भी वस्तु है तो मैंने दी, माँगिए, क्या माँगते हैं?"

बुजुर्ग ने ताजशाही नवाब आली के मस्तिष्क पर रखते हुए तोपों की गर्जन में ऊँची आवाज से कहा—

"नवाब खुर्पा बहादुर को मआफ कर दिया जावे—खुर्पा बहादुर की आजादी माँगता हूँ।"

स्पष्ट है कि ऐसे समय की प्रार्थना को माना जाता। नवाब साहब मना नहीं कर सकते थे। फिर भी उन्होंने एक बार इन्कार कर ही दिया। मगर प्रधान और दूसरे बड़े-बड़े लोगों ने बड़े जोर की सिफारश की और उस बुजुर्ग ने जहाँपनाह के पैर पकड़ने की धमकी दी। मजबूरन नवाब साहब को मुआफ करना पड़ा।

मैं अभी जेल में ही था कि मुझे सूचना मिली कि मैं मुआफ कर दिया गया हूँ। क्षण भर में ही सारी खबर महल में उड़ गई। मैं जल्दी-जल्दी में जहाँपनाह की सेवा में उपस्थित हुआ और मुआफी माँगने की तैयारी करने लगा।

उधर शाहजादी साहिबा ने भी अपने महल में शृङ्गार किया और जशन में सम्मलित होने के लिए गईं। मैं सीधा दरबार में पहुँचा। हाथ बाँधे मुआफी के लिए उपस्थित हुआ। दरबार में मुझे मुआफी दी गई और मेरी भेंट को स्वीकार किया गया।

'जान बची और लाखो पाए, लौट के बुद्धू घर को आए।'

सस्ते ही में जान बच गई। अब मैं अपने महल में शाहजादी साहिबा के साथ रहने लगा। परन्तु इस गड़बड़ में मेरी जागीर जाती रही जो अब तक नहीं मिली। मैं प्रयत्न कर रहा हूँ कि मिल जावे; परन्तु कोई उम्मीद नहीं। शाहजादी साहिबा को जो पर्स मिलता है, फिलहाल उसी में गुजारा चल रहा है।

जिन्दगी तो कट रही है लेकिन एक सबक जरूर सीख लिया है और वह यह कि नीचे लिखा मिसरा गलत नहीं तो उलटा जरूर है—

इश्क आसान न मूद अव्वल,
दिले अफ्ताद मुश्क कलह।

क्योंकि, अब आसानी और आराम है। कोई भी मुश्किल नहीं। न पिटना—न कटना।